धारा...63 ग्रंथांक...271

सर्वोत्तम-गीताञ्जली

(गद्य-पद्यमय)

आचार्य कनकनन्दी

पुण्य स्मरण

सीपुर समता तीर्थ में 2016 के चातुर्मास व दीर्घ प्रवास (प्रायः 11½ महीना) के उपलक्ष्य में

स्वैच्छिक अर्थ सौजन्य (ज्ञानदानी)

1. धर्मदर्शन विज्ञान शोध संस्थान (बड़ौत, उ.प्र.)
2. धर्मदर्शन सेवा संस्थान (उदयपुर, राज.)

ग्रंथांक-271 प्रतियाँ-500
संस्करण-2017 मूल्य-151/- रु.

प्राप्ति स्थान एवं सम्पर्क सूत्र

आचार्य श्री कनकनन्दी जी गुरुदेव द्वारा आशीर्वाद प्राप्त

(1) धर्म-दर्शन सेवा संस्थान
द्वारा-श्री छोटूलाल जी चित्तौड़ा
चन्द्रप्रभ दि. जैन मन्दिर, आयड़, आयड़ बस स्टॉप के पास,
उदयपुर (राज.)-313001/मो. 097832-16418

(2) डॉ. नारायणलाल कछारा
सचिव-धर्म-दर्शन सेवा संस्थान
55, रवीन्द्रनगर, उदयपुर (राज.)-313001
फोन नं. 0294-2491422/मो. 092144-60622
E-mail:nlkachhara@yahoo.com

आत्मोद्धारक गुरु कनकनन्दी जी को पाकर आध्यात्मनंदी हुआ धन्य

-मुनि आध्यात्मनंदी

आये हो मम जीवन में, उपकारी गुरु बनके।
आध्यात्मनंदी (हुआ) धन्य, 'कनक' (गुरु) की शरण पाके।।

अनादि काल से (मैं) भटका, इस विकट भव वन में।
प्रभु शीघ्र मुझे तारो, इस अथाह भवोदधि से।।

अल्पज्ञ हूँ मैं गुरुवर, न जानूँ आगम विद्या।
अक्षर शब्द मात्रा, पद (संज्ञा) सर्वनाम विशेषण।।

आती न हिन्दी मुझको, तथा न ही वागड़ी (बोली)।
त्राता हो आप मेरे, करो उद्धार जान बालक।।

जानूँ न मैं पूजा वंदन, विनय वैयावृत्त सेवा।
राग-द्वेष-मोह अनन्त, अतः न भाव पावन।।

आत्मविश्वास हो मुझमें, बोधि चर्या में (हो) वृद्धि।
आप सद् गुरु (की) कृपा से, मुझमें होगी सुबुद्धि।।

गुरुवर जीवन है थोड़ा, पथ शेष अभी अनंत।
विपरीत गति थी अब तक की, उसको सुपथ में बदलकर।।

जैसे भी हो अति शीघ्र, उपकार (हो) मम पथिक का।
आलोचना प्रायश्चित्त (विनती), आध्यात्मनंदी मुनि के।।

उद्धारो प्रायश्चित्त देकर, स्वीकारो 'कनक' ऋषि जी।
आध्यात्मनंदी हुआ धन्य, कनक की शरण पाके।।

सीपुर, दिनांक 04.02.2017, प्रातः 6.10
(यह कविता आलोचना प्रायश्चित्त प्रतिक्रमण हेतु बनी।)

अद्वितीय संत आचार्यश्री कनकनन्दी गुरुवर

-श्रमण मुनि सुविज्ञसागर

(चाल : पत्थर के सनम.....)

कनक गुरुवर तुम्हें मैंने...अद्वितीय श्रमण/(संत) माना/(जाना)...
अनुपम हुई अनुभूति...मैं भी अद्वितीय हूँ जाना...कनक...(ध्रुव)...

अद्वितीय होते हर द्रव्य/(जीव)...हर गुण भी विशेष...पृथक्-पृथक्...
सामान्य में होते समान...विशेष में पृथक्-पृथक्...
परम स्वतंत्र व मौलिक...कनक गुरुवर...(1)...

अलौकिक फक्कड़ निस्पृह...वृत्ति से संत विशेष...समता योगी...
अनौपचारिक है प्रवृत्ति...दिखावा आडम्बर रिक्त...
अपेक्षा-उपेक्षा-प्रतीक्षा रिक्त...कनक गुरुवर...(2)...

एकांत शांत स्थान में...चिन्तन-मनन करते हो...प्रज्ञाशाली हो...
ज्ञान ध्यान तपोरक्त रह...श्रमण धर्म पालते हो...
ख्याति लाभ पूजा प्रसिद्धि परे...कनक गुरुवर...(3)...

आई.क्यू. ई.क्यू. एस.क्यू. में...आपका न कोई सानी है...वैश्विक गुरु...
आपके अनुगामी बनकर...'सुविज्ञ' जन प्रगतिशील...
विश्व धरा में अद्वितीय...कनक गुरुवर...(4)...

सीपुर, दिनांक 07.02.2017, रात्रि प्रायः 8.15

आचार्यश्री कनकनन्दी के गुण कीर्तन व मेरी आत्मकल्याण की भावना

-क्षु. सुवीक्षमती

(चाल : दे दो गुरु आशीष....., चौपाई....., सायोनारा....., शत-शत वंदन.....)

'कनक' गुरुवर तव गुण गाऊँ, तव सम ही मैं बन जाऊँ।
तेरे आदर्शों पर चलकर, निश्चय रत्नत्रय पाऊँ...(स्थायी)...

उच्च लक्ष्य के धारी गुरुवर, निश्छल पावन उरधारी।
ज्ञानानंद में रत गुरुवर, अमूल्य अनुभव भंडारी।। (1)

अशुभ भावों से दूरी हेतु, शुभ में रहते हैं लीन सदा।
शुद्ध भावों की प्राप्ति हेतु, प्रयत्नरत है सर्वदा।। (2)

समता निस्पृहता के सागर, प्रज्ञा है अचिन्त्य अपार।
भव्य उद्धारक धर्म प्रभाकर, सत्य प्रकाशक ग्रंथकार।। (3)

सत्य स्वरूप का ज्ञान होने से, नहीं है तुममें दीन-हीन भाव।
ईर्ष्या-घृणा व अहंकार का, तुम पर नहीं किञ्चित् प्रभाव।। (4)

मन है तुम्हारा अति ही निर्मल, भावभीनी छवि नयनाभिराम।
आह्लादकारी वाणी तुम्हारी, सर्व दुःखहारी जग हितकार।। (5)

तुमसे ही पाया है मैंने, आत्म-तत्त्व का सुश्रद्धान।
तुमसे ही पाया है मैंने, हित-अहित का सुविज्ञान।। (6)

परिक्रमा वंदना करती हूँ, मेटन हेतु भव-भ्रमण।
'सुवीक्ष' नित तव आशीष चाहे, करने हेतु आत्म-रमण।। (7)

सीपुर, दिनांक 02.02.2017, मध्याह्न 1.15

'कनक' गुरु की संगति में मेरा लक्ष्य एवं भावना

-क्षु. सुवीक्षमती

(चाल : हे गुरुवर शाश्वत.....)

हे 'कनक' गुरु! तव चरणें में, 'सुवीक्ष' करे नित वंदन है।
तव गुण चिन्तन अनुकरण से, खिलता मम जीवन उपवन है।। (ध्रुव)

संसार-शरीर-भोगों से, विरक्त रहूँ मैं अचल अटल।
सत्य प्राप्ति के ही भाव रहे, हे गुरुवर! मुझमें अति प्रबल।। (1)

महापुरुषों के सद्गुण गाऊँ, उनकी सेवा में नित चाहूँ।
शुभ भावों का अवलंबन ले, शिवपथ पर अविरल आगे बढ़ूँ।। (2)

संपूर्ण विश्व में शांति हो, प्रत्येक जीव में मैत्री हो।
असहाय दुःखी जीवों के प्रति, करुणा से भरा मम अंतर हो।। (3)

दोषी पापी को भी लखकर, मेरा अन्तस न विकृत हो।
उनसे शिक्षा ग्रहण करके, मम जीवन सद्गुण सज्जित हो।। (4)

आशाओं का न दीप बुझे, चाहे आ जाये कोई विपदा।
समता का साथ नहीं छूटे, राग-द्वेष-मोह न भरमाये।। (5)

अनादि-अनंत भव बीत गये, कुगतियों में भ्रमते-भ्रमते।
अब ऐसी निश्रा मिल जाये, ना आने पड़े जग में फिर से।। (6)

पर द्रव्य नहीं भाये एक पल, आतम कहता है अकेले चल।
चारों गतियों से विदाई ले, पञ्चम सुगति मुक्ति को वर।। (7)

निज शुद्ध स्वरूप की प्राप्ति ही, एक परम लक्ष्य मेरा है।
जब तक न मिले मुझको श्रेय, सुकृत में रहे मेरा स्नेह।। (8)

सीपुर, दिनांक 01.02.2017, मध्याह्न 1.40

मेरी आत्म-आलोचना आत्मविशुद्धि हेतु

-क्षु. सुवीक्षमती

(चाल : चाँद सी महबूबा....., सायोनारा....., जिंदगी एक सफर....., क्या मिलिये.....)

समता में 'मैं' क्यों न रह पाती, चिन्तन ये 'मैं' करती हूँ।
गुरु कृपा से जो मैंने समझा, किञ्चित् कथन यहाँ करती हूँ...(स्थायी)...

अज्ञान मोह व स्पृहा ने, अनादि काल से वश में किया।
प्रमाद व कषायों ने, सत्य-तथ्य से विमुख किया।
सत्य परिज्ञान न होने से, विषमता देती दुःख घने...समता...(1)

आगम का सम्यक् बोध नहीं, हित-अहित की सुधि नहीं।
तन-मन-अक्ष संयत नहीं, आध्यात्मिकता जीवन में नहीं।
घाती कर्म ने छीन लिया मेरा, विवेक ज्ञान व सर्वस्व...समता...(2)

वर्तमान में पुरुषार्थ की कमी, आत्मविश्वास भी है न्यून।
स्वयं की इयत्ता का भान नहीं, पर प्रपञ्च में रत है मन।
उक्त कारणों से न बन पाई, समता मेरी सहचरी...समता...(3)

धन्य भाग्य मेरा उदित हुआ, 'कनक' गुरु का सान्निध्य मिला।
गुरुवर की निश्रा में रहकर, सुवीक्ष का स्वाभिमान जगा।
गुरु गुण अनुकरण करके, साम्यभावी 'मैं' बन जाऊँ...समता...(4)

सीपुर, दिनांक 20.01.2017, रात्रि 9.30

'कनक' गुरु अनुपम गुणों की खान

-क्षु. सुवीक्षमती

(चाल : नीले-नीले अम्बर.....)

'कनक' गुरुवर की...महिमा 'मैं' गाऊँ।
गुरु देशना को...अनुभव में लाऊँ।
गुरु की अमृत वाणी...अति ही हितकारी...आत्म-जिज्ञासु को भाये...(ध्रुव)...

सत्य-साम्य-सुख के...पुजारी हैं गुरुवरजी।
ख्याति-पूजा-लाभ के...त्यागी हैं गुरुवरजी।
शोध-बोध करते हैं...आत्मा में रमते हैं।
आत्म-चर्चा करते...ग्रंथ भी रचते हैं...गुरु की...(1)...

अपेक्षा-उपेक्षा-प्रतीक्षा न करे।
स्वयं का मूल्यांकन स्वयं ही करे।
आत्म-अनुशासी हैं...दृढ़ वैरागी हैं।
देह में रहकर भी...देह से न्यारे हैं...गुरु की...(2)...

अयाचक है वृत्ति...प्रज्ञा है तीक्ष्ण-धार।
निस्पृहता के धारक...समता के हैं भंडार।
धीर-वीर-गंभीर...अनुपम गुण धारे।
सुवीक्ष गुरु भक्ति से...गुरु गुण शीघ्र वरे...गुरु की...(3)...

सीपुर, दिनांक 30.01.2017, मध्याह्न 2.45

('वसन्त-पंचमी' के उपलक्ष्य में)

गुरुवर श्री कनकनन्दी जी चरणी माझी 'अभिलाषा'

-ब्र. अजय संघस्थ श्री गुरुदेव

(चाल : जीवनात ही घड़ी.....)

जीवनात ही घड़ी अशीच राह् देऽऽऽ...2
गुरु ! प्रीतिच्या फुलॉवरी वसन्त वाहू दे/(नाचू दे)ऽऽऽ
जीवनात ही घड़ी...(ध्रुव)

गुरुवर! तुम्हा बघण्यांचा छन्द वेगळाऽऽऽ
बघून तुम्हा मज होते, सौख्य अपूर्वाऽऽऽ
मम हृदयी तुमचाच वास, नित्य होऊ देऽऽऽ
जीवनात ही घड़ी अशीच...(1)

उत्कृष्ट तुझे कृतित्व, सकल/(अवघ्या) जगा वेगळेऽऽऽ
जाणूनी मज होते, कौतुक सारखेऽऽऽ
आदर्श तुम्हीच जगांचे अशे सौभाग्य पाऊ दे/(होऊ दे)ऽऽऽ
जीवनात ही घड़ी अशीच...(2)

रत्नत्रयांची महिमा अशी, तुझ्याच सारखीऽऽऽ
मी भावो कधी मिळवी, निग्रन्थ ही छविऽऽऽ
तुझी कृपा 'अजय' वर गुरु! त्वरित होऊ देऽऽऽ
जीवनात ही घड़ी अशीच राहू देऽऽऽ...2
गुरु! प्रीतिच्या फुलाँवरी वसन्त नाचू दे/(वाहू दे)
जीवनात ही घड़ी अशीच...(3)

सीपुर, दिनांक 06.02.2017, सोमवार प्रातः 5.01

आ. भगवान श्री कनकनन्दी जी गुरुदेव की महानता आपश्री के चरण-कमलों का पुजारी

-ब्र. अजय, संघस्थ आचार्य श्रीसंघ

तुम गगन के चंद्रमा हो, मैं धरा की धूल हूँ2
तुम जहाँ के देवता हो2, मैं समर्पित फूल हूँ
तुम हो पूज्य मैं पुजारी, तुम सुधा मैं प्यास हूँ...(ध्रुव)

तुम महासागर की सीमा, मैं किनारे की लहर
तुम महासंगीत के स्वर, मैं अधूरी तान भर
तुम हो काया मैं हूँ छाया, तुम क्षमा मैं भूल हूँ...तुम गगन...(1)

तुम उषा की लालिमा हो, भोर का सिंदूर हो
मेरे प्राणों की हो गुंजन, मेरे मन के मयूर हो

तुम हो पूज्य मैं पुजारी, तुम सुधा मैं प्यास हूँ...तुम गगन...(2)

तुम महातपोधन हो स्वामी, चाहूँ चरण-रज की मेहर
सरल समताधारी गुरुवर, विश्व के अनमोल रतन
तुम हो सच्चे सखा जहाँ के, ऐसा न कोई जहाँ में गुरु...तुम गगन...(3)

तुम विश्वव्यापी हो गुरुवर, मैं एकाकी का सफर
तुम हो जग भर से निराले, निस्पृह सहज तेरा सफर
तुम हो पूज्य मैं पुजारी, तुम सुधा मैं प्यास हूँ...तुम गगन...(4)

दिव्यता दिखती गुरु के, मुखड़े पे सर्वदा सदा
दिशा-प्रदाता तुम जहाँ के, विश्व दिखे उत्सुक सदा
तुम कृपा के वारिधी हो, मैं चरण चंचरीक हूँ...तुम गगन...(5)

ऋणी रहेगा युग युगों तक, पाकर आपश्री चरणों का सफर
आप भव्यों के मार्गदर्शक, हैं विलक्षण विभूति प्रभो/(विभो)
आके चरणों में बसे सब, आरजू 'अजय' की यही गुरो...तुम गगन...(6)

आचार्य कनकनन्दी गुरुदेव से हम पा रहे 'मैं' (आत्मा, स्व) का ज्ञान

-बा.ब्र. पल्लवी

कनकनन्दी गुरुवर के चरणों में, पा रहे हम 'मैं' (आत्मा) का ज्ञान।
हर पल स्व (आत्मा) का अनुभव करके, शोध-बोध आगम विज्ञान।।
जय हो ऋषिवर, जय हो यतिवर, जय हो सूरीवर, जय हो गुरुवर...(ध्रुव)

गुरुवर तेरी कठिन तपस्या, हम सबको आदर्श है।
क्षण-क्षण आध्यात्मिक बोध, मेरे मन को भाया है।

सरल-सहज वात्सल्य मूर्ति, सारी वसुधा में अद्वितीय है।
पंचम काल में इस उत्कृष्ट चर्या, हर साधक को मार्गदर्शक है।। जय हो...(1)

निस्पृह संत की आगम धारा, देश-विदेशों में प्रवाहित है।
सत्य, शांति, सौम्य मूर्ति का, आत्म चिंतन दिव्य है।

पल-पल आत्मा का अनुभव, महापुरुषों की शान है।
सरस्वती पुत्र की आगम निष्ठा, हम सबको प्यारी है।। जय हो...(2)

सिद्धांत चक्री, आचार्य रत्न का, संयम जीवन धन्य है।
शुद्ध स्वरूप, आत्म चिंतन, अनुभव ज्ञान भव्य है।

प्रखर वक्ता, रत्नत्रय आराधक की, दिव्य देशना पावन है।
ज्ञानी-विज्ञानी गुरुवर को पाके, मेरा आत्मा (भी) पल्लवित है।। जय हो...(3)

स्वाध्याय तपस्वी, आगम पारगामी, मिले है हम सबका सौभाग्य।
कुंथु गुरु के प्रिय नंदन, सारी वसुधा में अद्भुत है।

परम पूज्य की पूजा करके 'मैं' भी बनूँ परम पूज्य।
'मैं' (स्व, आत्मा) का ज्ञान प्राप्त करके, हो जाऊँ इस भव से पार।। जय हो...(4)

सीपुर, दिनांक 02.02.2017, रात्रि 8.00

'कनकनन्दी' गुरुवर की प्रार्थना

-क्षु. सुवीक्षमती

(चाल : तुम्हें सूरज कहूँ (मुखड़ा)....., ऐ मेरे वतन.....)
हे 'कनक' गुरुवर प्यारे, भव्यों के तारणहारे।
अलौकिक वृत्ति धारे, शरणागत के तुम सहारे...(स्थायी)...

भीयावान इस भववन में, एक तुम हो मम सम्बल।
कृपादृष्टि मुझ पर रखना, हे! करुणासागर सूरिवर।। (1)

मेरा मन विषयों में न जाये, भोगों में नहीं रमाये।
वैराग्य अकम्प 'मैं' पाऊँ, निज आतम में रम जाऊँ।। (2)

शुभ में ही लीन रहूँ 'मैं', अशुभ से सदा बचूँ 'मैं'।
शुद्ध भावों की प्राप्ति हेतु, विभावों को क्षीप्र तजूँ 'मैं'।। (3)

जाने या अनजाने में, यदि दोष कोई मुझसे हो।
दोषों से अवगत करना, कर्मबंध से मुझे बचाना।। (4)

यदि दोष बढ़ता जायेगा, दीर्घ संस्कारों का रूप लेगा।
पुरुषार्थ करने पर भी, शीघ्रता से नहीं दूर होगा।। (5)

'मैं' हूँ नन्हा अज्ञ बालक, हेय-उपादेय नहीं जानूँ।
सत्पथ पर मुझे चलाना, मोहतम से मुझे बचाना।। (6)

मेरा मन है अति ही चंचल, अभिव्यक्ति की भी नहीं क्षमता।
चर्या भी है मेरी शिथिल, दृढ़ता अचल मुझे देना।। (7)

जीवों के सच्चे हितैषी, 'सुवीक्ष' के हित-उपदेशी।
चरणों में सदा ही रखना, नहीं दूर मुझे तुम करना।। (8)

सीपुर, दिनांक 06.02.2017, प्रातः 7.00

'कनक' गुरुवर से प्राप्त हुई मुझे अंतर्दृष्टि

-क्षु. सुवीक्षमती

(चाल : चाँद सी महबूबा....., क्या मिलिये.....)
बाह्य में थी दृष्टि मेरी, अंतर्दृष्टि दी तुमने।
पर द्रव्यों में भटकी थी 'मैं', आत्म-दृष्टि दी तुमने।। (स्थायी)

राग-द्वेष-मोह आदि में ही, लिप्त रहा मेरा जीवन
इसीलिये तो अद्य पर्यंत, संग चला कर्म बंधन-2
कर्म बंधन के भंजन हेतु, समता का घन अस्त्र दिया...बाह्य...(1)

पर गुण-दोषों पर दृष्टि थी, स्व गुण-दोषों से थी अज्ञ
आत्म-विश्लेषण का ज्ञान देकर, आत्म-शोधन में प्रवृत्त किया-2
शरीर-मन व इन्द्रियों का, सम्यक् प्रयोग सिखलाया...बाह्य...(2)

तेरे उपकारों से हे गुरुवर! प्रमुदित हुआ मेरा मन
अनात्म भावों से दूर होकर, आत्म प्रगति में रत है मन-2
अपुनरागमन पथ पर, बढ़ना है मुझको अविरल...बाह्य...(3)

हे 'कनक' गुरु! धन्य हो तुम, मेरा अनंत भ्रमण घटाया
'सुवीक्ष' दृष्टि देकर मुझे, परिनिर्वाण पथ पर बढ़ाया-2
तेरी कृपा पर नित शिर नाऊँ, तव सम ही 'मैं' बन जाऊँ...बाह्य...(4)

सीपुर, दिनांक 07.02.2017, मध्याह्न 1.35

भव्यों को त्रय योगों के सम्यक् प्रयोग हेतु 'कनकनन्दी' गुरुवर का संबोधन

-क्षु. सुवीक्षमती

(चाल : आत्मशक्ति.....)

गुणानुचिन्तन कथन अनुकरण, नवकोटि से करो,
सहज-सरल तुम बनो-2...(ध्रुव)

मन तो है उद्दण्ड चञ्चल, इसके बहाव में मत बहो...आऽऽ,
इसकी गति तो है अधोगामी, संयम से गति ऊर्ध्व करो।
पञ्च प्रभु का ध्यान करो, अपध्यान से बचो...सहज...(1)

परनिन्दा अपमान अनादर, कभी नहीं तुम करो...आऽऽ,
वाणी से सदा सत्य ही कहो, देवागम गुरु गुण गाओ।
कथन के पूर्व विचार करो, हित-मित-प्रिय बोलो...सहज...(2)

नश्वर काया के अवलंबन से, शिवपथ की साधना करो...आऽऽ,
विनय, वैयावृत्ति स्वाध्याय द्वारा, आत्मशक्ति को प्राप्त करो।
शक्ति अनुसार बाह्य तप भी करो, समता से परीषह सहो...सहज...(3)

परोपकार यदि नहीं कर पाओ तो, अपकार भी मत करो...आऽऽ,
आत्मा का हित प्रथम करो, परहित के भी भाव धरो।
सत्य-साम्य-सुख की प्राप्ति, परम लक्ष्य हृदय धरो...सहज...(4)

'कनक' गुरुवर समझाते हैं, शुभ ही शुभ तुम करो...आऽऽ,
सप्त भयों से विमुक्त होकर, सनम्र-सत्यग्राही बनो।
मन-वच-तन को वश में करके, सुवीक्ष आत्मविशुद्धि करो...सहज...(5)

सीपुर, दिनांक 09.02.2017, मध्याह्न 12.45

''गुरु! तेरा ज्ञान सब पा ले तो, अच्छा''

अभिलाषी-ब्र. अजय

(चाल : ये जुल्फ अगर.....)

गुरु! ज्ञान तेरा खुलके, बिखर/(फैल) जाये तो, अच्छा...2

मिल जाये जो ये सबको, लाभ पाले/(संभल जाये) तो, अच्छा...(ध्रुव)

दुनिया की निगाहों में, भला क्या है, बुरा क्या?...2
ये सोच अगर सबको, मिल जाये तो, अच्छा...(1)

धन-दौलत की दीवानी, बावली-सी ये दुनिया...2
पाकर धन संतोषी, सुधर जाये तो, अच्छा...(2)

व्यसनों ने डुबाई है, संसार की लुटिया...2
अब छोड़के आदत ये, इंसाँ बन जाये तो, अच्छा...(3)

अज्ञान का तम छाया, घनघोर अंधेरा...2
अब तेरी शरण पाकर, भला कर ले तो, अच्छा...(4)

भारतवर्ष के सीपुर में, 'गुरु' साक्षात् विराजे...2
'कनकनंदी' नाम प्यारा, भज तर ले, जहाँ से तो, अच्छा...(5)

संभल जाये तो, अच्छा...
लाभ पाले तो, अच्छा...
'गुरु' को पाले तो, अच्छा...

सीपुर, दिनांक 09.02.2017, मध्याह्न 12.35

विषयानुक्रमणिका

अ.क्र.	विषय	पृ.सं.
1.	आत्मोद्धारक गुरु कनकनन्दी जी को पाकर आध्यात्मनंदी हुआ धन्य	2
2.	अद्वितीय संत आचार्यश्री कनकनन्दी	3
3.	आचार्यश्री कनकनन्दी के गुण कीर्तन व मेरी आत्मकल्याण की भावना	3
4.	'कनक' गुरु की संगति में मेरा लक्ष्य एवं भावना	4
5.	मेरी आत्म-आलोचना आत्मविशुद्धि हेतु	5
6.	'कनक' गुरु अनुपम गुणों की खान	6
7.	गुरुवर श्री कनकनन्दी जी चरणी माझी 'अभिलाषा'	6
8.	आ. भगवन् श्री कनकनन्दी जी गुरुदेव की महानता	7
9.	आचार्य कनकनन्दी गुरुदेव से पा रहे 'मैं' (स्व, आत्मा) का ज्ञान	8
10.	'कनकनन्दी' गुरुवर की प्रार्थना	9
11.	'कनक' गुरुवर से प्राप्त हुई मुझे अंतर्दृष्टि	10
12.	भव्यों को त्रय योगों के सम्यक् प्रयोग हेतु कनकनन्दी गुरुवर का संबोधन	11
13.	''गुरु! तेरा ज्ञान सब पा ले तो, अच्छा''	11

सर्वोत्तम

1.	सर्वोत्तम हम बनेंगे	15
2.	हर द्रव्य/(जीव) गुण होते हैं अद्वितीय!	16
3.	शक्ति-बुद्धि-कार्यदक्षता बढ़ाने के उपाय	31
4.	शिक्षा कैसे बने अन्त्योदयी-सर्वोदयी!	48
5.	समालोचना से मिलती है विविध शिक्षाएँ	64
6.	मेरा स्वभाव ही मेरा स्वधर्म	68
7.	आये हो मम जीवन में आत्मशक्ति बनके	69

8.	अन्तःप्रेरणा व आध्यात्मिक शांति से करूँ आत्म-उन्नति	70
9.	स्व-आत्म चिन्तन-श्रद्धान-ज्ञान-आचरण से मोक्ष	89
10.	गुण-दोषों के परिज्ञान व त्याग न होने के व होने के कारण	98
11.	वचन-तन-मन/(आत्मा) शुद्धि हेतु व्याकरण-आयुर्वेद-ध्यान/(धर्म)	106
12.	''जड़ शक्ति से भी जानना चाहूँ आत्मशक्ति''	108
13.	भ्रष्ट नेता-अभिनेता-खिलाड़ी के भारत के अंधभक्त	115
14.	घी मेर नाम है धी बढ़ाना काम है	123
15.	पंच समिति : स्वच्छ-स्वस्थ्य-सामान्य ज्ञान-नैतिक-दैनिक क्रिया	128
16.	''आध्यात्मिक शाश्वतिक वसन्त''	133
17.	आध्यात्म वसन्तात गुण पुष्प फूलू दे!	133
18.	साक्षर एवं धार्मिक (रूढ़िवादी) जनों तक में नैतिकाचर का अभाव क्यों?	134
19.	'कनक' गुरुवरांची निस्पृह वृत्ति	135
20.	दि. जैन श्रमण-श्रमणी की आहार-विधि	136
21.	वह पुण्य मुझे नहीं चाहिए जिस पुण्य से हो...!?	166
22.	आरती सोलहकारण भावना की	172
23.	राष्ट्रहित हेतु आह्वान व सुझाव	173
24.	महान् सन्तों की महानता से मैं सीखूँ	174
25.	3 ' P' के फॉर्मूले	175

सर्वोत्तम

सर्वोत्तम हम बनेंगे

(चाल : छोटू मेरा नाम रे....., लकड़ी की काठी....., मेरा जूता है जापानी....., सायोनारा....., तुम दिल की.....)

सरल जीवन जीयेंगे...सर्वोत्तम (हम) बनेंगे...
समता-शांति पालेंगे...उत्तम सुख पायेंगे...ला..ला..ला..

महान् लक्ष्य धरेंगे...महान् हम बनेंगे...
राग-द्वेष/(मोह) छोड़ेंगे...पावन हम बनेंगे...

आत्म तत्त्व पायेंगे...परम सत्य जानेंगे...
शुद्ध-बुद्ध बनेंगे...परम-आत्मा बनेंगे...

इस हेतु हम जीयेंगे...इस हेतु मरेंगे...
इसकी साधना करेंगे...महान् लक्ष्य पायेंगे...

इस हेतु ज्ञान करेंगे...स्वाध्याय-ध्यान करेंगे...
मनन-चिन्तन करेंगे...शोध-बोध करेंगे...

विनम्र-जिज्ञासु (हम) बनेंगे...सत्यग्राही बनेंगे...
संकीर्णता/(रूढ़ि) छोड़ेंगे...प्रगतिशील बनेंगे...

ईर्ष्या-तृष्णा/(घृणा) छोड़ेंगे...उदार भावी/(सहिष्णु) बनेंगे...
ख्याति-पूजा/(लाभ) छोड़ेंगे...निस्पृह/(आदर्श) बनेंगे...

भेद-भाव (हम) छोड़ेंगे...वैश्विक कुटुम्ब मानेंगे...
कूपमण्डूकता छोड़ेंगे...अनंत विकास करेंगे...

आत्मविश्वासी बनेंगे...मौलिकता को पायेंगे...
दीन-हीन/(अहं) त्यागेंगे...आत्म-गौरव पायेंगे...

कार्य-कारण (हम) जानेंगे...हित-अहित मानेंगे...
गुणग्राही (हम) बनेंगे...दुर्गुण हम छोड़ेंगे...

तन-मन स्वस्थ्य रहेंगे...आत्मा को स्वस्थ्य रखेंगे...
व्यायाम/(प्राणायाम) करेंगे...शारीरिक श्रम करेंगे...

शुद्ध-सात्विक खायेंगे...स्वच्छ स्थान में रहेंगे...
निन्दा-अपमान न करेंगे...हित-मित-प्रिय बोलेंगे...

अन्याय/(अत्याचार) न करेंगे...भ्रष्टाचार न करेंगे...
शोषण/(मिलावट) नहीं करेंगे...चोरी-ठगी न करेंगे...

व्यर्थ काम न करेंगे...फैशन/(व्यसन) न करेंगे...
पर्यावरण रक्षा हेतु...अपरिग्रह/(अहिंसा) पालेंगे...

दान-दया/(सेवा) करेंगे...परोपकारी बनेंगे...
संवेदनशील बनेंगे...श्रद्धा/(प्रज्ञा) युक्त होयेंगे...

स्व-पर प्रकाशी बनेंगे...आत्म-विशुद्धि करेंगे...
अहंकार/(ममकार) त्यागेंगे...शुद्ध-बुद्ध बनेंगे...

परम लक्ष्य पायेंगे...अनंत सुखी बनेंगे...
सच्चिदानंद बनेंगे...'कनक' स्वयं को पायेंगे...

सीपुर, दिनांक 23.01.2017, प्रातः 7.27

हर द्रव्य/(जीव) गुण होते हैं अद्वितीय!

(जैन सिद्धांत में निहित परम स्वतंत्रता व मौलिकता!)

(जैन धर्म में निहित अन्त्योदय से सर्वोदय!)

(चाल : आत्मशक्ति से ओतप्रोत....., सायोनारा....., तुम दिल की.....)

अद्वितीय भी होते हर द्रव्य...हर गुण भी विशेषतः...
सामान्य में भले समान होते...विशेष में होते पृथक्-पृथक्/(अद्वितीय)...(स्थायी)...

विश्व में होते हैं छः द्रव्य...छहों ही हैं पृथक्-पृथक्...
जीव पुद्गल होते अनंतानंत...प्रत्येक भी पृथक्-पृथक्...

हर द्रव्य में होते अनंत गुण...हर गुण है पृथक्-पृथक्...
एक द्रव्य में एक साथ...होने पर भी होते पृथक्-पृथक्...(1)...

अनंतानंत होते संसारी जीव...तो भी वे होते पृथक्-पृथक्...
अनंतानंत होते मुक्त जीव...तो भी वे होते पृथक्-पृथक्...

एक निगोदिया शरीर में होते...अनंत जीव वे भी पृथक्-पृथक्...

एक निगोदिया में अनंत कर्माणु...तो भी वे होते पृथक्-पृथक्...(2)...

तथाहि हर संसारी जीव में...जानना है उपरोक्त विधान...
कर्म से लेकर आत्म द्रव्य व...गुण भी होते भिन्न-भिन्न...

एक वृक्ष में यथा होते है...लाखों फूल-फल व पत्रादि...
तो भी होते है भिन्न-भिन्न...हर फूल-फल व पत्रादि...(3)...

(तथाहि) मानवों के हर अंग-उपांग...सर्वथा नहीं होते समान...
हर रोम तक न होते समान...विज्ञान को भी यह मान्य...

गुणानुकरण तो अतः करणीय...नहीं हो अंधानुकरण...
फैशन-व्यसन-दिखावा हेतु...नहीं हो अंधानुकरण...(4)...

स्व-गुण विकास हेतु हो...स्व-गुणों में अभिवर्द्धन...
प्रतिस्पर्द्धा भी इस हेतु...स्वयं के साथ ही करणीय...

नवम गुणस्थान से पूर्व के...जीवों के भाव भी न होते सम...
इससे परे जीवों के भाव...एक समान तो भी भिन्न-भिन्न...(5)...

एक सिद्ध में होते अनंत सिद्ध...तो भी वे होते भिन्न-भिन्न...
हर सिद्ध में होते अनंत गुण...तो भी हर गुण भिन्न-भिन्न...

परम-स्वतंत्रता व मौलिकता का...यह है गूढ़ रहस्य...
परम समता व व्यापकता का...यह है गूढ़/(सूक्ष्म) रहस्य...(6)...

पूर्णतः सर्वज्ञ ज्ञान गम्य...सभी न जानते यह सत्य...
दार्शनिक से ले वैज्ञानिक तक...अभी तक हैं प्रयासरत...

परम शुद्ध निश्चय दृष्टि से...हर जीव समान व मौलिक/(पृथक्, स्वतंत्र)...
कोई नहीं दीन-हीन छोटा-बड़ा...यह बोध है आध्यात्मिक...(7)...

अतएव आध्यात्मिक ही है...परम आदर्श/(विद्या) व पावन...
परम नीति-कानून-संविधान...राजनीति व विज्ञान/(अन्त्योदय से सर्वोदय)...

दीन-हीन व अहंकार परे...सत्य-समता व शांति...
हर जीव पाये यह अवस्था...भावना भाये 'कनकनन्दी'...(8)...

सीपुर, दिनांक 06.02.2017, रात्रि 9.14

संदर्भ-

स्वभावव्युत्पत्ति अधिकार

स्वभावलाभादच्युतत्वादस्तिस्वभावः।। (106)

सूत्रार्थ-जिस द्रव्य को जो स्वभाव प्राप्त है उससे कभी भी च्युत नहीं होना अस्ति स्वभाव है।

विशेषार्थ-जीव का चेतन स्वभाव है। चेतन स्वभाव से कभी च्युत नहीं होना जीव का अस्ति स्वभाव है। यदि जीव चेतन स्वभाव से च्युत हो जावे तो जीव का अस्तित्व ही समाप्त हो जावेगा।

स्व का होना या स्व के द्वारा होना स्वभाव है। लाभ का अर्थ व्याप्ति है।

परस्वरूपेणाभावान्नास्तिस्वभावः।। (107)

सूत्रार्थ-परस्वरूप नहीं होना नास्ति स्वभाव है।

विशेषार्थ-संस्कृत नयचक्र पृ. 61 पर लिखा है-

'परस्वरूपेणाभावत्वान्नास्तिस्वभावं।'

अर्थात्-परस्वरूप की अपेक्षा अभाव से नास्ति स्वभाव है।

सूत्र में 'अभावात्' शब्द का अर्थ अभवनात् है।

निज-निज-नानापर्यायेषु तदेवेदमिति द्रव्यस्योपलम्भान्नित्यस्वभावः।। (108)

सूत्रार्थ-अपनी-अपनी नाना पर्यायों में 'यह वही है' इस प्रकार द्रव्य की प्राप्ति 'नित्य स्वभाव' है।

विशेषार्थ-ध्रुवत्व अंश की अपेक्षा से अथवा सामान्य अंश की अपेक्षा से द्रव्य नित्य स्वभावी है जो द्रव्यार्थिक नय का विषय है। अर्थात् द्रव्यार्थिक नय की अपेक्षा द्रव्य नित्य है।

तस्याप्यनेकपर्यायपरिणामितत्वादनित्यस्वभावः।। (109)

सूत्रार्थ-उस द्रव्य का अनेक पर्याय रूप परिणत होने से अनित्य स्वभाव है।

विशेषार्थ-प्रति समय उत्पाद व्यय की दृष्टि से द्रव्य परिणमनशील होने अथवा पर्यायार्थिक नय की अपेक्षा द्रव्य अनित्य स्वभावी है। प्रमाण की अपेक्षा द्रव्य नित्यानित्यात्मक है।

स्वभावानामेकाधारत्वादेकस्वभावः।। (110)

सूत्रार्थ-संपूर्ण स्वभावों का एक आधार होने से एक स्वभाव है।

विशेषार्थ-अनेक गुणों, पर्यायों और स्वभावों का एक द्रव्य सामान्य आधार होने से द्रव्य एक स्वभावी है। संस्कृत नयचक्र पृ. 65 पर कहा भी है-

'सामान्यरूपेणैकत्वमिति।'

अर्थात्-सामान्य की अपेक्षा एक स्वभाव है।

एकस्याप्यनेकस्वभावोपलम्भादनेक स्वभावः।। (111)

सूत्रार्थ-एक ही द्रव्य के अनेक स्वभावों की उपलब्धि होने से 'अनेक स्वभाव' है।

विशेषार्थ-एक ही द्रव्य नाना गुणों, पर्यायों और स्वभावों का आधार है। यद्यपि आधार एक है किन्तु आधेय अनेक हैं। अतः आधेय की अपेक्षा से अथवा विशेषों की अपेक्षा से द्रव्य अनेक स्वभावी है। संस्कृत नयचक्र पृ. 65 पर कहा है- '**स्यादनेक इति विशेषरूपणैव कुर्यात।**'

अर्थत्-विशेष की अपेक्षा अनेक स्वभाव है।

गुणगुण्यादिसंज्ञादिभेदाद् भेदस्वभावः।। (112)

सूत्रार्थ-गुण-गुणी आदि में संज्ञा, संख्या, लक्षण और प्रयोजन की अपेक्षा भेद होने से 'भेद स्वभाव' है।

विशेषार्थ-गुण और गुणी दोनों पृथक्-पृथक् संज्ञा है अतः संज्ञा की अपेक्षा गुण और गुणी में भेद है। गुण अनेक है और गुण एक है अतः संख्या की अपेक्षा भी गुण और गुणी में भेद है। द्रव्य का लक्षण सत् है और गुण का लक्षण है '**दव्याश्रया निर्गुणा गुणाः**' (जो द्रव्य के आश्रय और अन्य गुणों से रहित है वह गुण है) अतः दोनों का पृथक्-पृथक् लक्षण होने से गुण और गुणी में लक्षण की अपेक्षा भी भेद है। द्रव्य के द्वारा लोक का मान किया जाता है और गुण के द्वारा द्रव्य जाना जाता है, इस प्रकार गुण-गुणी का पृथक्-पृथक् प्रयोजन होने से गुण और गुणी में प्रयोजन की अपेक्षा से भी भेद है। जैसे-जीव द्रव्य में गुणी की संज्ञा 'जीव' है और गुण की संज्ञा 'ज्ञान' है। जो इन्द्रिय, बल, आयु, प्राणपान इन चार प्राणों के द्वारा जीता है, जीता था और जीवेगा; यह जीव द्रव्य-गुणी का लक्षण है। जिसके द्वारा पदार्थ जाना जाय वह ज्ञान है, यह ज्ञान का लक्षण है। जीव द्रव्य-गुणी अविनश्वर रहते हुए भी बंध, मोक्ष आदि पर्याय रूप परिणमन करता है यह जीव गुणी का प्रयोजन है। मात्र पदार्थ को जानना ज्ञान गुण का प्रयोजन है। इस प्रकार गुण-गुणी में पर्याय-पर्यायें आदि में संज्ञादि

की अपेक्षा भेद होने से द्रव्य में भेद स्वभाव है।

संस्कृत नयचक्र पृ. 65 पर कहा है '**सद्भूतव्यवहारेण भेद इति।**' अर्थात् सद्भूतव्यवहारनय की अपेक्षा भेद स्वभाव है।

गुणगुण्याद्येकस्वभावादभेदस्वभावः।। (113)

सूत्रार्थ-गुण और गुणी का एक स्वभाव होने से अभेद स्वभाव है।

विशेषार्थ-निश्चयनय अर्थात् द्रव्यार्थिक नय की दृष्टि में एक अखण्ड द्रव्य है उसमें गुणों की कल्पना नहीं है। समयसार गाथा 7 में श्री कुंदकुंद आचार्य ने कहा है कि व्यवहारनय से जीव में दर्शन, ज्ञान, चारित्र है किन्तु निश्चयनय से न दर्शन है, न ज्ञान है, न चारित्र है। द्रव्यार्थिक नय की अपेक्षा जीव में दर्शन, ज्ञान, चारित्र ऐसा भेद नहीं है। संस्कृत नयचक्र पृ. 65 पर कहा है-'**स्याद्भेद इति द्रव्यार्थिकेनैव कुर्यात।**' अर्थात् द्रव्यार्थिक नय से ही अभेद स्वभाव है।

प्राकृत नयचक्र पृ. 31 पर कहा है-

गुणपज्जयदो दव्वं दव्वादो ण गुणपज्जयाभण्णा।

जह्या तह्या भणियं दव्वं गुणपज्जयमणण्णं।। (42)

अर्थ-गुण, पर्याय से द्रव्य और द्रव्य से गुण, पर्याय भिन्न नहीं हैं अर्थात् प्रदेश भेद नहीं है इसलिए गुण, पर्याय से द्रव्य को अनन्य कहा है अर्थात् गुण-गुणी में अभेद स्वभाव कहा है।

भाविकाले परस्वरूपाकार भवनाद्भव्यस्वभावः।। (114)

सूत्रार्थ-भाविकाल में पर (आगामी पर्याय) स्वरूप होने से भव्य स्वभाव है।

विशेषार्थ-'पर' शब्द के अनेक अर्थ हैं किन्तु इस सूत्र में भाविकाल की दृष्टि से 'पर' का अर्थ 'आगे' होगा। श्री अमृतचन्द्राचार्य ने भी पंचास्तिकाय गाथा 37 की टीका में कहा है-

'**द्रव्यस्य सर्वदा अभूतपर्यायैः भाव्यमिति।**'

अर्थ-द्रव्य सर्वदा अभूत (भावि) पर्यायों से भाव्य है। अर्थात् भावि पर्याय रूप होने योग्य है अतः द्रव्य में भव्य भाव है।

प्राकृत नयचक्र पृ. 38 पर टिप्पण में भी कहा है-

'**भवितुं परिणमितुं योग्यत्वं तु भव्यत्वं, तेन विशिष्टत्वाद्भव्याः।**'

अर्थ-होने योग्य अथवा परिणमन करने योग्य वह भव्यत्व है। उस भव्यत्व

भाव से विशिष्ट द्रव्य भव्य है।

यद्यपि सूत्र में 'परस्वरूपाकार' है किन्तु संस्कृत नयचक्र में 'स्वस्वभाव' पाठ है। क्योंकि प्रत्येक द्रव्य अपने स्वभाव रूप परिणमन करने योग्य है इसलिए प्रत्येक द्रव्य में भव्य स्वभाव है।

प्राकृत नयचक्र पृ. 40 पर भी कहा है कि भव्य स्वभाव के स्वीकार न करने पर सर्वथा एकांत से अभव्य भाव मानने पर शून्यता का प्रसंग आ जायेगा क्योंकि अपने स्वरूप से भी अभवन अर्थात् नहीं होगा।

अतः संस्कृतनयचक्रानुसार इस सूत्र का पाठ निम्न प्रकार होना चाहिए-

'**भाविकाले स्वस्वभावभवनाद्भव्यस्वभावत्वं।**'

कालत्रयेऽपि परस्वरूपाकाराभवनादभव्यस्वभावः।। (115)

सूत्रार्थ-क्योंकि त्रिकाल में भी परस्वरूपाकार (दूसरे द्रव्य रूप) नहीं होगा अतः अभव्य स्वभाव है।

विशेषार्थ-अनादि काल से छहों द्रव्य एक क्षेत्रावगाह हो रहे हैं किन्तु किसी द्रव्य के एक प्रदेश का भी अन्य द्रव्य रूप परिणमन नहीं हुआ। इसी बात को स्वयं ग्रंथकार पंचास्तिकाय गाथा 7 उद्धृत करके सिद्ध करते हैं।

अण्णोण्णं पविसंता दिंता ओगासमण्णमण्णस्स।

मेलंता वि य णिच्चं सगं सभावं ण विजहंति।। (7)

गाथार्थ-वे द्रव्य एक-दूसरे में प्रवेश करते हैं, अन्योन्य को अवकाश देते हैं, परस्पर मिल जाते हैं तथापि सदा अपने-अपने स्वभाव को नहीं छोड़ते।

विशेषार्थ-जीव और पुद्गल परस्पर एक-दूसरे में प्रवेश करते हैं तथा शेष धर्मादि चार द्रव्य क्रियावान् जीव और पुद्गलों को अवकाश देते हैं तथा धर्मादि निष्क्रिय चार द्रव्य एक क्षेत्र में परस्पर मिलकर रहते हैं तथापि कोई भी द्रव्य अपने स्वभाव को नहीं छोड़ता।

पारिणामिकभावप्रधानत्वेन परमस्वभावः।। (116)

सूत्रार्थ-पारिणामिक भाव की प्रधानता से परम स्वभाव है।

विशेषार्थ-अपने स्वभाव से रहना या होना पारिणामिक भाव है। उस पारिणामिक भाव की मुख्यता से परम स्वभाव है।

उत्पादो य विणासो विज्जदि सव्वस्स अट्ठजादस्स।

पज्जाएण दु केणवि अट्ठो खलु होदि सब्भूदो।। (18)

जैसे इस लोक में शुद्ध स्वर्ण के बाजूबन्द (रूप) पर्याय से उत्पाद देखा जाता है, पूर्व अवस्था रूप से वर्तने वाली अँगूठी इत्यादि पर्याय से विनाश देखा जाता है और पीलापन आदि पर्याय से तो दोनों में (बाजूबन्द और अँगूठी में) उत्पत्ति विनाश को प्राप्त न होने वाले (सुवर्ण) ध्रौव्यत्व दिखाई देता है, इसी प्रकार सर्व द्रव्यों के किसी पर्याय से उत्पाद, किसी (पर्याय) से विनाश और किसी पर्याय से ध्रौव्य होता है। ऐसा जानना चाहिए।

अपरिच्चत्त सहावेणुप्पादव्वयधुवत्तसंबद्धं।

गुणवं च सपज्जायं जं तं दव्वं ति वुच्चंति।। (95)

स्वभाव को छोड़े बिना जो उत्पाद-व्यय-ध्रौव्य संयुक्त है तथा गुणयुक्त और पर्याय सहित है 'द्रव्य' ऐसा कहते हैं।

यहाँ (इस विश्व में) वास्तव में जो स्वभाव भेद किये बिना उत्पाद, व्यय, ध्रौव्य त्रय से और गुण, पर्याय द्वय से लक्षित होता है। इनमें से (स्वभाव, उत्पाद, व्यय, ध्रौव्य, गुण और पर्याय में से) वास्तव में द्रव्य का स्वभाव अस्तित्व सामान्य रूप अन्वय है, अस्तित्व को तो दो प्रकार का आगे कहेंगे-(1) स्वरूप अस्तित्व, (2) सादृश्य अस्तित्व। उत्पाद, प्रादुर्भाव (प्रगट होना-उत्पाद होना) है, व्यय प्रच्युति (नष्ट होना) है, ध्रौव्य अवस्थिति (टिकना) है। गुण, विस्तार विशेष हैं। वे सामान्य-विशेषात्मक होने से दो प्रकार के हैं। इनमें अस्तित्व, नास्तित्व, एकत्व, अन्यत्व, पर्यायत्व, सर्वगतत्व, असर्वगतत्व, भोक्तृत्व, अगुरुलघुत्व इत्यादि सामान्य गुण हैं। अवगाहहेतुत्व, गतिनिमित्तता, स्थितिकारणत्व, वर्तनायतनत्व, रूपादिमत्व, चेतनत्व इत्यादि विशेष गुण हैं। पर्याय आयत विशेष हैं। द्रव्य का उन उत्पादादि के साथ अथवा गुण पर्यायों के साथ लक्ष्य लक्षण भेद होने पर भी स्वरूप भेद नहीं है (सत्ता भेद नहीं है) स्वरूप से ही द्रव्य वैसा होने से (अर्थात् द्रव्य ही स्वयं उत्पादादि रूप तथा गुण-पर्याय रूप परिणमन करता है, इस कारण स्वरूप भेद नहीं है।)

सदवट्ठिदं सहावे दव्वं दव्वस्स जो हि परिणामो।

अत्थेसु सो सहावो ठिदिसंभवणाससंबद्धो।। (99)

स्वभाव में अवस्थित सत् द्रव्य है, द्रव्य का गुण-पर्यायों में जो उत्पाद, व्यय, ध्रौव्य सहित परिणाम है वह उसका स्वभाव है।

ण भवो भंगविहीणो भंगो वा णत्थि संभवविहीणो।

उत्पादो वि य भंगो ण विणा धोव्वेण अत्थेण।। (100)

वास्तव में उत्पाद, व्यय के बिना नहीं होता और व्यय, उत्पाद के बिना नहीं होता तथा उत्पाद और व्यय स्थिति (ध्रौव्य) के बिना नहीं होते और ध्रौव्य उत्पाद तथा व्यय के बिना नहीं होता।

अविनश्वरत्व का सिद्धांत

नित्य का नियम

तद्भावाव्ययं नित्यम्।। (31)

Parmanence means indestructibility of the essence of the quality of the substance.

उसके भाव से (अपनी जाति से) च्युत न होना नित्य है।

जो प्रत्यभिज्ञान का कारण है वह तद्भाव है, 'वही यह है' इस प्रकार के स्मरण को 'प्रत्यभिज्ञान' कहते हैं। वह अकस्मात् तो होता नहीं, इसीलिये जो इसका कारण है वही तद्भाव है। इसकी निरुक्ति 'भवनं भावः, तस्य भावः तद्भावः' इस प्रकार होती है। तात्पर्य यह है कि पहले वस्तु को जिस रूप देखा है उसी रूप उसके पुनः होने से 'वही यह है' इस प्रकार का प्रत्यभिज्ञान होता है। यदि पूर्व वस्तु का सर्वथा नाश हो जाये या सर्वथा नई वस्तु का उत्पाद माना जाये तो इससे स्मरण की उत्पत्ति नहीं हो सकती और स्मरण की उत्पत्ति न हो सकने से स्मरण के आधीन जितना लोक-संव्यवहार चालू है वह सब विरोध को प्राप्त होता है, इसीलिये जिस वस्तु का जो भाव है उस रूप से च्युत न होना तद्भावाव्यय अर्थात् नित्य है ऐसा निश्चित होता है, परन्तु इसे कथंचित् जानना चाहिए। यदि सर्वथा नित्यता मान ली जाये तो परिणमन का सर्वथा अभाव प्राप्त होता है और ऐसा होने से पर संसार और इसकी निवृत्ति के कारण रूप प्रक्रिया का निषेध (अभाव) प्राप्त होता है।

तत्त्वार्थसार में कहा भी है-

द्रव्याण्येतानि नित्यानि तद्भावान्न व्ययन्ति यत्।

प्रत्यभिज्ञानहेतुत्वं तद्भावस्तु निगद्यते।। (14)

ये द्रव्य नित्य हैं, क्योंकि अपने स्वभाव से नष्ट नहीं होते। अपना स्वभाव ही प्रत्यभिज्ञान का कारण कहा जाता है।

भावस्स णत्थि णासो णत्थि अभावस्स चेव उप्पादो।

गुणपज्जयेसु भावा उप्पादवए पकुव्वंति।। (15) (पंचास्तिकाय)

सत् द्रव्य का द्रव्यरूप से विनाश नहीं है, अभाव का असत् अन्य द्रव्य का द्रव्यरूप से उत्पाद नहीं है, परन्तु भाव सत् द्रव्ये, सत् के विनाश और असत् के उत्पाद बिना ही, गुणपर्यायों में विनाश और उत्पाद करते हैं। जिस प्रकार घी की उत्पत्ति में गोरस का-सत् का-विनाश नहीं है तथा गोरस से भिन्न पदार्थान्तर का-असत् का उत्पाद नहीं है, किन्तु गोरस को ही सत् का विनाश और असत् का उत्पाद किये बिना ही पूर्व अवस्था से विनाश को प्राप्त होने वाले और उत्तर अवस्था से उत्पन्न होने वाले स्पर्श-रस-गंध-वर्णादिक परिणामी गुणों में मक्खन पर्याय विनाश को प्राप्त होती है तथा घी पर्याय उत्पन्न होती है, सर्वभावों का भी उसी प्रकार वैसा ही है (अर्थात् समस्त द्रव्यों का नवीन पर्याय की उत्पत्ति में सत् का विनाश नहीं है तथा असत् का उत्पाद नहीं है, किन्तु सत् का विनाश और असत् का उत्पाद किये बिना ही पहले की (पुरानी) अवस्था से विनाश को प्राप्त होने वाले और बाद की (नवीन) अवस्था से उत्पन्न होने वाले परिणामी गुणों में पहले की पर्याय का विनाश और बाद की पर्याय की उत्पत्ति होती है।)

छद्दव्वावट्ठाणं सरिसं तियकाल अत्थपज्जाये।

वेंजणपज्जाये वा मिलिदे ताणं ठिदित्तादो।। (581)

अवस्थान-स्थिति छहों द्रव्यों की समान है। क्योंकि त्रिकाल संबंधी अर्थपर्याय वा व्यंजनपर्याय के मिलने से ही उनकी स्थिति होती है।

एयदवियम्मि जे अत्थपज्जया वियणपज्जया चावि।

तीदाणागदभूदा तावदियं तं हवदि दव्वं।। (582)

एक द्रव्य में जितनी त्रिकाल संबंधी अर्थपर्याय और व्यंजनपर्याय हैं उतना ही द्रव्य है। (गोम्मट्टसार जीवकाण्डम्, पृ. 265)

विश्वगुरु सापेक्ष (अनेकान्त सिद्धान्त)

वस्तु स्वरूप की सिद्धि

अर्पितानर्पितसिद्धेः।। (32)

The contradictary characteristics are established from

different points of view.

मुख्यतया और गौणता की अपेक्षा एक वस्तु में विरोधी मालूम पड़ने वाले दो धर्मों की सिद्धि होती है।

द्रव्य में अनन्त गुण एवं पर्याय होती हैं। उन अनन्त गुणों एवं पर्यायों का कथन एक साथ नहीं हो सकता है, परन्तु उस द्रव्य को जानना अनिवार्य है, क्योंकि द्रव्य के यथार्थ ज्ञान बिना रत्नत्रय की उपलब्धि नहीं हो सकती एवं रत्नत्रय के बिना मोक्षमार्ग नहीं हो सकता, मोक्षमार्ग के बिना मोक्ष नहीं मिल सकता और मोक्ष के बिना शाश्वतिक सुख नहीं मिल सकता है। इसीलिये यहाँ पर वस्तु स्वरूप के यथार्थ परिज्ञान की सर्वश्रेष्ठ व्यावहारिक, दार्शनिक और वैज्ञानिक प्रणाली का वर्णन किया गया है।

धर्मान्तर को विवक्षा से प्राप्त प्राधान्य अर्पित कहलाता है। अनेक धर्मात्मक वस्तु के प्रयोजन वश जिस धर्म की विवक्षा की जाती है या विवक्षित जिस धर्म को प्रधानता मिलती है, उसे-अर्थरूप को अर्पित (मुख्य) कहते हैं।

अर्पित से विपरीत अनर्पित (गौण) है। प्रयोजक के प्रयोजन का (वक्ता की इच्छा का) अभाव होने से सत् (विद्यमान) पदार्थ की भी अविवक्षा हो जाती है। अतः उपसर्जनीभूत (गौण) पदार्थ अनर्पित (अविवक्षित) कहलाता है। वस्तु स्वरूप को जानने की जो गौण-मुख्य व्यवस्था है उसका व्यावहारिक सटीक वर्णन अमृतचन्द्र सूरि ने पुरुषार्थसिद्धि ग्रन्थ में वर्णन किया है। यथा-

एकेनाकर्षती श्लथयंती वस्तुतत्त्वमितरेण।
अन्तेन जयति जैनी नीतिर्मथाननेत्रमिव गोपी।। (225)

जिस प्रकार ग्वालिन दही को बिलोती हुई एक रस्सी को अपनी ओर खींचती है, दूसरी रस्सी को ढीली करती है। यद्यपि रस्सी एक होने पर भी रई में लिपटी हुई रहने के कारण दो भागों में बँट जाती है, उसे गोपिका दोनों हाथों में पकड़कर दही बिलोती है। जिस समय वह एक हाथ से एक ओर की रस्सी को अपनी ओर खींचती है, उसी समय दूसरे हाथ की रस्सी को ढीली कर देती है अर्थात् उसे आगे बढ़ा देती है, इस प्रकार परस्पर एक को खींचने से दूसरी को ढीली करने से वह मक्खन (लोणी) निकाल देती है। यदि ग्वालिनी एक साथ दोनों छोर को समान बल से खींचती एवं छोड़ती तो मथनी गतिशील नहीं बनती और मक्खन भी नहीं निकलता। इसी प्रकार वस्तु स्वरूप के परिज्ञान के लिए विवक्षित विषय को मुख्य कर दिया जाता

है एवं अविवक्षित विषय को गौण किया जाता है। इसका मतलब यह नहीं कि विवक्षित गुण, धर्म वस्तु में है एवं अविवक्षित गुण, धर्म वस्तु से पृथक् होकर लोप हो गये हो। इसको ही जैन धर्म में नयवाद या स्याद्वाद कहते हैं। आधुनिक वैज्ञानिक युग के महामेधावी वैज्ञानिक आईंस्टीन ने भी इस अनेकान्त सिद्धान्त को स्वीकार किया है। वे भी मानते हैं कि प्रत्येक वस्तु का कथन सापेक्ष दृष्टि से होना चाहिए। आईंस्टीन यहाँ तक मानते हैं कि जब तक जीव असर्वज्ञ रहेगा तब तक वह सम्पूर्ण सत्य को नहीं जान सकता, केवल आंशिक सत्य को जान सकता है। इस आंशिक सत्य को आंशिक सत्य मानना सम्यक् है एवं आंशिक सत्य को ही पूर्ण सत्य मान लेना मिथ्या है। यथा-

Einstain says, 'we can only know the relative truth the real truth is know only to the universal observer.

आईंस्टीन के सापेक्षवाद के अनुसार हम जब जो जानते हैं, वह सम्पूर्ण सत्य (Absolute truth) नहीं है, किन्तु सापेक्षिक सत्य है। (Relative truth) है, सम्पूर्ण सत्य सर्वदर्शी सर्वज्ञ के द्वारा ही जाना जा सकता है।

सन्मति सूत्र में सिद्धसेन दिवाकर ने बताया कि अनेकान्त केवल वस्तु स्वरूप को प्रतिपादन करने वाली दार्शनिक प्रणाली नहीं है, परन्तु लोक व्यवहार को सुचारू रूप से व्यवस्थित करने के लिए लौकिक प्रणाली भी है।

जेण विणा लोगस्स वि ववहारो सव्वहा ण णिव्वडई।
तस्स भुवणेक्कगुरुणो णमो अणेगंतवायस्स।। (69)

जिस अनेकान्तवाद के बिना लोकव्यवहार भी नहीं चलता है उस जगत् का एकमेव गुरु अनेकान्तवाद को मेरा नमस्कार हो।

जैसे रामचन्द्र एक मर्यादा पुरुषोत्तम थे। वे लव, कुश की अपेक्षा पिता, दशरथ की अपेक्षा पुत्र, लक्ष्मण की अपेक्षा बड़े भाई, सीता की अपेक्षा पति, जनक की अपेक्षा दामाद (जमाई), सुग्रीव की अपेक्षा मित्र, रावण की अपेक्षा शत्रु, हनुमान की अपेक्षा प्रभु आदि अनेक धर्म से युक्त थे। राम एक होते हुए भी दशरथ की अपेक्षा पुत्र होते हुए भी लव-कुश की अपेक्षा पिता रूप विरोधी गुण से युक्त थे। तो भी अपेक्षा की दृष्टि से कोई प्रकार का विरोध नहीं है। इसी प्रकार अन्यान्य गुण अपने-अपने स्थान पर अविरुद्ध एवं उपयुक्त है। विशेष ज्ञान के लिए मेरा 'अनेकान्त दर्शन' का अध्ययन करें।

100 संख्या 10 संख्या की अपेक्षा अधिक होते हुए भी 1000 संख्या की अपेक्षा कम है। जैसे-सेवफल नारियल से छोटा होते हुए भी आँवले की अपेक्षा बड़ा है। आँवला सेवफल से छोटा होने पर भी इलायची की अपेक्षा बड़ा है। घी निरोगी के लिए शक्तिदायक होते हुए भी ज्वर रोगी के लिए हानिकारक है। अग्नि चिमनी में रहते हुए उपकारक है, परन्तु पेट्रोल-टंकी में डालने पर अपकारक है। अग्नि एक होते हुए भी पाचकत्व, दाहकत्व, प्रकाशकत्व आदि गुणों के कारण अनेक भी हैं।

यह अनेकान्त मानसिक अहिंसा है, क्योंकि इसमें एकान्तवाद, हठाग्रह, पूर्वाग्रह नहीं है। अनेकान्त सिद्धान्त दूसरों के सत्यांश को भी स्वीकार करता है। अनेकान्त का सिद्धान्त है Right is Mine अर्थात् जो सत्य है वह मेरा है। उसका दावा यह नहीं कि Mine is Right अर्थात् मेरा जो है वह सत्य है। अनेकान्त वस्तु स्वरूप तथा भावात्मक अहिंसा है तथा स्याद्वाद कथन प्रणाली या वचनात्मक अहिंसा है। इस अनेकान्त का स्पष्टीकरण करने के लिए और कुछ सरल उदाहरण प्रस्तुत कर रहे हैं। जैसे-दो इंच लंबी वाली रेखा एक इंच वाली रेखा से लंबी है तथा तीन इंच लंबी रेखा से छोटी भी है। अनामिका अंगुली कनिष्ठा से बड़ी है, परन्तु मध्यमा से छोटी भी है। इसी प्रकार दिशा आदि में भी जान लेना चाहिए। जैसे एक व्यक्ति के लिए दूसरा व्यक्ति पूर्व में है तो पहला व्यक्ति उसके लिए पश्चिम में होगा।

गुण का लक्षण

द्रव्याश्रया निर्गुणा गुणाः। (41)

Gunas or attributes depend upon substance and are never without it. An attribute as such cannot be the subtratum of another attributes, although of course, many attributes can co-exist in one and the same substances at one and the same time and place. There can not be an attribute of an attribute.

जो निरन्तर द्रव्य में रहते हैं, और गुणरहित हैं वे गुण हैं।

जिसमें गुण आश्रय लेते हैं अर्थात् जिसमें गुण रहते हैं वह आश्रय है। गुणों को कोई न कोई आश्रय चाहिए, गुण आश्रय के बिना नहीं रह सकते और द्रव्य को छोड़कर अन्य आधार हो नहीं सकता।

जो नित्य द्रव्य के आश्रय से रहता है वह गुणा है। यद्यपि पर्यायें भी द्रव्य में

रहती हैं, परन्तु पर्यायें कादाचित्क है अतः 'द्रव्याश्रयाः' इस पद से पर्यायों का ग्रहण नहीं होता हैं। अतः 'द्रव्याश्रयाः' इस पद से अन्वयी धर्म गुण है ऐसा सिद्ध होता है, जैसे कि, जीव के अस्तित्वादि और ज्ञान, दर्शन आदि गुण है और पुद्गल के अचेतनत्व आदि रूप-रसादि गुण हैं।

जदि हवदि दव्वमण्णं गुणदो य गुणा व दव्वदो अण्णे।
दव्वाणंतियमधवा दव्वाभावं पकुव्वंति।। (44) (पंचास्तिकाय, पृ. 152)

प्रदेशों की अपेक्षा भी यदि द्रव्य से गुण अलग-अलग हो तो जो अनन्तगुण द्रव्य में एक साथ रहते हैं वे अलग-अलग होकर अनन्त द्रव्य हो जावेंगे और द्रव्य से जब सब गुण भिन्न हो गए तब द्रव्य का नाश हो जावेगा। यहाँ पूछते हैं कि गुण किसी के आश्रय या आधार से रहते या वे आश्रय बिना होते है? यदि वे आश्रय से रहते हैं ऐसा कोई माने और उसको और कोई दोष दे तो यह कहना होगा कि, जो अनन्त ज्ञान आदि गुण जिस किसी एक शुद्ध आत्म द्रव्य में आश्रय रूप है उस आत्म द्रव्य से यदि वे गुण भिन्न-भिन्न हो जावें, इसी तरह दूसरे शुद्ध जीव द्रव्य में भी जो अनन्त गुण हैं वे भी जुदे-जुदे हो जावे तब यह फल होगा कि शुद्धात्मा द्रव्यों से अनन्तगुणों के जुदा होने पर शुद्ध आत्म द्रव्य अनन्त हो जावेंगे। जैसे ग्रहण करने योग्य परमात्म द्रव्य में गुण और गुणी का भेद होने पर द्रव्य की अनन्तता कही गई वैसी ही त्यागने योग्य अशुद्ध जीव द्रव्य में तथा पुदगलादि द्रव्यों में भी समझ लेनी चाहिए अर्थात् गुण और गुणी का भेद होते हुए मुख्य या गौण रूप एक-एक गुण का मुख्य या गौण एक-एक द्रव्य आधार होते हुए द्रव्य अनन्त हो जावेगा तथा द्रव्य के पास से जब गुणों का समुदाय द्रव्य है। यदि ऐसे गुण समुदाय रूप द्रव्य से गुणों का एकांत से सर्वथा; भेद माना जाएगा तो गुण समुदाय स्वरूप का अस्तित्व द्रव्य कहाँ रहेगा? किसी भी तरह नहीं रह सकता है।

अविभक्तमणण्णत्तं दव्वगुणाणं विभत्तमण्णत्तं
णिच्छंति णिच्चयण्हू तव्विवरीदं हि वा तेसिं।। (45)

जैसे-परमाणु का वर्णादि गुणों के साथ अभिन्नपना है अर्थात् उनमें परस्पर प्रदेशों का भेद नहीं है तैसे शुद्ध जीव द्रव्य का केवलज्ञानादि प्रगटरूप स्वाभाविक गुणों के साथ और अशुद्ध जीव का मतिज्ञान आदि प्रगट रूप विभाव गुणों के साथ तथा शेष द्रव्यों का अपने-अपने गुणों के साथ यथासंभव एकपना है अर्थात् द्रव्य और गुणों के

भिन्न-भिन्न प्रदेशों का अभाव जानना चाहिए। निश्चय स्वरूप के ज्ञाता जैनाचार्य, जैसे हिमाचल और विंध्याचल पर्वत में भिन्नपना है अथवा एक क्षेत्र में रहते हुए जल और दूध का भिन्न प्रदेशपना है ऐसा भिन्नपना द्रव्य और गुणों का नहीं मानते हैं तो भी एकांत से द्रव्य और गुणों का अन्यपने से विपरीत एकपना भी नहीं मानते हैं अर्थात् जैसे द्रव्य और गुणों में प्रदेशों की अपेक्षा अभिन्नपना है तैसे संज्ञा आदि की अपेक्षा से भी एकपना है ऐसा नहीं मानते हैं अर्थात् एकांत से द्रव्य और गुणों का न एकपना मानते हैं न भिन्नपना मानते हैं। बिना अपेक्षा के एकत्व व अन्यत्व दोनों को नहीं मानते हैं, किन्तु भिन्न-भिन्न अपेक्षा से भेदाभेद दोनों स्वभावों को मानते है। प्रदेशों की एकता से एकपना है। संज्ञादिकी अपेक्षा द्रव्य और गुणों का अन्यपना हैं ऐसा आचार्य मानते हैं।

ववदेसा संठाणा संखा विसया य होंति ते बहुगा।
ते तेसिमणण्णत्ते अण्णत्ते चावि विज्जंते।। (46)

कथन या संज्ञा के भेद आकार के भेद संख्या या गणना और विषय या आधार ये बहुत प्रकार के होते हैं। ये चारों उन द्रव्य और गुणों की एकता में तैसे ही उसकी भिन्नता में होते हैं।

णाणं धणं कुव्वदि धणिणं जह णाणिणं च दुविधेहिं।
भण्णंति तह पुधत्तं एयत्तं चावि तच्चण्हू।। (47)

जैसे धन का अस्तित्व भिन्न है और धनी पुरुष का अस्तित्व भिन्न है इसलिये धन और धनी का नाम भिन्न है, धन का आकार भिन्न है, धनी पुरुष का आकार भिन्न हैं, धन की संख्या भिन्न है, धनी पुरुष की संख्या भिन्न है, धन का आधार भिन्न है धनी का आधार भिन्न है तो भी धन को रखने वाला धनी है ऐसा जो कहता है सो भेद या पृथक्त्व व्यवहार है। तैसे ही ज्ञान का अस्तित्व ज्ञानी से अभिन्न है ऐसे ज्ञान का अभिन्न अस्तित्व रखने वाले ज्ञानी आत्मा के साथ अभेद कथन है। ज्ञान का नाम ज्ञानी से अभिन्न है, ज्ञानी का नाम ज्ञान से अभिन्न है, ज्ञान का संस्थान ज्ञानी से अभिन्न है, ज्ञान का आधार ज्ञानी से अभिन्न है, ज्ञानी का आधार ज्ञान से अभिन्न है। इस तरह ज्ञान और ज्ञानी में अपृथक्त्व या अभेद कथन है। इन दोनों दृष्टांतों के अनुसार द्राष्टांत विचार लेना चाहिए जहाँ भिन्न-भिन्न द्रव्य हो उनके नामादि भिन्न जानना चाहिए।

णाणी णाणं च सदा अत्यंतरिदा दु अण्णमण्णस्स।। (48)
दोण्हं अचेदणत्तं पसजदि सम्मं जिणावमदं।

जैसे यदि अग्नि गुणी अपने गुण उष्णपने से अत्यन्त भिन्न हो जाये तो अग्नि दग्ध करने के कार्य को न कर सकने से निश्चय से शीतल हो जावे। उसी प्रकार जीव गुणी अपने ज्ञान गुण से भिन्न हो जावे तो पदार्थ को जानने में असमर्थ होने से जड़ हो जावे। जैसे उष्ण गुण से अग्नि अत्यन्त भिन्न यदि मानी जावे तो दहन क्रिया के प्रति असमर्थ होने से शीतल हो जावे तैसे ही ज्ञान गुण से अत्यन्त भिन्न यदि ज्ञानी जीव माना जावे तो वह पदार्थ के जानने को असमर्थता को होता हुआ अचेतन जड़ हो जावे तब ऐसा हो जावे जैसे देवदत्त घसियारे से उसका घास काटने का दतीला भिन्न है वैसे ज्ञान से ज्ञानी भिन्न हो जावे तो ऐसा नहीं कहा जा सकता है। दतीला तो छेदने के कार्य में मात्र बाहरी उपकरण है परन्तु भीतरी उपकरण तो वीर्यांतराय के क्षयोपशम से उत्पन्न पुरुष का वीर्य विशेष है। यदि भीतर शक्ति न हो तो दतीला हाथ में होते हुए भी छेदने का काम नहीं हो सकता है। तैसे ही प्रकाश, गुरु आदि बाहरी सहकारी कारणों के होते हुए यदि पुरुष में भीतर ज्ञान का उपकरण न हो तो वह पदार्थ को जानने रूप कार्य नहीं कर सकता है।

समवत्ती समवाओ अपुधब्भूदो य अजुदसिद्धो य।
तम्हा दव्वगुणाणं अजुदा सिद्धित्ति णिदिट्ठा।। (50)

जैन मत में समवाय उसी को कहते हैं जो साथ-साथ रहते हो अर्थात् जो किसी अपेक्षा एकरूप से अनादिकाल से तादात्म्य सम्बन्ध या न छूटने वाला सम्बन्ध रखते हो ऐसा साथ वर्तन गुण और गुणी का होता है इससे दूसरा कोई अन्य से कल्पित समवाय नहीं है। यद्यपि गुण और गुणी में संज्ञा लक्षण प्रयोजनादिकी अपेक्षा भेद है तथापि प्रदेशों का भेद नहीं है इसके वे अभिन्न है तथा जैसे दंड और दंडी पुरुष का भिन्न-भिन्न प्रदेशपनारूप भेद है तथा वे दोनों मिल जाते है ऐसा भेद गुण और गुणी में नहीं है। इससे इनमें अयुतसिद्धापना (अभेदपना) या एकपना कहा जाता है। इस कारण द्रव्य और गुणों का अभिन्नपना सदा से सिद्ध है। इस व्याख्यान में यह अभिप्राय हैं कि जैसे जीव के साथ ज्ञान गुण का अनादि तादात्म्य सम्बन्ध कहा गया है तथा वह श्रद्धान करने योग्य है वैसे ही जो अव्याबाध, अप्रमाण, अविनाशी व स्वाभाविक रागादि दोष रहित परमानन्दमई एक स्वभाव रूप पारमार्थिक सुख है इसको आदि लेकर जो अनन्त गुण केवलज्ञान में अन्तर्भूत हैं उनके साथ ही जीव का तादात्म्य सम्बन्ध जानना योग्य है तथा उसी ही जीव को रागादि विकल्पों को त्यागकर निरन्तर

ध्याना चाहिए।

वण्णरसगंधफासा परमाणुरूविदा विसेसेहिं।
दव्वादो य अणण्णा अण्णत्तपगासगा होंति।। (51)
दसंणणाणाणि तहा जीवणिबद्धाणि पण्णभूदाणि।
ववदेसदो पुधत्तं कुव्वंति हि णो सभावादो।। (52)

निश्चय से वर्ण, रस, गंध, स्पर्श परमाणु में कहे हुए गुण पुद्गल द्रव्य से अभिन्न है तो भी व्यवहार से संज्ञादि की अपेक्षा भेदपने के प्रकाशक है तैसे जीव से तादात्म्य सम्बन्ध रखने वाले दर्शन और ज्ञान गुण जीव से अभिन्न है सो संज्ञा आदि से परस्पर भिन्नपना करते है। निश्चय से स्वभाव से पृथक्पना नहीं करते है। क्योंकि द्रव्य और गुणों का अभिन्न अन्वय रूप से सम्बन्ध है।

शक्ति-बुद्धि-कार्यदक्षता बढ़ाने के उपाय

(चाल : तुम दिल की.....)

बुद्धि-शक्ति व कार्यदक्षता, बढ़ती है निम्नोक्त कारणों से।
जो कुछ मैंने पढ़ा-सुना-अनुभव किया लिखूँ संक्षेप से।।

शांत-मन व स्वस्थ्य-शरीर, पावन-आत्मा से बढ़ती शक्ति।
एकांत शांत-मौन-एकाग्रता से, बढ़ती है बुद्धि, शक्ति।। (1)

व्यायाम प्राणायाम योगासन, भ्रमण आदि से बढ़ती शक्ति।
शुद्ध-सात्विक-ताजा-पौष्टिक, भोजन-पेय से बढ़ती शक्ति।।

प्रदूषण रहित स्वच्छ स्थान में, निवास करने से बढ़ती शक्ति।
महान्-लक्ष्य व पवित्र-भाव, उत्तम-व्यवहार से बढ़ती शक्ति।। (2)

ईर्ष्या-द्वेष-घृणा-काम-संक्लेश, रहित से बढ़ती शक्ति।
अस्त-व्यस्त-संत्रस्त रिक्त से, बढ़ती है बुद्धि, शक्ति।।

स्वतंत्र-मौलिक-श्रेष्ठ-ज्येष्ठ-भाव व काम से बढ़ती शक्ति।
नये-नये शोध-बोध व ध्यान-अध्ययन से बढ़ती शक्ति।। (3)

लंद-फंद-द्वंद्व रिक्त से, बढ़ती है बुद्धि शक्ति।
आत्मविश्वास पूर्ण ज्ञान आचरण से, बढ़ती है बुद्धि शक्ति।।

गुणवृद्धि व दोष हानि से, बढ़ती है बुद्धि शक्ति।
सरल-सहज सादा-सीधा-जीवन से बढ़ती है बुद्धि शक्ति।। (4)

निन्दा-अपमान-कलह रहित से, बढ़ती है बुद्धि-शक्ति।
दीन-हीन-अहंकार-कुण्ठात्याग से, बढ़ती है बुद्धि-शक्ति।।

सकारात्मकता सतत पुरुषार्थ से, बढ़ती है बुद्धि-शक्ति।
उत्साह-रुचि-आनंद भाव से, बढ़ती है बुद्धि-शक्ति।। (5)

अपेक्षा-उपेक्षा-प्रतीक्षा रहित से, बढ़ती है बुद्धि-शक्ति।
संकल्प-विकल्प-संक्लेश रहित से, बढ़ती है बुद्धि-शक्ति।।

क्रमबद्ध व्यवस्थित भाव काम से, बढ़ती है बुद्धि-शक्ति।
संकीर्ण स्वार्थ व संकीर्णता रिक्त से, बढ़ती है बुद्धि-शक्ति।। (6)

समुचित प्रकाश व प्राणवायु से, बढ़ती है बुद्धि-शक्ति।
श्रमपूर्वक विश्राम व नींद से, बढ़ती है बुद्धि-शक्ति।।

कौन क्या कहता मानना से परे, बढ़ती है बुद्धि-शक्ति।
अनुभव-भावानुसार कार्य करने से, बढ़ती है बुद्धि-शक्ति।। (7)

सनम्र सत्यग्राही संतुष्टी-तृप्ति से, बढ़ती है बुद्धि-शक्ति।
दान-सेवा-दया-परोपकार से, बढ़ती है बुद्धि-शक्ति।।

प्रमाद-रहित आलस्य-त्याग से, बढ़ती है बुद्धि-शक्ति।
मस्त-व्यस्त कार्य करने से, 'कनक' की बढ़ती कार्य-शक्ति।। (8)

(यह कविता ब्र. संगीता के कारण बनी।)
सीपुर, दिनांक 14.01.2017, प्रातः 8.17

विश्व प्रसिद्ध लोगों का एक खास तरीका

हर आंत्रप्रेन्योर का होता है सफलता का अलग फॉर्मूला

एक अध्ययन में कहा गया है कि सभी सफल आंत्रप्रेन्योर में कुछ बातें समान होती हैं जैसे-जिज्ञासा, इनोवेशन, सेल्फ डिसिप्लिन, मोटिवेशन और तनाव सहने और समस्याओं का समाधान करने की क्षमता। विश्व प्रसिद्ध विद्वानों और सफल लोगों

ने भी आंत्रप्रेन्योर के कुछ गुण बताये हैं। जैसे अरस्तु ने मौलिकता पर जोर दिया। उन्होंने कहा था कि किसी भी बिजनेस की सफलता के लिए यह जरूरी है कि आंत्रप्रेन्योर को कम से कम एक ऐसा रहस्य पता हो जो और कोई नहीं जानता हो। मौलिक काम करना और इनोवेशन इतना आसान नहीं है। स्टीव जॉब्स ने कहा था कि जब आप कुछ नया करने की कोशिश करते हैं तो गलतियाँ होती हैं। लेकिन इससे कोई फर्क नहीं पड़ेगा अगर आप इन्हें तुरंत स्वीकार कर ले और सुधारकर फिर इनोवेशन में लग जाये। आंत्रप्रेन्योरशिप का उनका मंत्र था-फोकस और सिंप्लिसिटी। उन्होंने कहा कि सरल चीजें बनाना जटिल काम है। चीजों को आसान और सरल बनाने के लिए काफी मेहनत करना पड़ती है।

इधर थॉमस एडिसन सबसे अहम फोकस को मानते थे। उन्होंने कहा था-कोई नियम नहीं होता। बस एक काम को ध्यान लगाकर पूरा करने की कोशिश करना जरूरी है। अमेरिकी बिजनेसमैन और लेखक जॉन फ्रांसिस जैक वेल्श ने भी इसी तरह की बात कही। उन्होंने कहा है कि अच्छे बिजनेस लीडर्स नजरिया विकसित करते हैं। वे इस पर कायम रहते हैं और लगातार अपने उद्देश्य को पूरा करने के लिए काम करते हैं।

रोमन दार्शनिक लुसियस ॲनेयस सेनेका ने दिशा का ज्ञान सबसे अहम माना। उन्होंने कहा था-अगर नाविक को यह नहीं पता हो कि उसे किस तट पर जाना है तो इस बात से कोई फर्क नहीं पड़ता कि हवा का रुख क्या है। अमेरिकी लेखक और मैनेजमेंट सलाहकार पीटर ड्रकर ने कहा था कि आंत्रप्रेन्योर हमेशा बदलाव की तलाश में रहते हैं। वे परिवर्तन को हमेशा बड़े अवसर के रूप में देखते हैं। अमेरिकी लेखक ब्लेन ली का मानना था कि नॉलेज सबसे अहम है। जब हमारे सामने समस्याएँ आती हैं तो हम उनका सामना किस तरह करते हैं, इस बात से यह तय होता है कि भविष्य में हम कमजोर होंगे या ताकतवर। चार्ल्स डार्विन ने कहा था कि सबसे ताकतवर नस्ल हमेशा बनी नहीं रहती और ना ही सबसे समझदार। हाँ, लेकिन जो परिवर्तनों के साथ बदलता है वही हमेशा टिका रहता है।

किस उम्र में कितने घंटे नींद की जरूरत

नवजात-0 से 3 माह 14-17 घंटे, **शिशु**-4 से 11 माह 12-15 घंटे,

बच्चा-1 से 2 साल 11-14 घंटे, **प्री-स्कूल**-3 से 5 साल 10-13 घंटे, **स्कूल एज**-6 से 13 साल 9-11 घंटे, **किशोर**-14 से 17 साल 8-10 घंटे, **नवयुवक**-18 से 25 साल 7-9 घंटे, **युवक**-26 से 64 साल 7-9 घंटे, **बुजुर्ग**-65 प्लस 7-8 घंटे। यह जरूरी नहीं कि रात में ही सोये। काम के हिसाब से अपना निंदाचक्र खुद तय करें।

नंगे पाँव चलने से दूर हो सकता है तनाव

नंगे पैर चलने का बड़ा फायदा तो यह है कि इससे पैरों को भरपूर ऑक्सीजन मिलती है। रक्त संचार बेहतर होता है और शरीर की थकान कम हो जाती है। इसके अलावा शरीर की सभी माँसपेशियाँ सक्रिय हो जाती हैं। पैर का निचला हिस्सा धरती के संपर्क में आता है, जो एक्यूप्रेशर की तरह शरीर को फायदा पहुँचाता है।

सर्दी के मौसम में अक्सर नंगे पाँव नहीं घूमने की सलाह दी जाती है लेकिन शोध और रिसर्च के अनुसार नंगे पैर चलना न केवल सेहत के लिए लाभदायक है बल्कि मन को भी खुश रख सकता है।

तनाव होता दूर-प्रकृति के जुड़ाव से प्राप्त होने वाली ऊर्जा को विटामिन 'एन' नाम दिया है। यूरोपीयन जर्नल ऑफ एप्लाइड फिजियोलॉजी में प्रकाशित अध्ययन के आधार पर मेंडिच कहती हैं कि शहरों की तुलना में जंगल या प्रकृति के संपर्क में पैदल चलने वालों में रक्तदाब और तनाव को नियंत्रित करने वाले हॉर्मोन्स ज्यादा संतुलित रहते हैं। इसके अलावा एक अन्य अध्ययन में यह सामने आया है कि मिट्टी में पाये जाने वाले कई लाभदायी बैक्टेरिया तनाव और अवसाद से राहत दिलाते हैं। प्रकृति के संपर्क में रहने से रोग प्रतिरोधक क्षमता एवं मानसिक स्वास्थ्य पर भी अच्छा प्रभाव पड़ता है। स्कैण्डिनैवीअन जर्नल ऑफ फॉरेस्ट रिसर्च ने वर्ष 2007 में कार्यक्षेत्र के तनाव और संतुष्टि को लेकर अध्ययन किया। इसमें यह पाया कि जिन कर्मचारियों के ऑफिस की खिड़कियाँ पेड़ों या हरियाली की तरफ खुल रही थी, वे अधिक संतुष्ट और तनाव रहित पाये गये, लेकिन जिन कर्मचारियों को हरियाली और पेड़-पौधे नजर नहीं आये, वे चिड़चिड़े और असंतुष्ट थे। दरअसल, आधुनिक जीवन शैली के कारण मानव शरीर और पृथ्वी के इलेक्ट्रिक फील्ड के बीच दूरी

बढ़ती जा रही है, जो हमें शारीरिक एवं मानसिक रूप से नुकसान पहुँचा रही है। वैसे भी प्रकृति के करीब रहने के ढेरों फायदे हैं।

बागवानी से लाभ–धरती के संपर्क में रहने का एक तरीका बागवानी भी है। रोजाना आधा घंटा बगीचे और पेड़-पौधों की देखभाल से भी तनाव कम होता है। अवसादग्रस्त लोगों के लिए भी यह बेहतर उपचार है। इसके अलावा जब भी समय मिले नंगे पैर खुली जमीन के संपर्क में आना चाहिए। चलने-फिरने में अक्षम लोग जमीन पर पैर टिकाकर कुर्सी पर बैठ भी सकते है।

मल्टीटास्किंग से ऐसे गिरता है काम का स्तर

यह तो हमने सुना है कि मल्टीटास्किंग से काम का स्तर गिरता है, लेकिन एक अध्ययन से पता चला है कि इससे मस्तिष्क को भी नुकसान हो सकता है। जब भी कोई मल्टीटास्किंग यानी एक साथ कई काम करता है तो उसके दिमाग का एक हिस्सा क्षतिग्रस्त होता जाता है, जो भविष्य में काम के स्तर को प्रभावित करता है। स्टेनफोर्ड यूनिवर्सिटी के एक शोध के अनुसार एक काम करना मल्टीटास्किंग की अपेक्षा ज्यादा प्रोडक्टिव होता है। जिन लोगों के पास लगातार एक के बाद एक कई सूचनाएँ कई माध्यमों से आती रहती हैं वो किसी भी एक सूचना पर पूरा ध्यान नहीं दे पाते। इस शोध में पता चला कि जो लोग ये मानते हैं कि मल्टीटास्किंग में वे महारत रखते हैं और एक साथ कई काम दक्षता से कर सकते हैं, लेकिन असल में अपना कोई भी काम ठीक से नहीं कर पाते। यह निष्कर्ष दो समूहों की तुलना पर आधारित है। शोधकर्ताओं ने मल्टीटास्किंग और एक समय में एक काम करने वाले दो समूहों को इसमें शामिल किया। यह भी पता चला कि मल्टीटास्किंग से काम की गति तो कम होती ही है, आई.क्यू. भी गिरता है। इसी तरह लंदन यूनिवर्सिटी के एक अन्य शोध से पता चला कि मल्टीटास्किंग से आई.क्यू. पर वही असर हो सकता है, जो मारिजुआना लेने से होता है। इसके अलावा मल्टीटास्किंग से सबसे बुरा असर व्यक्ति के सामाजिक व्यवहार पर होता है। यह किसी को एक जगह ध्यान केंद्रित नहीं करने देता।

मिलेनियर्स की लाईफ चेंजिंग हैबिट्स

व्यक्ति सफलता चाहता है। इसके लिए वह प्रयास भी करता है, पर ज्यादातर लोगों को यह पता नहीं होता है कि जीवन में सफल होने के लिए किन आदतों को अपनाया जायें।

अगर आप भी मिलेनियर्स बनना चाहते हैं तो आपको अपने जीवन जीने का तरीका बदलना होगा। आपको अपनी जिंदगी में कुछ नया करना होगा। पुराने ढर्रे पर रहकर आप सफल नहीं हो सकते हैं। आपको मन में चल रही हर तरह की दुविधा से छुटकारा पाना होगा और संकल्प लेना होगा कि आप भी मिलेनियर्स बनकर दिखायेंगे। मिलेनियर्स और आम आदमी में कुछ आदतों का ही फर्क होता है। अगर इन आदतों को अपने जीवन में अपना ले तो आप भी मिलेनियर्स बन सकते हैं। यह कोई असंभव कार्य नहीं है। अगर आप थोड़ा-सा अभ्यास करे तो जीवन में सफलता प्राप्त करने की आदत विकसित कर सकते हैं। जानते हैं वे कौनसी खास आदतें हैं, जो आम आदमी को मिलेनियर्स बना सकती हैं-

ना कहना सीखें-हर काम के लिए हाँ कहने से आपके ऊपर दबाव आ जाता है। सिर्फ उन्हीं कार्यों के लिए हाँ कहना चाहिए, जिन्हें आराम से पूरा कर सकते हो। अगर किसी काम को समय पर पूरा नहीं कर सकते और हाँ कर दिया तो आप मुसीबत में फँस सकते हैं। जब कामों के लिए मना करते हैं तो पढ़ने, सीखने, सोने, सवाल पूछने, दोस्तों से मिलने और जीवन से प्यार करने के लिए समय मिल पाता है। ना कहकर शांति के साथ जीवन जी सकते हैं।

प्यार करे-प्यार दुनिया का एकमात्र धर्म होना चाहिए। प्यार से दुनिया चलती है। अगर आप लोगों को, अपने आस-पास के माहौल को, चीजों को प्यार करते हैं तो आपको सफल होने से कोई नहीं रोक सकता है। प्यार करने पर आप दुनिया से एक तारतम्य बना लेते हैं। प्यार करने पर आपके अंदर एक नई ऊर्जा का संचार होता है। प्यार से आपके विचारों को नई ऊँचाई मिलती है। अगर दुनिया से प्यार नहीं करेंगे तो सफलता नहीं मिल पायेगी।

गलतियों से न घबरायें-अगर सफलता प्राप्त करना चाहते हैं तो गलतियों से बचने की कोशिश नहीं करनी चाहिए। इसके बजाय गलतियों से सीखने की कोशिश करनी चाहिए। गलतियों का गहनता से अध्ययन करना चाहिए। अगली बार

उन्हीं गलतियों को करने से बचना चाहिए। हर बार एक नई गलती करने पर आप नई चीज सीखते हैं। गलतियाँ करके ही लोग सफल होते हैं। गलती हो जाने पर उसे स्वीकार करने में किसी तरह की शर्म महसूस नहीं होनी चाहिए।

10 आइडियाज लिखे हर रोज–अगर आप रोज 10 आइडियाज के बारे में विचार करे और उन्हें किसी डायरी में लिख ले तो आपका जीवन स्वतः ही बदलने लगेगा। इससे आपके अंदर सुपर पावर आ सकती है। सुनने में यह अजीब लगता है, पर इस आदत को छह माह के लिए अपनाकर देखें। रोज मन में आने वाले अच्छे विचारों को लिखने की आदत विकसित करे और उसके बाद जीवन में होने वाले बदलावों पर गौर करें। आप बदलाव होते हुए देखेंगे।

कई कामों में दखल दे–बाग का एक साधारण-सा सिद्धांत है कि 1 प्रतिशत बीज 50 प्रतिशत फूलों में तब्दील हो जाते हैं। इसलिए आपको बहुत ज्यादा बीज बोने चाहिए। जीवन में आपको सिर्फ एक काम के भरोसे नहीं रहना चाहिए। शुरुआत में आपके कई कामों में दखल देना चाहिए। इसके बाद जीवन खुद ब खुद आकार लेने लगता है। आपको अपने जीवन को एक दिशा में सेट करने के बजाय हर संभावना पर विचार करना चाहिए।

बहाना न बनाये–जो व्यक्ति जीवन में बहाने बनाता है, वह सफल नहीं हो सकता। शिकायत करने और बहाने बनाने से आप नकारात्मक हो जाते हैं। इससे दिमाग काम करना बंद कर देता है। सफल लोग खुद अपनी मुश्किलों को कम करते हैं। वे किसी पर दोषारोपण नहीं करते हैं। वे लक्ष्य की तरफ ध्यान देते हैं, न कि समस्याओं की ओर। जीवन में सकारात्मक चीजों पर ध्यान दें।

जल्दबाजी न करे–आप किसी भी मिलेनियर्स से मिल ले, वह एक दिन में अमीर नहीं बना है। इसके लिए उसने वर्षों मेहनत की है। सफल होने के लिए लगातार कड़ी मेहनत करनी होगी और जीवन की छोटी-छोटी सफलताओं का आनंद लेना होगा। सिर्फ एक बड़ी सफलता पर संतुष्ट होने के बजाय जीवन में मिलने वाली हर खुशी को अपनाना होगा। कोशिशें करे, पर कभी जल्दबाजी न करें।

अच्छे लोगों के साथ रहे–अगर आप अच्छे लोगों के साथ रहेंगे तो आपके विचार भी अच्छे बन जायेंगे। इसका आपको सफलता प्राप्त करने में काफी फायदा मिलेगा। बुरे लोग आपको आगे बढ़ने से रोकते हैं। वे आपकी खूबियों के बजाय

कमियों पर फोकस करते हैं। अच्छे लोग हमेशा दयालु रहते है। वे रास्ता रोकने के बजाय रास्ता दिखाने में विश्वास करते है। सफल लोग हमेशा अच्छे दोस्तों का चयन करते है।

सवाल पूछे–इंसान का विकास सवाल पूछने की प्रवृत्ति के कारण ही हुआ है। अवसर हमेशा सवालों के अंदर ही छुपे होते हैं। अगर आप अच्छे सवाल पूछते हैं तो आपको अच्छे जवाब मिलते है। सवाल पूछने में किसी तरह की शर्म महसूस नहीं करनी चाहिए। सवाल पूछकर ही आप अपने मन में चल रही दुविधा को दूर कर सकते है। सवाल पूछने की आदत को बनाये रखें।

5/25 वॉरेन बफेट नियम–अरबपति वॉरेन बफेट सफलता प्राप्त का एक नियम बताते हैं। वह कहते हैं कि उन 25 चीजों की एक लिस्ट बनाये, जो पूरे जीवन में करना चाहते हैं। इसके बाद उनमें से टॉप 5 चीजें चुन ले और शेष 20 के बारे में कभी न सोचे। क्योंकि यदि उन 20 चीजों के बारे में सोचना शुरू कर दिया तो सबसे महत्वपूर्ण 5 चीजों के बारे में विचार नहीं कर पायेंगे।

पछतावा न करे–हो सकता है कि आपका जीवन पहले काफी खराब स्थिति में रहा हो या आपको कभी भी आगे बढ़ने का मौका न मिला हो, पर इसको लेकर दुःखी होने या पछताने से कुछ हासिल होने वाला नहीं है। इससे आप सिर्फ निगेटिव बनते है। आपको भविष्य के बारे में विचार करना चाहिए और कभी भी अपने पुराने निर्णयों को लेकर परेशान नहीं होना चाहिए।

मासूमियत बरकरार रखे–आपको हर रोज एक ऐसा काम करना चाहिए, जो आप बचपन में करना पसंद करते थे। इससे जीवन को नई ऊर्जा मिलती है। अपने अंदर मौजूद बच्चे को मरने न दें। बच्चों जैसा भोलापन, मासूमियत और जिज्ञासा ही आपको सफल बना सकती है। जीवन में आगे बढ़ने की कोशिश करें। जो भी करना चाहते हैं, वह रोज 1 प्रतिशत ज्यादा करे और कमाल देखें।

वायु प्रदूषण से हो सकता है दिमाग क्षतिग्रस्त

अगर आप किसी प्रदूषित शहर में रहते हैं तो वह प्रदूषण आपको दिमाग पर भी असर डाल सकता है।

अभी तक माना जाता था कि वायु प्रदूषण के कारण व्यक्ति को दिल और

साँस संबंधी बीमारियों का ही खतरा रहता है, लेकिन लैकेस्टर यूनिवर्सिटी के नये शोध ने इससे होने वाली अन्य समस्याओं की तरफ भी ध्यान दिलाया है। रिसर्चरों ने बताया कि दिमाग में नैनो चुंबक होने की संभावना बनती है।

लैंकेस्टर यूनिवर्सिटी की प्रोफेसर व शोधकर्ता दल की सदस्य प्रोफेसर बारबरा माहेर ने कहा कि दिमाग के नमूने में हमें वायु प्रदूषकों के लाखों कण मिले। एक मिलीग्राम ब्रेन टिश्यू में लाखों मैग्नेटिक प्रदूषक कण मिले हैं, जिनसे दिमाग को खतरा हो सकता है। इससे दिमाग के क्षतिग्रस्त होने की प्रबल संभावना है। इंसानी दिमाग में पाये गये ज्यादातर मैग्नेटाइट, जो चुंबकीय आयरन ऑक्साइड का कंपाउंड होते हैं, औद्योगिक वायु प्रदूषण की देन हैं।

प्रोफेसर माहेर के अनुसार साँस के माध्यम से शरीर में पहुँचने वाले प्रदूषण के कणों का बड़ा हिस्सा श्वास नली में जाता है, लेकिन इसका एक छोटा हिस्सा नर्वस सिस्टम से होते हुए दिमाग में भी पहुँचता है। उन्होंने कहा कि शोध के दौरान पता चला कि मैग्नेटिक प्रदूषक कण दिमाग में पहुँचने वाली आवाजों और संकेतों को रोक सकते हैं।

तनाव से है दिल को खतरा

तनाव से दिल की बीमारियाँ (कार्डियोवस्कुलर डिजीज) हो सकती है। चिकित्सा जगत् में यह नई बात नहीं है, लेकिन अभी तक इसका कारण स्पष्ट नहीं था। मशहूर मेडिकल जर्नल लान्सेट के अध्ययन में दिमाग के हिस्से एमिगडाला से तनाव और दिल का संबंध बताया है। एमिगडाला मस्तिष्क का वह हिस्सा होता है जो सीधा इंसान की भावनाओं से जुड़ा होता है। बादाम की आकार वाले कोशिकाओं का यह समूह तनाव होने पर बोनमैरो को अतिरिक्त श्वेत रक्त कणिकाओं (डब्ल्यूबीसी) का निर्माण करने का संदेश देता है। इसके प्रभाव से रक्त वाहिकाओं में सूजन आ जाती है। यह हार्ट अटैक, स्ट्रोक, एंजाइना और सीने में दर्द का खतरा पैदा करता है। लान्सेट के विश्लेषण में दो अलग-अलग अध्ययनों को शामिल किया गया। पहले अध्ययन में शोधकर्ताओं ने 296 मरीजों के दिमाग, बोनमैरो, स्पलीन और रक्त कोशिकाओं का अध्ययन किया। इनका चार सालों तक रिकॉर्ड दर्ज किया गया। इसमें 22 मरीजों के एमिगडाला में बहुत ज्यादा हरकत हुई। दूसरे अध्ययन में तनाव और

शरीर में सूजन के बीच संबंध देखा गया। शोधकर्ताओं का कहना है कि तनाव धूम्रपान और उच्च रक्त चाप जितना खतरनाक हो सकता है।

जब भविष्य में झाँकने की क्षमता पैदा करनी हो

जब हम 'विजनरी लीडर' शब्द सुनते हैं तो महात्मा गाँधी, चर्चिल या स्टीव जॉब्स जैसे लोग दिमाग में आते हैं। हमें लगता है विजनरी वे होते हैं, जो भविष्य में झाँक पाते हैं। किन्तु विजन यानी भविष्य-दृष्टि भी हुनर है, जिसे सीखा जा सकता है।

अभ्यास से अपने मन की आँखों की क्षमता बढ़ाये-(1) विजन रखने वाले लोगों में 'मन की आँखें' होती हैं, जिनसे वे ऐसे ट्रेंड, आविष्कार या घटनाएँ देख लेते हैं, जो अभी सुषुप्तावस्था में हैं। जो भी काम हो उसे कल्पना में विस्तृत ब्योरों के साथ देखें। कहानी-उपन्यास पढ़े तो उनमें वर्णित पात्रों, घटनाओं व जगहों को बारीकी से मन में साकार करने का प्रयास करें। धीरे-धीरे यह क्षमता बढ़ती जायेगी। (2) नई सूचनाएं ग्रहण करने के लिए खुले रहे। कोई छोटी सूचना भी नई जमीन तोड़ने की अंतर्दृष्टि दे सकती है। परंपरा, इतिहास, अपने क्षेत्र के अन्य लोगों की राय को अधिक महत्व न देने की आदत डालें। (3) प्राकृतिक दृश्यों, नाटक, पेंटिंग, नृत्य जैसी कलाओं का लुत्फ उठायें। इससे संवेदनशीलता बढ़ेगी। संवेदनशील होने से वह अतिरिक्त सूचना मिलती है, जिस तक अन्य की पहुँच नहीं होती।

सपने हमेशा जीवित रखे-(1) आमतौर पर लोग बड़े होने के बाद अपने सपने बच्चों का खेल समझकर बंद कर देते हैं। उन्हें जीवित रखें। जीवनभर उनका पीछा करते रहे। इससे भीतर आइडिया, चित्रों और विचारों की एक दुनिया विकसित होगी। (2) असंगत और विरोधी विचारों को अपनी विचार-प्रक्रिया में शामिल करें। इससे इनोवेटिव थिंकिंग विकसित होगी। चीजों को दूसरे की निगाहों से देखने का अभ्यास करें।

हर काम जुनून के साथ करने की आदत डाले-(1) वाहनों के रिअर मिरर में लिखा होता है, 'दिखने वाली वस्तुएँ उससे अधिक दूर हैं, जितनी नजदीक वे दिखाई दे रही हैं।' जुनून ऐसा ही दर्पण है, जिसमें साधनों का अभाव, अड़चनें कुछ दिखाई नहीं देता सिर्फ लक्ष्य दिखता है। इसी से विजन निकलता है। (2)

भविष्य के प्रति आशावादी रहे। साथियों की खूबियाँ ही देखें। अपनी योजना में दूसरों को शामिल करें। उनके विचार जानें। (3) कभी संतुष्ट न हो, लेकिन तृप्त हमेशा रहे। यानी जो मिला है उससे खुश रहने की आदत डाले, इससे मनोवृत्ति सकारात्मक रहती है, लेकिन वहीं टिके न रहे। आगे बढ़ें। (4) आध्यात्मिकता में रुचि लें। प्रतिदिन नियमित रूप से मेडिटेशन करें। भीतर की दुनिया खोजें। अंतर्चेतना को दोस्त बनाये। विजन वहीं से आते हैं। विरोधी चीजों, विचारों में समानता खोजने की आदत डालें।

...तो तनाव है आपको

आप लाख दावा करे कि आपको काई तनाव नहीं है और आप बड़ी सहजता से अपनी समस्याएँ सुलझा सकते हैं, परंतु छोटे-छोटे लक्षण भेद खोल देते हैं।

तनाव मन में होता है, परंतु यह पूरे शरीर को प्रभावित करता है। इसलिए खानपान की आदतों में बदलाव से लेकर खुजली तक और तरह-तरह के दर्द से लेकर अजीबो-गरीब सपनों तक, इसे कई बातों में पहचाना जा सकता है।

जीभ से लेकर पेट तक-प्रागैतिहासिक काल के मनुष्य के जीवन में एक ही तनाव था-किसी वन्य प्राणी से जान का खतरा। हिंसक प्राणी देखते ही उससे बचने के लिए मनुष्य को तुरंत भागना पड़ता था। इस भागदौड़ के लिए शरीर को शर्करा की जरूरत होती है। जमाना बदल गया है, पर इंसानी शरीर की क्रियाविधि नहीं बदली है। इसलिए तनाव के क्षणों में रक्त में शर्करा का स्तर बढ़ जाता है। दूसरी तरफ मीठा खाने की इच्छा भी बढ़ जाती है। इसके अलावा रिफाइंड कॉर्बोहाइड्रेट्स (जैसे-मैदे में बनी और तेल-घी में पकी चीजें) व जंकफूड के लिए भी जीभ लपलपाने लगती है। ये चीजें तुरंत ऊर्जा देती हैं। मन में तनाव हो, तो व्यकित अधिक खाने लगता है। बहरहाल, तनाव लंबे समय से हो तो भूख मर भी जाती है।

तरह-तरह के दर्द-तनाव की दशा में पेटदर्द आम है। 1953 लोगों के अध्ययन का निष्कर्ष था कि तनाव हो तो पेटदर्द की आशंका सामान्य से तीन गुना अधिक होती है। इसका एक कारण माना जाता हे कि आँतों और मस्तिष्क में

तंत्रिकाओं की राहें एक जैसी होती हैं। कहावत भी है कि पेट का भी दिमाग होता है। इसलिए दिमाग में हलचल हो, तो पेट सबसे पहले प्रभावित होता है। तनाव में सिर और पीठ का दर्द भी आम है। यह भी देखा गया है कि तनावग्रस्त महिलाओं में माहवारी अनियमित होती है या उस दौरान दर्द अधिक होता है। हार्वर्ड यूनिवर्सिटी का अध्ययन इसे तनाव के दौरान हॉर्मोन्स के असंतुलन से जोड़ता है। सो, अकारण दर्द हो, तो अपने मन में छुपे तनाव का पता लगाएँ।

खुजली और खुश्की–मन में तनाव पल रहा हो, तो शरीर में खुजली बढ़ जाती है। इसके पीछे वजह है तनाव से निबटने की शारीरिक क्रियाविधि। मस्तिष्क के लिए किसी भी तरह का तनाव एक खतरे का संकेत होता है। अतः शरीर को संभावित खतरे से बचाने के लिए वह त्वचा की ओर रक्त आपूर्ति कम करके भीतरी महत्वपूर्ण अंगों की तरफ खून का प्रवाह बढ़ा देता है। इससे त्वचा में एलर्जी, खुश्की और खुजली होने के आसार बढ़ जाते हैं। तनाव के दौरान खून थोड़ा गाढ़ा हो जाता है, ताकि किसी भी तरह का हमला होने और चोट लगने की दशा में खून कम बहे। यह कम समय के लिए एक अच्छी रणनीति है, जो इंसान के लाखों वर्षों के इतिहास में विकसित हुई है। लेकिन अब हमने तनाव को पालना शुरू कर दिया है, इसलिए उससे निबटने की सामान्य क्रियाविधि ही उलटे नुकसान कर रही है।

सपने भी देते हैं संकेत–तनाव के दौरान अजीब और डरावने स्वप्न आते हैं। इसके पीछे कारण यह है कि तनाव के चलते नींद बार-बार टूटती है। ऐसी स्थिति में दिमाग को समुचित आराम नहीं मिल पाता और उसकी कल्पना के घोड़े बुरी बातों की ओर दौड़ने लगते हैं। दूसरी तरफ, बुरे सपनों के चलते हम नींद लेने के बावजूद रिलैक्स नहीं हो पाते। इस तरह एक दुश्चक्र शुरू हो जाता है। तनाव के दौरान जबड़ों में दर्द हो सकता है, क्योंकि हम सोते-जागते बार-बार दाँत भींचने लगते हैं। इन लक्षणों पर गौर कीजिये। हो सकता है कि तनाव के अलावा ये किसी और रोग या तकलीफ का इशारा भी कर रहे हों।

साइंस में अंग्रेजी के बढ़ते महत्व पर चिंता

स्थानीय ज्ञान से जुड़े क्षेत्रों पर भी इंग्लिश हावी, कई वैज्ञानिक इससे सहमत–ब्रिटेन, अमेरिका सहित कई देशों में लोग कहते हैं, हर महत्वपूर्ण व्यक्ति

अंग्रेजी बोलता है। लेकिन, बहुत लोग अंग्रेजी नहीं बोलते हैं। इधर, ग्लोबल उद्यम और कामकाज में अंग्रेजी का दखल बढ़ता जा रहा है। साइंस में अधिकाधिक काम अंग्रेजी में होने लगा है। एक दृष्टि से यह उचित नहीं है। वैसे, साइंस की कोई एक भाषा होने के फायदे हैं। सदियों तक कॉपरनिकस, केपलर्स और यूरोप के न्यूटन लेटिन भाषा के सहारे चलते थे। यूरोपीय भाषाओं के उभार के साथ शिक्षित व्यक्ति से कई भाषाएं पढ़ने की अपेक्षा थी। किसी समय साइंस की प्रमुख भाषा जर्मन थी।

अब गैर अंग्रेजी भाषी लोगों को अंग्रेजी सीखना पड़ती है। दूसरी ओर अंग्रेजी भाषी वैज्ञानिक अन्य भाषाओं की बिलकुल परवाह नहीं करते हैं। प्लॉस बॉयोलॉजी पत्रिका में प्रकाशित स्टडी में तीन वैज्ञानिकों ने साइंस में केवल अंग्रेजी को महत्व देने पर चिंता जताई है। तात्सुआ अमानो, जुआन गोंजालेज वारो और विलियम सदरलैंड ने परिस्थिति विज्ञान, संरक्षण जैसे स्थानीय ज्ञान के क्षेत्रों पर गौर किया। उन्होंने पाया कि गूगल स्कॉलर पर संरक्षण या जैवविविधता पर 64.4 प्रतिशत पेपर अंग्रेजी में हैं। दूसरी सबसे आम भाषा स्पेनिश 12.6 प्रतिशत के साथ बहुत पीछे है।

साइंस का एक भाषा पर आश्रित रहना खराब है। 2004 में पक्षियों से सुअरों में एच5एन1 फ्लू वायरस फैलने की जानकारी चीनी भाषा में ना होने से बहुत समय नष्ट हो गया था। स्टडी में बताया गया, केवल स्पेनिश भाषा के आधे और जापानी के एक तिहाई शोधपत्रों के सार अंग्रेजी में थे। कई अच्छे वैज्ञानिक अंग्रेजी में नहीं लिख सकते हैं। लेकिन, इसका हल अंग्रेजी हटाने से नहीं निकलेगा। जहाँ भी जरूरी हो बहुभाषाओं को बढ़ावा देना चाहिए। अध्ययनों से पता लगा है, दूसरी भाषा में सोचने और लिखने से चिंतन के अलग स्वरूप का विकास होता है। मनोविज्ञान, बॉयोलॉजी, मेडिसिन जैसे विषयों में यूनिवर्सिटी के शोधकर्ताओं को मरीज और जानकारी एकत्र करने वालों से अन्य भाषाओं में बात करना पड़ती है। दो भाषाएँ जानने वाला साइंटिस्ट बाद में इसको अंग्रेजी में लिख सकता है। ऐसा ही अंग्रेजी साइंटिस्ट और शोधकर्ता करें। किसी देश या क्षेत्र के लिए जरूरी काम के रिसर्च पेपर में स्थानीय भाषाओं में प्रमुख शब्द और सार लिखा जाना चाहिए।

रोमांस और विज्ञान

उन्नीस साल की स्मिता ने साल भर पहले प्री इंजीनियरिंग परीक्षा में टॉप किया

था, फिजिक्स, केमेस्ट्री और मैथ्स तीनों सब्जेक्ट्स पर उसकी कमांड का लोहा टीचर्स भी मानते थे, लेकिन कुछ दिन पहले जब वह रोहित से मिली तो सब कुछ बदल-सा गया। वह खोई-खोई-सी रहती है, फिजिक्स के फार्मूलों के बजाय उसका दिल शायरी और पोएट्री में ज्यादा लगने लगा है जबकि रोहित में ऐसा कोई बदलाव उसे नजर नहीं आ रहा। वह चक्कर में है कि ऐसा क्यों हो रहा है।

दरअसल इसके पीछे एक मनोवैज्ञानिक कारण है। एक नई शोध कहना हे कि किसी महिला के जीवन में जितनी अधिक रूमानियत होती है वह साइंस, टेक्नोलॉजी, इंजीनियरिंग और गणित जैसे विषयों से उतनी ही दूर भागती हैं। बफैलो विश्वविद्यालय के शोधकर्ताओं ने इस बात को अपने अध्ययन का विषय बनाया कि जो महिलाएँ लंबे समय से शिक्षा और अपने कार्यस्थल में शानदार तरक्की करती रही हैं वे आखिर विज्ञान और गणित जैसे विषयों में सफलता हासिल क्यों नहीं कर पातीं? अध्ययन की प्रमुख लेखिका लोरा ई पार्क ने पाया कि जब महिलाएँ अपने जीवन में रोमांस की तलाश शुरू कर देती हें तो मनोवैज्ञानिक कारणों से वे विज्ञान, गणित और इंजीनियरिंग जैसे जटिल अकादमिक विषयों में रुचि लेना कम कर देती हैं जबकि अपेक्षाकृत स्त्रियोचित विषयों मसलन विभिन्न तरह की ललित कलाओं और भाषा आदि में उनका अधिक मन लगता है। हालाँकि पुरुषों के साथ ऐसा कतई नहीं होता है।

पार्क कहती हैं, जब महिलाएँ रोमांस की चाह रखने लगती हैं तो उनके अंदर का नारीभाव बहुत अधिक जागृत हो जाता है, ऐसे में गणित और विज्ञान जैसे पुरुषों का क्षेत्र माने जाने वाले विषयों में उनकी रुचि अचानक कम होने लगती है।

साइंस की नई खोज : रात की गहरी नींद में छिपा है लंबी आयु का राज

माइ जीलिंस्की जानते थे जब उनके चूहों ने सोना बंद कर दिया तो कुछ खास बात सामने आने वाली है। सामान्यतः जानवर 12 घंटे के चक्र में सोते और जागते हैं। जब लेबोरेट्री में लाइट जलती थी तब चूहे सक्रिय थे। अंधेरा होने पर वे सो गये। हार्वर्ड मेडिकल कॉलेज में मनोविज्ञान पढ़ाने वाले जीलिंस्की ने चूहों को जगाये रखने के लिए उनकी दिनचर्या में परिवर्तन किया।

जीलिंस्की और उनके साथियों ने पिंजड़ों में चूहों को जगाये रखा। कुछ दिन बाद उनमें पलकें झपकना, चाल में सुस्ती जैसे अनिद्रा के लक्षण साफ दिखाई देने लगे। इलेक्ट्रिकल जाँच से पता लगा कि उनके दिमाग की गतिविधियाँ भी धीमी पड़ गई हैं। लेकिन जीलिंस्की ने ध्यान दिया कि जब नींद अस्त-व्यस्त किये जाने के बाद चूहों को सोने के लिए अकेला छोड़ दि या गया तो भी वे नहीं सो पाये। जीलिंस्की को संदेह था, चूहों को नींद की समस्या जीन्स में परिवर्तन के कारण हुई है। दिमाग की जाँच से पता लगा कि जब वे सोये तब भी उनकी नींद गहरी नहीं थी।

शोधकर्ता सोचते हैं, सही परिस्थितियों में दिमाग शरीर के प्रमुख सिस्टम-हृदय, फेफड़ों, पाचन तंत्र, नर्वस सिस्टम, माँसपेशियों-को संदेश भेजता है कि अब बिस्तर में जाने का समय आ गया है। जीलिंस्की की रिसर्च में पाया गया, चूहों के समान नींद की स्थायी समस्याओं से पीड़ित कुछ लोगों को भी सोने के लिए सही संदेश नहीं मिल पाते हैं। जीलिंस्की की रिसर्च इसलिए महत्वपूर्ण है क्योंकि गहरी नींद का अच्छे स्वास्थ्य और दीर्घ जीवन से संबंध है।

वैज्ञानिकों ने पता लगाया हैं, नींद कम होने से शरीर का हर सिस्टम प्रभावित होता है। कई अध्ययनों से सामने आया है, जिन लोगों की नींद कम या अनियमित रही उन्हें दिल की बीमारियों, डायबिटीज, हाई ब्लड प्रेशर, मोटापे सहित ऐसी बीमारियाँ होने का खतरा है जिससे जल्दी मौत हो सकती है। कम नींद दिमाग पर असर डालती है। कैलिफोर्निया बर्कले यूनिवर्सिटी में मनोविज्ञान और न्यूरो साइंस के प्रोफेसर मैथ्यू वाकर कहते हैं, आहार और एक्सरसाइज के समान नींद बेहतर स्वास्थ्य का तीसरा स्तंभ है।

टेक्सास यूनिवर्सिटी में न्यूरो साइंस के प्रोफेसर डेविड स्कन्येर का कहना है, नींद में परिवर्तन से शरीर का पूरा सिस्टम बदल जाता है। इसलिए अनिद्रा का संबंध बीमारियों और असमय मौत से है। एक ताजा स्टडी से पता लगा है, भूखे रहने की तुलना में अनिद्रा के कारण चूहों की मौत जल्दी हो गई। फिर भी, कई लोग लंबी आयु के लिए रात की नींद को महत्वपूर्ण नहीं मानते हैं।

वैसे, स्पष्ट है कि नींद के कुछ जैविक फायदे हैं। 2014 में रोचेस्टर यूनिवर्सिटी की न्यूरोसाइंटिस्ट डॉ. माइकेन नेडरगार्ड ने पहली बार बताया कि नींद के दौरान शरीर आराम करता है लेकिन दिमाग के अंदर बहुत कुछ चलता रहता है। इलेक्ट्रिक

सिगनल से युक्त न्यूरॉन तरंगें लय के साथ मस्तिष्क की धुलाई करती हैं। मस्तिष्क सुनिश्चित करता है कि हॉर्मोन, एंजाइम और प्रोटीन का संतुलन बना रहे। इस बीच दिमाग की कोशिकाएँ सिकुड़कर अपने बीच जगह बनाती हैं ताकि सभी तरह की समस्याएँ खड़ी करने वाले जहरीले तत्त्वों को न्यूरॉन द्रव धोकर बाहर कर सके। रात में दिमाग की धुलाई के बिना खतरनाक टॉक्सिन स्वस्थ कोशिकाओं को नुकसान पहुँचा सकते हैं और एक-दूसरे से संपर्क बनाने की उनकी क्षमता में बाधा डालते हैं। इससे याददाश्त कमजोर पड़ती है। विचारों और भावनाओं पर नियंत्रण प्रभावित होता है। नींद की कमी से दिमाग की कोशिकाएँ तेजी से बूढ़ी होती हैं।

चूहों पर नेडरगार्ड की रिसर्च ने नींद के फायदों और उसकी जैविक कार्यप्रणाली पर नई सोच का रास्ता दिखाया है। पता लगा है, नींद के दौरान दिमाग अधिक नियोजित तरीके से दिन की घटनाओं को याद करता है। वह इन स्मृतियों से जुड़ी भावनाओं का विश्लेषण करता है। जब नींद के समय कोई स्मृति उभरती है तब वह दिन के समय अनुभव की गई कुछ शक्तिशाली भावनाओं जेसे भय, दुःख, गुस्सा या आनंद को अलग कर देती है।

स्लीप साइंटिस्ट वाकर बताते हैं, ''हम याद करने के लिए सोते हैं और भूलने के लिए सोते हैं। मैं इसे रात्रिकालीन थैरेपी कहता हूँ। इस तरह की प्रक्रिया में समय लगता है।'' लगातार रातों में गहरी नींद से ऐसा होने की संभावना रहती है। इससे पता लगता है, जो लोग कम सोते हैं या जिनकी नींद में बाधा पड़ती है, वे अपनी स्मृतियों से भावनाओं का बोझ पूरी तरह नहीं हटा पाते हैं। वाकर कहते हैं, 'आप जितनी अधिक रातों में सोयेंगे, उसका उतना ज्यादा स्मृति पर शांतिपूर्ण प्रभाव पड़ेगा। नींद उन भावनात्मक स्मृतियों को बेअसर करती है और लगभग एक सप्ताह बाद उसे बाहर कर देती है।'

सात घंटे की नींद जरूरी–2002 में अमेरिकन कैंसर सोसायटी की दस लाख लोगों की स्टडी के बाद विशेषज्ञों ने सुझाव दिया कि दीर्घ जीवन के लिए रात में सात घंटे की नींद लेनी चाहिए। यह स्टडी छह वर्ष तक चली थी। वैसे, अधिक आयु के लोगों का इससे कम नींद से काम चल सकता है और युवाओं को अधिक नींद की जरूरत पड़ती है। फिनलैंड में 21000 जुड़वाँ लोगों की 22 वर्ष तक स्टडी में पाया गया, नियमित रूप से प्रतिदिन सात घंटे से कम सोने वाले लोगों के आठ घंटे सोने

वालों की तुलना में 21 से 26 प्रतिशत अधिक मरने की संभावना रही।

किशोरों के लिए साढ़े आठ घंटे-विशेषज्ञों का कहना है, किशोरों को स्वस्थ रहने के लिए साढ़े आठ घंटे की नींद जरूरी है। कई देशों में लोगों की नींद कम होती जा रही है। अमेरिकी एक सदी पहले की तुलना में अब हर रात दो घंटे कम सोते हैं। काम के बढ़ते घंटों, टेक्नोलॉजी, सोशल मीडिया, लगातार चलने वाली खबरों ने नींद में कटौती की है। अमेरिकी बीमारी नियंत्रण केन्द्रों के अनुसार एक तिहाई अमेरिकी वयस्क सात घंटे प्रतिदिन से कम सोते हैं। केवल 15 से 30 प्रतिशत अमेरिकी किशोर साढ़े आठ घंटे की नींद लेते हैं।

तनाव से बुढ़ापा जल्द आता है-वैज्ञानिक यह भी जानते हैं, तनाव बुढ़ापे का पास बुलाने वाला अत्यंत प्रभावी कारण है। जिस व्यक्ति को पर्याप्त नींद नहीं मिलती है, वह तनावग्रस्त रहता है। वह उन काल्पनिक खतरों पर अति प्रतिक्रिया दिखाता है जिनसे वास्तव में कोई नुकसान नहीं होता है। जिस तरह आधी रात में भीषण शोर, समय सीमा में काम करने के दबाव और उन्मत जानवर को देखकर ब्लड प्रेशर बढ़ने लगता है, साँस का अस्त-व्यस्त हो जाती है और दिल तेजी से धड़कने लगता है, ठीक ऐसा ही हाल उस व्यक्ति का रहता है जिसकी नींद पूरी नहीं होती है।

क्या नुकसान है, अपर्याप्त नींद के-नींद अस्त-व्यस्त होने से शरीर के सभी सिस्टम कमजोर हो जाते है, दिल की बीमारियों, डायबिटीज, हाई ब्लड प्रेशर और मोटापे का खतरा, अवसाद, मतिभ्रम सहित कई मानसिक बीमारियों की आंशका।

और भी गंभीर समस्याएँ-शरीर में स्थायी जलन, सूजन (इनफ्लेमेशन) के कारण कुछ तरह के कैंसर, संवेदनाओं में गिरावट, दिल की बीमारियों, टाइप-2 डायबिटीज और स्थायी दर्द जैसी समस्याएँ हो सकती हैं। इनफ्लेमेशन चोट या बैक्टीरिया, वायरस के खिलाफ शरीर का नैसर्गिक बचाव सिस्टम है। इसके स्थायी होने से शरीर में गड़बड़ी प्रारंभ होती है। स्थायी इनफ्लेमेशन के प्रमुख कारणों में पर्याप्त नींद न आना भी शामिल है।

शानदार विचारों के लिए ये उपाय कारगर

क्या कभी आपके साथ ऐसा हुआ है कि कोई शानदार विचार शॉवर लेने या

वर्कआउट के समय आया हो? कई बार ऐसे पल तब आते हैं, जब हमारा मन शांत हो और चेतना स्थिर और आराम में हो। आप मौन और एकांत का माहौल बनाकर इन क्षणों को हासिल कर सकते हैं। इस बात से कोई फर्क नहीं पड़ता कि आप कितना व्यस्त हैं। आपको कोशिश बस एकांत का समय निकालने की करनी चाहिए। इसके लिए खाली कॉन्फ्रेंस रूम में जाये या अकेले वॉक पर। जब आप शांत जगह पर पहुँच जाये, तो इस बात पर ध्यान न दे कि आप के आसपास क्या चल रहा है और अपने भीतर के विचारों पर ध्यान केंद्रित करें। यह विचार भटकेंगे नहीं और आप अपने दिमाग को अगले शानदार विचार के लिए तैयार कर सकेंगे।

शिक्षा कैसे बने अन्त्योदयी-सर्वोदयी!?

(चाल : आत्मशक्ति....., तुम दिल की.....)

मानव नहीं हैं केवल भौतिक, इससे परे भी नहीं हैं आर्थिक।
इससे परे भी हैं देह सहित, इन्द्रिय-मन से वे संयुक्त।। (1)

इससे परे भी हैं आत्मा सहित, अतएव मानवों की सीमा अनंत।
व्यक्ति-समाज व राजनैतिक, इससे परे भी नैतिक-आध्यात्मिक।। (2)

अतएव उक्त सभी विकास हेतु, सर्वोदय शिक्षा हो मानव हेतु।
अन्यथा विकास न होगा संतुलित, विभिन्न समस्याएँ होगी उत्पन्न।। (3)

भाषा-गणित व विज्ञान-कानून, राजनीति-संविधान-वाणिज्य ज्ञान।
इससे परे भी चाहिए ज्ञान, नैतिक से लेकर आध्यात्मिक ज्ञान।। (4)

जीवन हेतु यथा भोजन-पानी परे, प्राणवायु की आवश्यकता महत्वपूर्ण।
तथाहि नैतिक से ले आत्मिक ज्ञान, भाषा आदि से श्रेष्ठतम ज्ञान।। (5)

नैतिक से ले आत्मिक ज्ञान बिना, देह की स्थिति यथा प्राण बिना।
इसके साक्ष्य है मानव इतिहास, देश-विदेशों के पुराण-इतिहास
/(प्राचीन से लेकर वर्तमान तक)।। (6)

रावण-कंस-जरासंध-चंगेज खाँ, रोमन से ले हिटलर तानाशाह।
आतंकवाद से ले आक्रमण-युद्ध, भ्रष्टाचार से ले मिलावट तक।। (7)

फैशन-व्यसन व उद्दण्ड-उत्श्रृंखल, गुण्डा-गर्दी व शोषण बलात्कार।

वाद-विवाद व परनिन्दा अपमान, होते हैं नैतिक-आध्यात्मिक बिन।। (8)

परम आध्यात्मिक विकास हेतु, चक्री भी राज्य छोड़ बनते साधु।

तप-त्याग व ज्ञान-ध्यान से, अनंत सुख पाते आत्मविशुद्धि/(आत्मविकास) से।। (9)

इससे शिक्षा व प्रेरणा लेकर, विश्व मानव करे शिक्षा का प्रचार।

जिससे हो अंत्योदय व सर्वोदय, 'कनक' का लक्ष्य आत्मिक सर्वोदय।। (10)

सीपुर, दिनांक 09.02.2017, रात्रि 8.39

यह कविता ''दुनियाभर के शिक्षाविद् ढूँढ़ रहे हैं नये तरीके'' से भी प्रेरित है। शिक्षा संबंधी विशेष परिज्ञान हेतु कविकृत 1. ''सर्वोदय शिक्षा मनोविज्ञान'', 2. ''शिक्षा संस्कृति नारी गरिमा'', 3. ''सर्वोदय शिक्षा गीताञ्जली'' आदि गद्य-पद्यमय कृतियों का अध्ययन करें।

हमारी महत्वाकांक्षा तो खुद पर शासन करने की होनी चाहिए। यही हमारा सच्चा राज्य है। अधिक जानना, अधिक करना और अधिक होना ही सच्ची तरक्की है। -ऑस्कर वाइल्ड

दूसरों का नेतृत्व करने के पहले खुद का नेतृत्व करे

-विकास जैन

आजकल नेतृत्व कौशल और बोल-व्यवहार की कुशलता यानी सॉफ्ट स्किल की बड़ी चर्चा होती है और व्यक्तित्व विकास कार्यक्रमों के केंद्र में भी यही दो बातें होती हैं। किन्तु दूसरों को नेतृत्व देने के पहले व्यक्ति को अपने स्व को पहचानना, जानना और समझना बहुत जरूरी है। डूबकर काम करे तो व्यवहार का कौशल अपने आप विकसित हो जाता है।

आजकल चाहे शिक्षण संस्थान हो या कॉर्पोरेट घराने नेतृत्व कौशल विकसित करने की बात की जाती है। युवाओं में नेतृत्व कौशल की बात करने के पहले दो बातें समझनी होगी। एक, जमीनी सच्चाई यह है कि शिक्षण संस्थानों के विद्यार्थियों में 'स्व' का ज्ञान नहीं है। इसी कारण उनमें आत्मविश्वास की बहुत कमी देखी जाती है और ये कॉर्पोरेट में जाकर भी अपनी समस्याओं में उलझे रहते हैं। दूसरी बात नेतृत्व विकास कार्यक्रमों में दूसरों को लीड करने की बात कही जाती है पर सच तो यह है कि उनमें से ज्यादातर लोग अपनी समस्याओं में ही डूबे रहते हैं। वे डर पर विजय की बात तो

करते हैं पर उनमें से ज्यादातर लोग खुद की नौकरी चले जाने के डर और पारिवारिक समस्याओं में उलझे होते हैं। कहना न होगा कि दूसरों को नेतृत्व देने के पहले खुद को नेतृत्व दें। इसमें तीन बातें है-स्व को जानना, स्व को पहचानना और स्व को समझना।

यह करते हुए हम 'स्व' को लीड करना सिखाते हैं। यह करना बहुत आसान है, क्योंकि हम सभी में जन्म से ही यह सब ज्ञान होता है। बस किन्हीं कारणों से यह ज्ञान दब जाता है। इस तरीके से वह छिपा हुआ ज्ञान जागृत होता है। जब हम 'स्व' को समझकर नेतृत्व करने लगते हैं तो दूसरों को समझकर नेतृत्व करना आसान हो जाता है, क्योंकि हमारा 'स्व' और उनका 'स्व' तो एक ही है। स्वः को जानने के लिए एक आसान-सी चीज कर सकते हैं। अगर आप अपने हाथ में पेन को पकड़े और यह सोचे कि, 'मैंने पेन को पकड़ा है' या फिर 'इस हाथ ने पेन को पकड़ा है।' इसी सोच के साथ कुछ समय बिताये। जब हम इस प्रश्न को बार-बार सोचते हैं तो हमें एक अजीब-सा आभास होता है कि क्या यह शरीर और मैं अलग-अलग हैं। यही आभास स्वः को जानने की पहली सीढ़ी है। इसके बाद जब हम दिनभर में आने वाले विचारों पर ध्यान देंगे तो धीरे-धीरे हम स्वः को अधिक पहचानने लगेंगे और फिर स्व को समझना आसान हो जायेगा। हम जब किसी काम को करते या पढ़ते हैं तो उससे हमारा हुनर विकसित होता है और यह काम जब हम मन लगाकर करते है तो सॉफ्ट स्किल यानी व्यवहार कुशलता अपने आप ही विकसित होने लगती है।

उदाहरण के लिए चाहे बड़े बिजनेसमैन हो या गृहणियाँ वे अपना काम इतने मन से करते हैं कि काम में डूबकर खुद के भीतर उतर जाते हैं, जिससे उनके ज्यादातर सॉफ्ट स्किल अपने आप विकसित हो जाते है। यही सच्ची शिक्षा है न कि कुछ किताबों को पढ़कर (रटकर) मार्क्स लाना और डिग्री ले लेना। एक और उदाहरण से समझते हैं। कोई ऐसी चीज याद कीजिये, जिसमें आप बहुत अच्छे हैं। यह कोई भी विषय हो सकता है। ऐसे विषय के बारे में सोचने मात्र से जो आनंद मिलता है वही 'स्व' की अनुभूति में समाया आत्मविश्वास है।

भारतीय सभ्यता में भी अलग-अलग समय पर महान् लोगों ने 'स्व' को जानने की बात कही है। आशा करता हूँ कि आप अभी से अपने 'स्व' को जानकर, पहचानकर और समझकर लीड करना शुरू करेंगे।

स्वामी विवेकानंद के अनुसार-'मनुष्य में पूर्व से विद्यमान संपूर्णताओं को

बाहर लाना ही शिक्षा है।' (Education is the manifestation of perfections already is man).

रवीन्द्रनाथ टैगोर के अनुसार-'सर्वोच्च शिक्षा वह है जो केवल सूचनाएँ ही नहीं देती अपितु हमारे जीवन और संपूर्ण सृष्टि में तादात्म्य स्थापित करती है।' (The highest education is that which does not merely give us information but makes our life in harmany with all existance).

महात्मा गाँधी के अनुसार-'शिक्षा से मेरा तात्पर्य बालक एवं मनुष्य में शरीर, मस्तिष्क एवं आत्मा के सर्वोत्तम रूप की अभिव्यक्ति है।' (By education I mean an all-round drawing out of the best in child and man's body, mind and spirit').

गीता के अनुसार-'सा विद्या या विमुक्तये' अर्थात् शिक्षा वह है जो मुक्ति प्रदान करें।

अरस्तु के अनुसार-'स्वस्थ शरीर में स्वस्थ मस्तिष्क का सृजन ही शिक्षा है।' (Education is the creation of a sound mind in a sound body).

जान डीवी के अनुसार-'शिक्षा दर्शन का गतिशील पक्ष है।' (Education is the dyanamic process of philosophy).

डर्माबिल के अनुसार-'शिक्षा के व्यापक अर्थ में वे सभी प्रभाव आते हैं जो व्यक्ति को जन्म से लेकर मृत्यु पर्यन्त तक प्रभावित करते हैं।' (Education, in it's widest sense includes all the influences which act upon an individual during his passage from the cradle to the grave).

फ्रेंडसन-'आधुनिक शिक्षा का संबंध व्यक्ति और समाज दोनों के कल्याण से है।' (Modern education is concerned with the welfare of both the individual and society).

यूलिच-'शिक्षा व्यक्तियों की व्यक्तियों के द्वारा और व्यक्तियों के लिए की जाने वाली प्रक्रिया है। यह सामाजिक प्रक्रिया है और इसको समाज के संपूर्ण स्वरूप और कार्यों से पृथक् नहीं किया जा सकता है।' (Education is a process performed of the people, by the people, for the people. It is a social process, and it cannot be separated from the total character and tusks of society).

भर्तृहरि-

विद्या नाम नरस्य रूपमाधिकं प्रच्छन्नगुप्तं धनम्।

विद्या भोगकरी यशः सुखकरी विद्या गुरुणां गुरुः।

विद्या बन्धुजने विदेशगमने विद्या परा देवता।

विद्या राजसु पूजते न च धनं विद्याविहीनः पशु। (20)

विद्या ही मनुष्य का सौंदर्य और गुप्त धन है। विद्या ही भोग, यश और सुख को देने वाली है। विद्या ही गुरुओं का भी गुरु है। परदेश में विद्या ही बंधु है। विद्या परा (श्रेष्ठ) देवता है। विद्या ही राजाओं में पूजी जाती है धन नहीं, अतः विद्याहीन नर निरा पशु है।

भगवान महावीर-

जेण तच्चं विबुज्झेज्ज जेण चित्त णिरुज्झदि।

जेण अत्ता विसुज्झेज्ज तं णाणं जिणसासणे। (267) मूलाचार, पृ.नं.222

जिससे तत्त्व का बोध होता है, जिससे मन का निरोध होता है, जिससे आत्मा शुद्ध होता है जिनशासन में उसका नाम ज्ञान है।

जेण रागा विरज्जेज्ज जेण सेएसु रज्जदि।

जेण मित्तीं पभावेज्ज तं णाणं जिणसासणे। (268)

जिसके द्वारा जीव राग से विरक्त होता है, जिसके द्वारा मोक्ष में राग करता है, जिसके द्वारा मैत्री को भावित करता है महावीर का शासन (भगवान् की शिक्षा) में वह ज्ञान (विद्या) कहा गया है।

महात्मा बुद्ध-

सब्बपापस्स अकरणं कुसलस्स उपसम्पदा।

सचित्त परिसोदपनं एतं बुद्धान सासनं। (183) धम्मपद, पृ.सं.60

सभी पापों को न करना, पुण्यों का संचय करना, अपने चित्त को परिशुद्ध करना-यह बुद्धों की शिक्षा है।

अनुपवादो अनूपद्यातो पतिमोक्खे च संवरो।

मततञ्युजुत्ता च भत्तस्मिं पन्तञ्च सयसासनं।

अधिचित्ते चायोग एतद् बुद्धानां शासनम्। (185)

निन्दा न करना, घात न करना, प्रातिमोक्ष में संयम रखना, भोजन में मात्रा

जानना, एकांतवास, चित्त का योग में लगाना-यह बुद्धों की शिक्षा है।

नारायण श्री कृष्ण-

ज्ञानने तु तदज्ञान येषा नाशितमात्मनः।

तेषामादित्यवज्ज्ञानं प्रकाशयति तत्परम्।। (16) अनासक्ति योग, पृ.सं.66

परन्तु जिनके अज्ञान का आत्म-ज्ञान द्वारा नाश हो गया है, उनका वह सूर्य के समान, प्रकाशमय ज्ञान परमतत्त्व का दर्शन कराता है।

तद्बुद्धयस्तदात्मान स्तन्निष्ठास्तत्परायणाः।

गच्छन्तपुनरावृत्तिं ज्ञाननिर्धूत काल्मषः।। (17)

ज्ञान द्वारा जिनके पाप धुल गये हैं, वे ईश्वर का ध्यान धरने वाले, तन्मय हुए, उसमें स्थिर रहने वाले, उसी को सर्वस्व मानने वाले लोग मोक्ष पाते हैं।

विद्याविनयसंपन्ने ब्राह्मणे गवि हस्तिनि।

शुनि चैव श्वपाके च पण्डिताः समदर्शिनः।। (18)

विद्वान् और विनयवान् ब्राह्मण में, गाय में, हाथी में, कुत्ते में और कुत्ते को खाने वाले मनुष्य में ज्ञानी समदृष्टि रखते हैं।

उपर्युक्त समस्त वर्णन से यह सिद्ध होता है कि केवल अक्षर का (साक्षरता) ज्ञान कर लेना, हस्ताक्षर कर लेना, पुस्तकों का अध्ययन कर लेना या धन कमाने के लिए नौकरी करना, व्यवसाय करना शिक्षा का संपूर्ण उद्देश्य नहीं है। शिक्षा का संक्षिप्ततः संपूर्ण उद्देश्य व्यक्ति एवं समाज का सर्वांगीण एवं सार्वभौम विकास है। इसलिए शिक्षा के उद्देश्य को हम दो वर्ग में बाँट सकते हैं। (1) व्यक्ति संबंधी उद्देश्य, (2) समाज संबंधी उद्देश्य।

सब हाई प्रोफाइल फँसने वाले भी, फँसाने वाले भी

चार वकीलों, दो फर्जी पत्रकारों, एनआरआई युवती सहित 30 लोगों की गैंग ने 47 रसूखदारों से 20 करोड़ वसूले, सरगना गोवा से पकड़ा

गैंगस्टर आनंदपाल की तलाश में थी एसओजी, हत्थे चढ़ी गैंग

रसूखदार लोगों को दुष्कर्म के केस में फँसाकर करोड़ों रुपये वसूलने वाली

हाई प्रोफाइल गैंग का मुख्य सरगना नवीन देवानी भी गुरुवार को एसओजी ने गोवा से पकड़ लिया। वह कॉलवा बीच पर मौज-मस्ती कर रहा था। इससे एक दिन पहले गिरफ्तार नवीन के साथी सरगना वकील नितेशबंधु को एसओजी ने रिमांड पर लिया है। एसओजी दोनों को आमने-सामने बैठाकर पूछताछ करेगी। नवीन इस मामले का खुलासा होने के बाद 24 दिसंबर से ही फरार चल रहा था। पूछताछ में आरोपी नितेशबंधु ने 30 वारदातें करना कबूल किया है। गैंग ने इनसे करोड़ों रुपये वसूले। नितेश को करीब 50 लाख रुपये मिले। गौरतलब है कि गैंग में शामिल युवतियाँ रसूखदारों से दोस्ती करती थीं। क्लिपिंग बनाकर दुष्कर्म मामले में फँसाने की धमकी दी जाती थी। गैंग के अन्य सदस्य पैसे लेकर समझौता कराते थे।

डॉक्टर, बिल्डर, ज्वैलर जैसे बड़े लोगों को फाँसा–7 प्रॉपर्टी व्यवसायी व बिल्डर, 4 डॉक्टर, 5 होटल संचालक, 5 ज्वैलर, 1 ठेकेदार, 1 रिसोर्ट मालिक, 1 प्रोफेसर इनके अलावा अन्य रसूखदारों से 20 करोड़ रुपये से ज्यादा वसूले।

11 प्रकरण दर्ज किये है एसओजी ने अब तक, 15 लोगों ने एसओजी को आपबीती सुनाई है, 18 से ज्यादा लोगों ने संपर्क ही नहीं किया है।

गिरोह के 21 आरोपी गिरफ्तार, 9 अब भी फरार–4 वकील मुख्य सरगना नवीन देवानी, दूसरा सरगना नितेश बंधु, संदीप गुप्ता, अखिलेश मिश्रा। 1 एनआरआई युवती रवनीत कौर, 3 अन्य युवतियाँ रीना शुक्ला, शिखा तिवाड़ी, कल्पना उर्फ रिया। 2 फर्जी पत्रकार-विजय व अक्षत, 1 हिस्ट्रीशीटर-मनीष बंधु शर्मा। राकेश यादव, पुष्पेन्द्र शर्मा, आनंद, कैलाश, विमल, हरिकिशन, शिंभु सिंह, नीरज मीणा, अनिल मीणा, प्रेमशंकर, संदीप गुप्ता, किशोरी लाल पकड़े। 4 युवतियों सहित 9 फरार हैं।

एसओजी ने यह काम किया–एसओजी को गैंगस्टर आनंदपाल की तलाश थी। फोन सर्विलांस पर थे। आनंदपाल का साथी आनंद शांडिल्य पकड़ा गया। खुलासा हुआ कि ऐसा गैंग भी काम कर रहा है, जो हाई प्रोफोइल लोगों को दुष्कर्म मामले में फँसाकर वसूली का धंध कर रही है। इसके बाद पिछले 24 दिसंबर को इस मामले का खुलासा हुआ। सबसे पहले फर्जी पत्रकार विजय व अक्षत पकड़ में आये। इसके बाद डेढ़ माह में 21 लोग पकड़े गये। गिरोह का खुलासा करने में एसओजी के आईजी दिनेश एमएन, एएसपी करन शर्मा व ललित शर्मा की अहम भूमिका रही।

अब जिम्मेदारी वकीलों के संगठनों पर-इस हाई प्रोफाइल गैंग में चार वकील पकड़े जा चुके हैं। जयपुर बार एसोसिएशन नवीन व नितेश की सदस्यता रद्द कर चुकी है। अब इनकी प्रेक्टिस रद्द करने की माँग उठ रही है। यह निर्णय बार कौंसिल को करना है। लेकिन अब तक कोई फैसला नहीं हुआ है।

नितेश बंधु सहित कई आरोपियों पर अलग-अलग अपराधों में 10 से 15 मामले दर्ज हैं। इनकी एसओजी व पुलिस की ओर से हिस्ट्रीशीट भी खोलने की तैयारी है।

दुनियाभर के शिक्षाविद ढूँढ़ रहे हैं नये तरीके
फ्यूचर एजुकेशन बना उच्च शिक्षण संस्थानों के लिए सबसे बड़ी चुनौती
सम्मेलन में शिक्षा में संतुलन बनाने पर जोर

राजनीति घटनाक्रमों की वजह से दुनियाभर में उच्च शिक्षा के क्षेत्र में बदलाव आ रहा है। इसका असर उच्च शिक्षण संस्थानों पर पड़ रहा है। शिक्षा में भविष्य की इन्हीं चुनौतियों के मद्देनजर कुछ दिनों पहले वाशिंगटन में 'उच्च शिक्षा के क्षेत्र में बदलते परिदृश्य' विषय पर एक सम्मेलन का आयोजन किया गया। इसमें भारत, जापान, मिस्त्र, क्रोशिया, इजराइल, जमैका और चीन के शिक्षाविदों ने सक्रिय भूमिका निभाई।

उच्च शिक्षा के क्षेत्र में हर स्तर पर तेजी से बदलाव जारी है। अनपेक्षित राजनीतिक घटनाक्रमों की वजह से दुनियाभर में इसे और गति मिली है। इसका सीधा असर उच्च शिक्षा के क्षेत्र में संचालित शिक्षण संस्थाओं पर पड़ रहा है।

शिक्षा के क्षेत्र में आने वाली भविष्य की इन्हीं चुनौतियों के मद्देनजर विश्वभर के शिक्षाविद अमरीका वाशिंगटन में जुटे और इस पर बात की। इस सेमिनार में कई बातें निकलकर आई, जिनमें प्रमुख रूप से यह पाया गया कि फ्यूचर एजुकेशन के नाम पर हम ज्यादा तकनीकी होते जा रहे है। इसमें वैल्यूज का कोई स्थान नहीं है। इसलिए मूल्यों वाली परंपरागत शिक्षा पर भी जोर देना होगा, ताकि इंटरनेट, फेसबुक व स्मार्टफोंस वाले युवाओं को यह पता चल सके कि दुनिया सिर्फ इतने में ही नहीं

सिमटी है।

इतना ही नहीं इस बैठक में यह भी निकलकर सामने आया कि अगर नई पीढ़ी के युवाओं को उच्च शिक्षा के क्षेत्र में अहम जिम्मेदारी दी जाये तो वे फ्यूचर एजुकेशन को पूरी तरह से बदल देने की क्षमता रखते हैं। कुछ देशों में जारी इन प्रयासों का यहाँ मूल्यांकन कर वे इस निष्कर्ष पर पहुँचे। वहाँ के निष्कर्षों में कुछ महत्वपूर्ण तथ्य इस प्रकार है।

उच्च शिक्षा को लेकर वाशिंगटन में आयोजित सेमिनार में 30 देशों के 400 से ज्यादा शिक्षाविद व प्रबंधक शामिल हुए।

रैंकिंग से बेहतर है तुलनात्मक विकास–रैंकिंग की अलग अहमियत है। पर शिक्षण संस्थानों की गुणवत्ता व विश्वसनीयता बरकरार रखने के लिए तुलनात्मक विकास पर जोर देना भी जरूरी है। इससे नवाचार के साथ-साथ ज्ञान-विज्ञान के नये आयाम उभरकर सामने आते हैं।

शैक्षिक प्रासंगिकता जरूरी–शिक्षण संस्थानों को शैक्षणिक प्रासंगिकता को बनाये रखना होगा। आगामी वर्षों में उच्चतर शिक्षण संस्थान उसी स्थिति में अपनी अहमियत बनाये रख सकते है जब गुणवत्ता, रैंकिंग, तकनीक, प्रोफेशनलिटी, स्पेस साइंस, संचार व अन्य नवाचार जैसे विषयों को अपने पाठ्यक्रमों में अपनाने की क्षमता रखते हों।

मकसद से भटके संस्थान–सेमिनार में इंटरनेशनल काउंसिल ऑफ हायर एजुकेशन एक्रिडेशन की अध्यक्ष जूडिथ ईटन ने कहा कि अधिकतर संस्थान चुनौतियों से पार पाने के प्रयास में मूल लक्ष्य से भटक गये है। कई तरह की चुनौतियों से संस्थान जूझ रहे हैं। इनमें राजनीतिक, अंतरिक्ष, नीतिगत, अंतरिक्ष विज्ञान व अन्य सभी तरह के पहलू शामिल है।

युवा पीढ़ी में है संभावना–हार्वर्ड यूनिवर्सिटी की प्रोफेसर मंझा क्लेमेनिक ने कहा कि जहाँ भी नई पीढ़ी को उच्च शिक्षा में शामिल किया गया उसके असाधारण परिणाम सामने आये। इससे साफ है कि अगर युवाओं को अर्थपूर्ण भूमिका में काम करने का अवसर मिलेगा तो शिक्षा का स्तर सुधरेगा।

तो बढ़ेगी शिक्षा की गुणवत्ता–शिक्षाविदों ने कहा कि तकनीक के चक्कर में मूल्य आधारित परंपरागत शिक्षा पीछे छूट गई, जबकि जरूरत दोनों के बीच संतुलन

रखने की है, तभी शिक्षा की गुणवत्ता बढ़ेगी।

और कोई विकल्प नहीं–वर्ल्ड बैंक शिक्षा विभाग की पूर्व समन्वयक जमील सालमी ने बताया कि यूएन का मूल लक्ष्य शिक्षा के क्षेत्र में स्थायी और विकासपरक एजेंडा को बढ़ावा देना है। इसलिए दुनिया के देशों को चाहिए कि शिक्षा के क्षेत्र संभावित विकल्पों को पाठ्यक्रमों में शामिल करें। नॉन डिग्री क्रेडेंशियल्स और शिक्षण की नई विधाओं पर जोर दें।

बेटा मोड में आने की जरूरत–बेटा मोड (तकनीक नवीनता, सूचनाओं का विस्फोट, प्रबंधन के तरीके) ने उच्च शिक्षा के मायने बदल दिये हैं। यही कारण है कि आज के दौर के बच्चे बेटा मोड को ही फॉलो करते हैं। हमें उन्हीं विषयों को सीखने-सिखाने की जरूरत है। इसलिए सभी देशों की सरकारों और शिक्षाविदों को चाहिए कि वे 2015 में तैयार नीतियों के अनुरूप बदलाव पर जोर दें। इसमें यह सुनिश्चित करे कि यह बदलाव गुणवतापूर्ण और शैक्षिक संस्थानों की साख को बनाये रखने वाला हो।

छात्रों को बनाये सहभागी–फ्यूचर एजुकेशन को विस्तार देने के लिए छात्रों को सहभागी बनाना जरूरी है। उन्हें नवीनताओं के प्रति गतिशील कर सक्रिय भूमिका के लिए तैयार करना होगा। अंतर्राष्ट्रीय सहयोग के तहत फैकल्टी एक्सचेंज प्रोग्राम, ऑनलाइन, वेब-बेस्ड शिक्षा के साथ शैक्षिण गुणवत्ता के लिए एक समान विषय-वस्तु तैयार करने होंगे। सभी को अपने विचारों, सफलताओं व विफलताओं एवं नवीनतम मुद्दों पर सूचनाओं का आदान-प्रदान करना होगा। तभी फ्यूचर एजूकेशन की चुनौतियों से पार पा सकते हैं।

भारत का ढाँचागत संरचना पर जोर–भारत सरकार की नई शिक्षा नीति के तहत वर्ल्ड क्लास एजुकेशन सिस्टम की दिशा में आगे बढ़ने पर जोर है। इस लक्ष्य को हासिल करने के लिए टू-वे एप्रोच के तहत जहाँ विश्वभर के देशों में जारी नवीनतम एजुकेशन मॉडल्स को विश्वविद्यालयी शिक्षा पाठ्यक्रमों में शामिल करने को कहा गया है वहीं सरकार, शिक्षाविद, प्रोफेशनल और युवाओं की भूमिका को सुनिश्चित करने की बातें भी शामिल है। इसके लिए ढाँचागत संरचनाओं व भौतिक संस्थान मुहैया कराने का मुद्दा प्राथमिकता सूची में सबसे ऊपर है।

उच्च शिक्षा में अंकों की मारामारी घातक

सुप्रीम कोर्ट ने कुकुरमुत्ते की तरह पनप रहे कोचिंग संस्थानों पर लगाम लगाने के निर्देश दिये हैं। यूँ तो समूची उच्च शिक्षा व्यवस्था ही डिग्रियाँ बाँटने वाली बनकर रह गई हैं। जरूरत इस बात की है कि विवेक जागृत करने वाली शिक्षा दी जाये।

सुप्रीम कोर्ट ने देश में कोचिंग संस्थाओं की अनियंत्रित वृद्धि पर प्रभावी अंकुश की आवश्यकता जताते हुए एक मैकेनिज्म पर जोर दिया है। पिछले वर्षों में आईआईटी, आईआईएम व मेडिकल में दाखिलों की तैयारी के लिए कोचिंग संस्थानों की बाढ़ सी आ गई है। अधिकांश कोचिंग संस्थान कमजोर और अति सामान्य छात्रों को भी भविष्य के प्रति अप्राप्य सपने दिखाकर गुमराह करने में लगे हैं। उच्च शिक्षा व तकनीक को नहीं समझ पाने पर ये छात्र तनाव और डिप्रेशन के शिकार हो जाते हैं। सुप्रीम कोर्ट ने जो निर्देश दिये है उसके पहले ही सरकारें शिक्षा के व्यावसायीकरण पर रोक लगाने के प्रयास करती तो ज्यादा बेहतर होता। प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी ने भी मन की बात में छात्रों से कहा है कि वे अंकों की मारामारी पर ध्यान देने की बजाय खुद को उचित सोच और विचारों से जोड़ें। दिल्ली हाईकोर्ट ने भी यूजीसी को निर्देश दिये हैं कि सभी विश्वविद्यालयों में चार माह के भीतर लोकपाल की नियुक्ति की जाये ताकि विश्वविद्यालयों में शिकायतों का निराकरण किया जा सके। दुनिया के छोटे से लेकर बड़े विश्वविद्यालयों में लगातार देश-दुनिया की समस्याओं पर शोध होते रहते हैं। हमारे देश में अभी इस दिशा में काफी प्रयास करना है। प्रधानमंत्री ने भी आह्वान किया है कि देश के विश्वविद्यालयों को दुनिया के पहले सौ विश्वविद्यालयों में स्थान बनाना चाहिए। यूँ तो अब प्रयास यह किया जा रहा है कि देश के आईटी संस्थानों के छात्र गाँवों की समस्याओं का अध्ययन कर उन्हें आर्थिक और सामाजिक रूप से सशक्त बनाने का काम करेंगे। दरअसल, बच्चों पर परीक्षाओं का दबाव कम करने की जरूरत है। इसके लिए परीक्षा लेने वाली अलग संस्था बनाये जाने की जरूरत है। हाल ही चीन में बच्चों को परीक्षा के तनाव से मुक्त रखने व हीनता से बचाने के लिए 'अकों का बैंक' खोला गया है। यदि किसी विषय में कोई छात्र तीन-चार अंकों से फेल हो रहा है तो उसे बैंक से ये अंक उधार दे दिये जाते हैं जिससे वह फेल होने से बच जाता है। आगे की परीक्षा में विद्यार्थी उस विषय में जो अंक प्राप्त करता है

उसमें से उधार के अंक कम कर दिये जाते हैं। इससे बालक आगामी परीक्षाओं में अधिक अंक पाने की प्रेरणा भी पाता है। हमारी आज की शिक्षा केवल सूचनाओं के बल पर डिग्रियों को जमा करने वाली बनकर रह गई है। जबकि शिक्षा का सही मायना वही है जो विवेक को जागृत करने वाली, भाषा को परिमार्जित करने वाली और देश के प्रति आदर और सम्मान पैदा करने वाली हो। सुकरात ने ठीक ही कहा था कि 'मैं किसी एक अध्यापक और एक राजनेता से बात कर किसी देश का भविष्य बता सकता हूँ।'

बच्चों को वही पढ़ाये जो रुचि का हो

स्कूली शिक्षा में सतत मूल्यांकन प्रणाली ठीक है या फिर सालाना परीक्षा प्रणाली। यह तर्क-वितर्क व बहस का विषय हो सकता है। सही मायने में बच्चों को तनाव रहित शिक्षा देना हमारी प्राथमिकता होना चाहिए। पाठ्यक्रम भी ऐसे हो जो हर बच्चे को उसकी मानसिक क्षमता के अनुरूप ज्ञान देकर उसका सर्वांगीण विकास कर सके।

जब तक परीक्षा के बाद बनने वाली मेरिट से सामाजिक प्रतिष्ठा की गहराई से जोड़कर देखा जाता रहेगा तब तक अभिभावक अपनी अधूरी महत्वाकांक्षाएँ का बोझ इस तनाव के रूप में बच्चों पर डालते रहेंगे।

पाठ्यक्रम को मनोविज्ञान से जोड़ने का अर्थ यह है कि आज स्वीकृत मानव ज्ञान बच्चे के अनुभव का हिस्सा हो और शिक्षक यह देखे कि यह सब बच्चे के लिए उपयोगी भी साबित हो।

इन दिनों एक बार फिर स्कूली शिक्षा में लागू किये गये कॉन्टिन्युअस एंड कॉम्प्रिहेंसिव इवेल्यूशन (सीसीई) प्रणाली के तहत पढ़ाई की तुलना सालाना परीक्षा प्रणाली से की जा रही है। विशेष तौर पर दसवीं कक्षा की सालाना परीक्षा की अनिवार्यता को लेकर तर्क-वितर्क चल रहे हैं। कुछ का मानना है कि दसवीं की सालाना परीक्षा अनिवार्य करने का विशेष लाभ मिलने की कल्पना तो दूर की बात है, यह बच्चों में तनाव बढ़ा देगी। इनका यह भी मानना है कि यदि प्रारंभिक कक्षाओं में सीसीई प्रणाली हटाकर सालाना परीक्षा प्रणाली लागू की जाती है तो हर बच्चे को शिक्षा के अधिकार के तहत मिलने वाली बाल केंद्रित प्रारंभिक शिक्षा में परेशानी आयेगी।

परीक्षा प्रणाली का एक दोष यह भी है कि यह सीखने की ललक को हतोत्साहित करती है। यह समझ के स्तर को गिराती है और सीखने के आनंद को तो जड़ से ही समाप्त कर देती है। लेकिन, जो लोग सीसीई प्रणाली की बजाय सालाना परीक्षा प्रणाली लागू करना चाहते हैं, उनके इस तर्क को खारिज नहीं कर सकते कि सालाना परीक्षा प्रणाली के बिना बच्चे अगली कक्षा में बिना तैयारी के या फिर आधे-अधूरी तैयारी से ही पहुँचते हैं। बिना तैयारी के अगली कक्षा में पहुँचने वालों के लिए सालाना परीक्षा नियंत्रण का काम करती है। यह पूरी तरह कारगर तो नहीं लेकिन सीमित उपाय का काम तो करती ही है। हालाँकि इस बात को खारिज नहीं कर सकते कि परीक्षा बच्चों के लिए तनाव उत्पन्न करती है। यह भी ध्यान रखना होगा कि परीक्षा, तनाव का कारण न बने और बच्चों को आत्महत्या जैसे कदम उठाने को मजबूर न होना पड़े। हाँ, अच्छी तरह से सीखने के लिए पढ़ाई के प्रति गंभीर होना तो आवश्यक है। यदि सीसीई प्रणाली लागू करने के लिए अध्यापकों का उचित प्रशिक्षण लागू करने के लिए अध्यापकों का उचित प्रशिक्षण उपाय है तो तनाव रहित परीक्षा के लिए भी यह अच्छा उपाय समझा जा सकता है। वास्तव में यह तनाव वाला तर्क भावनाओं तक ही केंद्रित रहता है। वह पढ़ाई की गुणवत्ता और गहराई से सीखने के बारे में कुछ नहीं कहता। कुछ लोग यह तर्क भी दे सकते हैं कि तनाव की परिस्थिति परीक्षा के कारण नहीं बल्कि यह बच्चे पर परिवार के दबाव और सामाजिक प्रतिस्पर्धा की देन है। जब तक परीक्षा के बाद बनने वाली मेरिट से सामाजिक प्रतिष्ठा की गहराई से जोड़कर देखा जाता रहेगा तब तक अभिभावक अपनी अधूरी महत्वाकांक्षाएँ का बोझ इस तनाव के रूप में बच्चों पर डालते रहेंगे। जहाँ तक इस तर्क का प्रश्न है कि सालाना परीक्षा प्रणाली को आवश्यक कर देने से बाल केंद्रित प्रारंभिक शिक्षा में परेशानी आयेगी, वास्तव में उस धारणा या विश्वास पर आधारित है जो यह मानता है कि बच्चों की शिक्षा के सुधार का यही अंतिम उपाय है। लेकिन, हकीकत में भारत में बाल केंद्रित का क्या अर्थ है? क्या इसका अर्थ यह है कि बच्चों को खुद अपने पाठ्यक्रम के विषय तय करने चाहिए? या फिर यह है कि बच्चों को वह पढ़ाया जाना चाहिए, जिसमें उनकी रुचि हो? या फिर बच्चों को खुद अपना ज्ञान खोजने के लिए मुक्त छोड़ देना चाहिए? अन्यथा, बच्चों को गतिविधि के मुताबिक पढ़ाया जाना चाहिए? ये सारी बातें विभिन्न समय पर विभिन्न लोगों द्वारा बताई गई लेकिन इन सभी में गंभीर

किस्म की गलतियाँ हैं। कक्षा में अध्यापन के स्तर पर कुछ में सैद्धांतिक तो कुछ में प्रायोगिक समस्याएँ हें। बाल केंद्रित शिक्षा को प्रसिद्ध अमरीकी दर्शनशास्त्री जॉन देवे ने 'प्रगतिशील शिक्षा' कहा है। उनके मुताबिक स्कूल पाठ्यक्रम मनोविज्ञान पर आधारित होना चाहिए। शुरुआत आवश्यक रूप से बच्चे, उसके अनुभव और उसकी समझ के अनुसार ही होनी चाहिए। लेकिन, निरंतर स्वीकार्य मानव ज्ञान और समाज को लेकर समझ पर भी निगाह रखी जानी चाहिए। एक शुरुआती तो दूसरा अंतिम बिंदु है। अंतिम बिंदु को देखे बिना शुरुआती बिंदु का विशेष महत्व नहीं है। भारत में हम इस सोच के मुताबिक पाठ्यक्रम नहीं बनते। पाठ्यक्रम को मनोविज्ञान से जोड़ने का अर्थ यह है कि आज स्वीकृत मानव ज्ञान बच्चे के अनुभव का हिस्सा हो और शिक्षक यह देखे कि यह सब बच्चे के लिए उपयोगी भी साबित हो। बच्चे के विकास के लिए क्या जरूरी है और उसे किस पर निर्देशित किया जा सकता है। इसके लिए शिक्षक को कुछ स्वतंत्रता, लचीलेपन और विशेष फैसलों की जरूरत होगी ताकि वह हर बच्चे के मस्तिष्क के मुताबिक काम कर सके। हमारे यहाँ स्कूल भी ऐसा वातावरण उपलब्ध नहीं करवाते। हम साल में विभाजित पाठ्यक्रम, श्रेणी आधारित स्कूल और सालाना आगे बढ़ने वाली व्यवस्था देते हैं। यह बच्चे के अनुभव और समझ सभी बच्चों में समान नहीं होती और यह एक समय के दौरान नहीं हो पाती। श्रेणी के आधार पर चलने वाले स्कूल आमतौर पर ऐसा ही मानकर चलते हैं। इस बारे में विस्तृत योजना और ज्ञान श्रृंखला तैयार की जा सकती है लेकिन इस सबमें दैनंदिन गतिविधियाँ और उसके परिणाम अध्यापक और बच्चे पर छोड़ दिये जाते हैं। शायद इसीलिए ग्रेडिंग वाले स्कूल उनके पाठ्यक्रम पास-फेल वाली परीक्षा प्रणाली चाहते हैं। वास्तव में ये परीक्षा श्रेणी वाले स्कूलों की तार्किक परिणति है। इसीलिए, वर्तमान स्कूल व्यवस्था में सीसीई और स्वतः प्रोन्नत करना आवश्यक हो गया है। यही वजह है कि सीसीई प्रणाली हमारे स्कूलों में तार्किक नहीं लगती। स्कूल का ढाँचा और सीसीई के आधारभूत विचार में विरोधाभास सुलझता नजर नहीं आता।

गैर-अंग्रेजी देशों की भाषाई योग्यता में 22वें स्थान पर भारत

गैर-अंग्रेजी भाषी देशों की अंग्रेजी प्रवीणता सूची हाल में जारी की गई। सूची

में भारत 22वें स्थान पर रहा।

दुनिया के टॉप 3 देश–नीदरलैंड्स 72.16 अंक, डेनमार्क 71.15 अंक, स्वीडन 70.81 अंक।

एशिया में शीर्ष 3–सिंगापुर 63.52 अंक, मलेशिया 60.70 अंक, फिलीपींस 60.33 अंक। 57.30 अंकों के साथ एशिया में भारत चौथे स्थान पर है अंग्रेजी योग्यता में। 72 देश शामिल है सूची में, जिनकी मूल भाषा अंग्रेजी नहीं, 9.50 लाख लोगों की अंग्रेजी की योग्यता के आधार पर बनाई गई सूची।

सीईओ पर ज्यादा भरोसा हम करते हैं

एडेल मैन संस्था द्वारा बिजनेस, इंस्टीट्यूटस, गैर सरकारी-सरकारी संगठनों के मुख्य कार्यकारियों के लिए 28 देशों में ऑनलाइन सर्वे कराया गया। जानते हैं किस देश के लोगों में उनके सीईओ के प्रति कितना विश्वास है-

चुनिंदा देशों के सीईओ पर भरोसे का प्रतिशत–भारत 70, ब्राजील 48, चीन 44, स्पेन 40, यूएसए 38, रूस 34, यूके 28, इटली 28, जर्मनी 28, आयरलैंड 27, ऑस्ट्रेलिया 26, कनाडा 25, दक्षिण कोरिया 24, फ्रांस 23, 2016 की तुलना में 2017 में 12 प्रतिशत की कमी आई है।

दुनिया के शीर्ष 10 सीईओ में से 9 एमबीए नहीं–हार्वर्ड बिजनेस रिव्यू में दुनिया के शीर्ष 100 सीईओ के बारे में उनकी सूची जारी की है। जानते हैं उनके बारे में-लार्स रिबेन सॅरिसेन-डेनमार्क कंपनी-नॉरडिस्क (हेल्थ केयर) एमबीए नहीं, मार्टिन सॉरिल-यूके कंपनी-डब्ल्यूपीपी (कंज्यूमर सर्विस) एमबीए है, पाब्लो आइला-स्पेन कंपनी-इंडीटेक्स (रिटेल) एमबीए नहीं, हर्बर्ट हेनर-जर्मनी कंपनी-एडिडास (कंज्यूमर गुड्स) एमबीए नहीं, रॉबर्टो एगिडियो-ब्राजील कंपनी-यूनिबैनको (फायनेंसियल सर्विस) एमबीए नहीं, जेन-शुन हुआंग-यूएस एनवीडिया इंफोर्मेशन टेक्नोलॉजी एमबी नहीं, बर्नाड अर्नाल्ट-फ्रांस एलवीएमएच कंज्यूमर गुड्स एमबीए नहीं, एल्मार डीजेन्हार्ट-जर्मनी कॉन्टीनेंटल ऑटोमोबाइल एमबीए नहीं, बेनॉट पोटियर-फ्रांस एयर लिक्युडी मटेरियल्स एमबीए नहीं, जेक्स एशेनब्रॉइच-फ्रांस वैलियो ऑटोमोबाइल एमबीए नहीं।

छात्र अपनी सोच बदलें, बदल जाएगा ग्रेड

नया अध्ययन म्यूनिख यूनिवर्सिटी के मनोविज्ञान विभाग ने पाँचवीं

से नौवीं कक्षा के 3,425 छात्रों पर किये अध्ययन के बाद यह खुलासा किया है कि गणित विषय में छात्रों का प्रदर्शन उनकी सोच पर निर्भर करता है। अगर छात्र गणित विषय से डरते हैं और उससे बचना चाहते हैं तो इसका सीधा असर उनके परफॉर्मेंस पर दिखेगा।

इस अध्ययन का नेतृत्व करने वाले म्यूनिख यूनिवर्सिटी मनोविज्ञान विभाग के प्रोफेसर राइनहॉर्ड पिकरन का कहना है कि गणित एक ऐसा विषय है, जिसके प्रति सकारात्मक और नकारात्मक सोच का असर छात्रों की परफॉर्मेंस पर पड़ता है। सोच और परफॉर्मेंस के बीच इतना सीधा संबंध किसी और विषय में नहीं देखा गया है।

शोध के अनुसार, गणितीय क्षमता का सीधा संबंध मानवीय भावनाओं से होता है। अगर किसी छात्र के मन में गणित को लेकर डर है तो उसका ग्रेड खराब होगा, वहीं जो मैथ्स को एंज्वॉय करते है, उनकी उपलब्धि अच्छी होती है और ग्रेड भी अच्छा मिलता है। वे अपनी उपलब्धियों पर गर्व महसूस करते हैं।

छात्र-छात्रा पर समान असर-मैथ्स की सकारात्मक व नकारात्मक बातों का असर छात्र-छात्रा पर समान रूप से होता है। पर इसे लेकर छात्राएँ अतिसंवेदनशील होती हैं। इसके पीछे समाज में व्याप्त परंपरागत धारणा है। अभी तक यह माना जाता रहा है कि लड़कियाँ गणित में कमजोर होती हैं। यह सच नहीं है। अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर हुए अध्ययनों से पता चला है कि इस विषय में दोनों में समान क्षमता होती है। लेकिन यह भी सच है कि पूर्व धारणाएँ कुछ हद तक लड़कियों के ग्रेड को प्रभावित करती है।

डर निकालने में मदद कर सकते हैं शिक्षक-गणित पढ़ाना केवल नंबर गेम व फॉर्मूला का खेल भर नहीं होता। एक शिक्षक के लिए यह भी जानना महत्वपूर्ण है कि छात्र इसे लेकर क्या महसूस करता है। शोध में यह भी जानने की कोशिश की गई कि शिक्षक से मैथ्स पढ़ने से क्या छात्रों में इसे लेकर उत्सुकता भाव जागता है। एक शिक्षक इसमें कितना मददगार साबित होता है। पाया यह गया कि ऐसा तभी संभव है, जब शिक्षक कॉन्सेप्ट्स स्पष्ट करें। छात्रों के प्रति शिक्षकों का सहयोगी रुख भी ग्रेड सुधारने में मददगार साबित होता है। इसी तरह गणित के प्रति उनकी सोच बदलकर भी शिक्षक बेहतर ग्रेड दिलाने में छात्रों की मदद करने में सक्षम हैं।

डिप्रेशन के नये स्त्रोत की खोज का दावा-वैज्ञानिक ने एक शोध में दावा किया है कि डिप्रेशन केवल मस्तिष्क से ही संबंधित बीमारी नहीं है। वैज्ञानिकों ने

900 से ज्यादा लोगों के ब्रेन स्केन किये जिससे पता चलता नुकसान और कम आत्म सम्मान की भावना ब्रेन के हिस्से ऑरबिटोफ्रंटल कोर्टेक्स से बंधी होती है जिसमें निर्णय लेने की क्षमता, उम्मीद व भावनाएँ होती हैं। वैज्ञानिकों की टीम ने चीन में एमआरआई ब्रेन स्कैन में भाग लेने वालों में से 421 लोग अवसाद से ग्रसित एवं 488 सामान्य नागरिक थे। अवसाद ग्रसित लोगों की याददाश्त व मीडियल ओएफसी में कमजोर कनेक्शन मिला।

समालोचना से मिलती है विविध शिक्षाएँ

(चाल 3 तेरे प्यार का आसरा.....)

समालोचना से (मुझे) मिलती अनेक शिक्षाएँ।
गुण दोष परिज्ञान की शिक्षाएँ।।

निन्दा होती है कुभावना, ईर्ष्या द्वेष घृणादि होती निन्दा भावना।
समालोचना होती सुधार भावना, ईर्ष्या द्वेष घृणादि रिक्त शुभ भावना।।

परोपकारी सुविज्ञजन करते समालोचना, दोष दूर गुण वृद्धि हेतु करे समालोचना।
स्व-अज्ञात दोष दूर हेतु योग्य समालोचना, समालोचना सुनने हेतु योग्य श्रोता बनना।।

समालोचना श्रवण हेतु जिज्ञासा भी चाहिए, धैर्यपूर्वक एकाग्रता से विश्लेषण चाहिए।
अन्य के अनुभव व दृष्टिकोण अनेक लाभ होते, स्व-दोषों के परिहार स्व-गुण विकास होते।।

गुणग्राहकता व उदारवृत्ति नम्रता क्षमा बढ़ती, कूपमण्डुकता-हठग्राहिता-अज्ञानता घटती।
सर्वज्ञ बिन अन्य सभी होते अपूर्ण अल्पज्ञ, अतः स्वदोष ढाकने हेतु अकरणीय कुतर्क।।

इससे न होते स्व-दोष दूर न होता विकास, अज्ञान-दंभ बढ़ते होता आत्म विनाश।
तीर्थंकर से लेकर सद्गुरु देते उपदेश, रोग दूर करने हेतु यथा वैद्यों का निर्देश।।

नीति-नियम-कानून-संविधान भी समालोचना, समालोचना के बिना विकास की नहीं संभावना।
रावण-कंस-हिटलर नहीं माने समालोचना, गुणग्राही विकासशील मानते समालोचना।।

समालोचना से होती ज्ञान-विज्ञान क्रांति, सभ्यता-संस्कृति व भाषा की उन्नति।
शोध-बोध व समीक्षा होती समालोचना, आत्मविकास योग्य 'कनक' को मान्य समालोचना।।

सीपुर, दिनांक 21.01.2017, रात्रि 9.15

सुविचार–किसी को राय देने की तुलना में किसी अच्छी राय से फायदा उठाने के लिये अधिक बुद्धिमत्ता की आवश्यकता होती है। **–जे. कॉलिंस**

उपहास और अपमान के बाद मिलती है सफलता

सफलता की कोई परिभाषा नहीं है। सबकी सफलता अलग होती है, लेकिन आप सफलता पाने के लिए जो रास्ता अपनाते हैं, वह उपहास, उपेक्षा और अपमान से होकर गुजरता है। आपको यह रास्ता बिना माँगे स्वतः ही मिल जाता है। लोगों के लिए यह जानना ही काफी होता है कि आप कुछ नया काम शुरू करने वाले हैं या अभी सोच रहे हैं। उपहास का पात्र बनाने के लिए इतना ही काफी है। परिचितों से अनचाही उपेक्षा प्राप्त करना आपके लिए हमेशा चौंकाने वाला अनुभव होगा और एक तबका ऐसा भी होगा जो आपकी क्षमताओं पर संदेह करेगा और आपके साहस को अपमानित। जब सफलता मिलती है, तब अपमान उपेक्षा और उपहास सब बौने लगने लगते हैं। परिवेश के इस बौनेपन को साहस के साथ आपको पार करना पड़ेगा। अपमान करने वालों को बड़े इरादों के साथ जेहन में हमेशा रखना पड़ेगा, क्योंकि वही आपके उत्साहवर्धक हैं।

महान् बास्केटबॉल प्लेयर–उसे हॉयर स्कूल बास्केटबॉल टीम से निकाल दिया गया। वह घर आकर अपमान पर कमरे में खुद को बंदकर घंटों रोया। वह दृढ़ प्रतिज्ञ था, उसने बास्केटबॉल खेलना नहीं छोड़ा और माइकल जोर्डन सदी का महानतम बास्केटबॉल प्लेयर बना। चौदह बार एनबीए ऑल स्टार चैंपियन रहा। वह दो बार ओलंपिक गोल्ड मैडेलिस्ट भी रहा। वह 5 बार एनबीए का मोस्ट वैल्यूड प्लेयर बना। कहानी से स्पष्ट है कि अपमान के बाद भी निराश नहीं होना है।

लक्ष्य पर रखे निगाह–जीवन में सफल होना है तो निगाह लक्ष्य पर रखनी होगी। लोगों की बातों को इग्नोर करना होगा। लोग तब तक कहते रहेंगे, जब तक कि आप सफल नहीं हो जाते। जिस दिन आप सफल हो जायेंगे, हर किसी की बोलती बंद हो जायेगी। अगर आप अपने सपने को हद से ज्यादा प्यार करते हैं तो लोगों की परवाह किये बगैर अपने लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए कड़ी मेहनत करते रहिये। आपको किसी की बातों में आकर बहकना नहीं है।

कार्टूनिस्ट से डिज़्नीलैंड तक–युवा कार्टूनिस्ट को न्यूज पेपर से इसलिए

निकाल दिया गया क्योंकि उसके पास कोई ओरिजनल आइडिया नहीं था और कल्पना शक्ति का अभाव भी बताया गया। हम बात कर रहे हैं वाल्ट डिज्नी की। हम उन्हें इसलिए भी जानते हैं क्योंकि उन्होंने मिकी माउस जैसे कार्टून कैरेक्टर की रचना की। उन्होंने 22 अकेडमी अवाड्र्स जीते। वे हॉलीवुड में सफलतम फिल्म निर्माता रहे। उनकी कल्पना शक्ति से बना डिज्नीलैंड हर चेहरे पर मुस्कुराहट लाता है।

अपमान से बनी लेम्बोर्गिनी–इटेलियन व्यवसायी और स्पोट्र्स कार निर्माता फारुशियो लेम्बोर्गिनी को दुनिया बेहद फैशनेबल एवं लग्जरी स्पोट्र्स कार लेम्बोर्गिनी के निर्माता के रूप में जानती है। अपने लिए उन्होंने उस समय की सबसे मशहूर स्पोट्र्स कार फरारी खरीदी। लेकिन आवाज करने वाले गियर बॉक्स में उन्हें समस्या लगी। वे एन्जो फरारी से मिलने पहुँचे, जो फरारी के मालिक थे। लेकिन एन्जो ने उन्हें लगभग अनसुना कर दिया। उनका खराब और अपमानित करने वाला व्यवहार फारुशियो को चुभ गया। उसी अपमान ने उन्हें स्पोट्र्स कार निर्माण में उतारा। उन सुधारों के साथ जो उन्हें फरारी कार में मैकेनिकल गलतियाँ लगी थीं। शुरुआती घाटों के बावजूद फैशनेबल स्पोट्र्स कार का निर्माण हुआ।

सफलता की डगर कठिन होती है। यहाँ आपको अपमान का भी सामना करना पड़ता है, पर जो डटा रहता है वह जीतता है।

उपहास से न घबराएँ–कई बार आपके आस-पास के लोगों को आपमें मौलिकता और कल्पना शक्ति का अभाव लगता है, लेकिन उनका तिरस्कार व उपेक्षा आपकी सृजनशीलता को बाहर निकालती है और एक दिन वही आपका परिचय बनती है। याद रहे इस यात्रा में मिलने वाले सारे अपमान, व्यंग्य और जिन लोगों ने आपकी उपेक्षा की है, उनसे सफलता मिलने के बाद बदला नहीं लेना है क्योंकि वह आपको छोटा कर देगा जो नकारात्मक भी है लेकिन उनको भूलना कभी नहीं है। यही सब तो इस यात्रा में आपकी प्रेरणा है। इन तीनों कहानियों में अपमान, उपेक्षा और उपहास कॉमन है। लेकिन इन सबको झेलकर और इन सब पर पार पाकर मिलने वाली सफलता बड़ी सकारात्मक और जबर्दस्त होती है।

संदर्भ–

शास्त्राग्नौ मणिवद्भव्यो विशुद्धो भांति निर्वृत्तः।
अंगारवत् खलो दीप्तो मली वा भस्म वा भवेत्।। (76) (आत्मानुशासन)

शास्त्र रूप अग्नि में भव्य (सम्यग्दृष्टि) रूपी मणि विशुद्धि को प्राप्त कर निर्वाण सुख को प्राप्त करता है परंतु जो अभव्य रूप अंगार है वह शास्त्र रूपी अग्नि में गिरकर पहले थोड़ा प्रकाशवान् होता है पश्चात् मलिन हो जाता है अथवा भस्म हो जाता है। यहाँ पर शास्त्र को आचार्य गुणधर स्वामी ने अग्नि की उपमा दी है, क्योंकि अग्नि पक्षपात रहित होकर योग्य ईंधन को जलाती है एवं प्रकाश देती है, उसी प्रकार शास्त्र रूप अग्नि निरपेक्ष से ज्ञान रूपी प्रकाश देती है। जैसे पुष्परागादि रत्न अग्नि के माध्यम से किट्टकालिमा से रहित निर्मल हो जाता है। उसी प्रकार भव्य रूपी रत्न शास्त्र रूपी अग्नि के माध्यम से कर्म कलंक से रहित होकर निर्मल चिच्चमत्कार ज्योति रूप में परिणमन करता है। जिस प्रकार लकड़ी अग्नि के माध्यम से पहले प्रकाशमान् होती है बाद में मलिन रूप कोयला में परिणत होती है या भस्म रूप परिणत करती है। उसी प्रकार अभव्य मिथ्यादृष्टि शास्त्र-अग्नि के माध्यम से पहले प्रकाशवान् होता है अर्थात् क्षयोपशम के माध्यम से शास्त्रज्ञ हो जाता है परंतु मिथ्यात्व के कारण मिथ्याज्ञानी होकर आगम का विरोध करता है। अनंतानुबंधी क्रोधादि कषायों के कारण अन्याय, अत्याचार, भ्रष्टाचारों का प्रचार-प्रसार करके ज्ञान शून्य होकर पाप संचय कर संसार में परिभ्रमण करता है।

विकासयंति भव्यस्य मनोमुकुलमंशवः।
रवेरिवार विन्दस्य कठोराश्च गुरुक्तयः।। (242) (आत्मानुशासन)

जिस प्रकार सूर्य की कठोर भी किरणें कोमल-सी कली को प्रफुल्लित करती है उसी प्रकार कठोर गुरु के वचन भव्य जीव के मन रूपी कमल को प्रफुल्लित करते है अर्थात् भव्य जीव कठोर गुरु के वचन सुनकर अपने दोष को दूर कर अभ्युदय एवं निःश्रेयस सुख को प्राप्त करते हैं नीति प्रसिद्ध है-''हित मनोहारी च दुर्लभं वचः'' संसार में हितकर मनोहारी वचन दुर्लभ है। जैसे रोग को दूर करने के लिए वैद्य कड़वी औषध देता हे उसी प्रकार भव्य जीवों के भवरूप रोग दूर करने के लिए भवरोग के वैद्य गुरुदेव भी कठोर वचन रूप कड़वी औषध देते हैं। उसका पान करके भव्य भव रोग से दूर होकर परम स्वास्थ्य को प्राप्त करता है।

इस शास्त्र का नाम अन्वयर्थक संज्ञा वाला है, क्योंकि इस शास्त्र में समस्त संसारी एवं मुक्त जीवों का भाव संग्रहित है अर्थात् वर्णित है। ''उपयोग लक्षणं जीवः'' इस सूत्रानुसार समस्त जीवराशि उपयोगमय है। परन्तु कर्म सापेक्षता एवं कर्म

निरपेक्षतानुसार अनेकानेक भेद-प्रभेद हो जाते हैं। सामान्यापेक्षा उपयोग एक, विशेषापेक्षा-शुद्ध-अशुद्ध की अपेक्षा दो, शुद्ध, शुभ, अशुभ रूप से तीन, गुणस्थानापेक्षा 14 इसी प्रकार संख्यात-असंख्यादि भेद-प्रभेद हैं। मध्यम प्रतिपत्ति के अनुसार उपयोग तीन प्रकार हैं। जिसमें समस्त भाव गर्भित हैं। यथा-

जीवो परिणमदि जदा सुहेण असुहेण वा सुहो असुहो।
सुद्धेण तदा सुद्धो हवदि हि परिणाम सब्भावो।। (9)

गाथार्थ-जब उपयोगात्मक जीव शुभ भाव से परिणमन करता है तब वह स्वयं ही शुभ होता है। जब अशुभ से परिणमन करता है, तब वह स्वयं ही अशुभ होता है और जब शुद्ध भाव से परिणमन करता है तब वह स्वयं शुद्ध होता है क्योंकि जीव परिणमनशील एक चैतन्य द्रव्य है।

मेरा स्वभाव ही मेरा स्वधर्म

(स्वभाव से भिन्न सभी पर व विभावों को त्यागने का मेरा पुरुषार्थ)

(चाल : आत्मशक्ति.....)

मेरे स्वभाव से विपरीत कोई न भाव करूँ मेरा प्रयत्न।
तथाहि वचन व व्यवहार कभी न करूँ मेरा पुरुषार्थ।।

वस्तु स्वभाव धर्म है धर्म सो साम्य-अवस्था।
मोह-क्षोभ से विहीन अवस्था होती है साम्य-अवस्था।। (1)

मेरा स्वभाव है सत्-चित्-आनंदमय अमूर्तिक।
स्वयंभू सनातन अविभक्त, उत्पाद-व्यय-ध्रौव्य युक्त।।

मैं हूँ स्वयं में स्वयंपूर्ण, अनंत गुणमय ज्ञान रूप।
अनंत दर्शन सुख वीर्यमय, अव्याबाध मेरा शुद्ध रूप।। (2)

इससे परे सभी पर रूप, द्रव्य-भाव-नौकर्म रूप।
तन-मन-इन्द्रिय पररूप, सचित्त-अचित्त-मिश्ररूप।।

राग द्वेष मोह काम क्रोध ईर्ष्या, घृणा तृष्णादि विभाव रूप।
ख्याति पूजा लाभ प्रसिद्धि सत्ता, संपत्ति आदि पर रूप।। (3)

तेरा-मेरा भेदभाव रूप ऊँच-नीच काला-गोरा रूप।

यह सब है विकार रूप, इससे परे मेरा शुद्ध रूप।।

मेरा स्वभाव स्व-आत्मविश्वास ज्ञान चारित्रमय।
उत्तम क्षमा मार्दव आर्जव शौच, संतोष ब्रह्म आकिंचन्य।। (4)

इससे परे सभी ममकार, अहंकार व संकल्प-विकल्प।
आकर्षण-विकर्षण-द्वंद्व परे, मेरा स्वधर्म निर्विकल्प।।

आगम-परमागम से मैंने यह जाना अनुभव से पहचाना।
इस हेतु ही 'कनकनन्दी' स्वधर्म को ही मेरा स्वरूप माना।। (5)

सीपुर, 24.01.2017, मध्याह्न 3.00

आये हो मम जीवन में आत्मशक्ति बनके!

(चाल : आये हो मेरी जिन्दगी में.....)

आये हो मम जीवन में...उपकारी त्रय बनके...
श्रद्धा-प्रज्ञा व चर्या...आत्मशक्ति/(मोक्षमार्ग/रत्नत्रय) बनके...(स्थायी)...
श्रद्धा (है) आत्मविश्वास...द्रव्य-तत्त्व सहित...
देव शास्त्र-गुरुभक्ति (युत)...मोक्ष अंतिम लक्ष्य...
अष्टांग दोष रिक्त...सप्त व्यसन/(भय) रहित...श्रद्धा...(1)...

अनेकांतमय दृष्टि...आत्म/(परमात्म) श्रद्धा सहित...
श्रद्धा से युक्त प्रज्ञा...वीतराग विज्ञान युक्त...
प्रमाण-नय-निक्षेप...आगम-परमागम युक्त...श्रद्धा...(2)...

द्वय युक्त चर्या सम्यक्...(पञ्च) महाव्रत समिति युक्त...
उत्तम दशधर्म युक्त...मोह-क्षोभ से रहित/(समता शांति युक्त)...
स्वाध्याय-ध्यान/(वैराग्य) युक्त...ख्याति-पूजा-लाभ रिक्त...श्रद्धा...(3)...

दीन-हीन-अहं रिक्त...संतोष-शांति/(तृप्ति) युक्त...
भेदाभेद रत्नत्रय...संवर निर्जरा/(मोक्ष) युक्त...
सच्चिदानंदमय...'कनक' का शुद्ध रूप...श्रद्धा...(4)...

सीपुर, दिनांक 25.01.2016, मध्याह्न 2.57

(आगम अनुभव एवं मनोवैज्ञानिक शोधपूर्ण कविता)

अन्तः प्रेरणा व आध्यात्मिक शांति से करूँ आत्म-उन्नति

(विघ्नसंतोषी-रायचन्द से अप्रभावी रहूँ)

जल-वायु-मृदा रश्मी (योग्य) पाकर, बीज बनता है विशाल वृक्ष।
समय पर आते अनेक शाखाएँ, (व) पत्तियाँ फूल व फल।। (1)

मैं भी हूँ बीज स्वरूप परमात्मा, अनंत गुण हैं सुप्त मुझमें।
योग्य द्रव्य क्षेत्र काल भावादि पाकर, विकसित करना स्वभाव में।। (2)

बीज यथा जलादि पाकर, अंकुर से बनता है फल-फूल।
तथाहि मेरे (भी) अनंत गुणों को, विकसित करने में बनूँ सफल।। (3)

यदि बीज न गहेगा जलादि, नहीं भेदेगा छिलका व पृथ्वी।
नहीं बनेगा फल तक तथाहि (मेरे) विकास के बाधकों को त्यागूँ सभी।। (4)

गुण ग्रहण भी करूँ अन्य का, संकीर्णता भी मैं तोड़ूँ स्वयं का।
बाह्य निमित्तों को पाकर मैं, विकास करूँ अनंत गुणों का।। (5)

सनम्र सत्यग्राही व पावन भाव से, बढ़ाता जाऊँ मैं स्व-गुणों को।
पर से अप्रभावी होकर मैं, समता-शांति से बढ़ाऊँ स्वयं को।। (6)

विघ्नसंतोषी व रायचन्द योग्य, भोजन में जो बनते बालचन्द।
रागी द्वेषी कामी स्वार्थांध, ईर्ष्या घृणा से जो होते अंध/(भाग्यमंद)।। (7)

उनके अयोग्य भाव-काम व वचन से, रहूँ मैं सदा माध्यस्थ।
स्व अन्तःप्रज्ञा-श्रद्धा-प्रेरणा से, विकास करूँ मैं सतत।। (8)

तीर्थंकर बुद्ध व ईसा सुकरात, मीराबाई को भी न छोड़े रायचन्द।
अलौकिक वृत्ति से ही होता आत्मविकास, इस हेतु विश्व इतिहास साक्ष्य।। (9)

मेरा विकास तो आध्यात्मिक, ख्याति पूजा लाभ प्रसिद्धि रिक्त।
सतता-संपत्ति व वर्चस्व परे, मेरा विकास है पूर्ण आध्यात्मिक।। (10)

स्व-पर-विश्वहित भावना युक्त, समता-शांति-पावन युक्त।
अपना-पराया भेदभाव रहित, अनेकांतमय उदार युक्त।। (11)

अधिकांश जन होते उक्त गुण रहित, अतः उनसे मैं माध्यस्थ।

मैत्री प्रमोद कारुण्य माध्यस्थ युक्त, आत्मविशुद्धि करूँ मैं सतत।। (12)
कोई माने या न माने इस हेतु न करूँ मैं राग-द्वेष।
निस्पृह निराडम्बर दीन-हीन-अहं रहित रहूँ मैं सदा संतोष।। (13)
अन्तःप्रेरणा व आध्यात्मिक शांति, इससे प्रेरित हो करूँ प्रगति।
समस्त संकीर्णता व द्वंद्व कुंठा (से) परे, 'कनक' का लक्ष्य आत्म-उन्नति।। (14)

सीपुर, दिनांक 26.01.2017, रात्रि 10.26

कठिनाइयों में मदद करता है अध्यात्म

वर्षों से हमारे साधु-संत अध्यात्म की महत्ता बताते आ रहे हैं। अब अमेरिकी वैज्ञानिकों ने ताजा अध्ययन में यह प्रमाणित किया है कि अध्यात्म न केवल हमें मानसिक संतुष्टि पहुँचाता है बल्कि यह मानसिक और शारीरिक स्वास्थ्य भी तरोताजा रखता है। अध्ययन के मुताबिक अध्यात्म से महिलाओं में मानसिक स्वास्थ्य और पुरुषों में मानसिक स्वास्थ्य के साथ-साथ शारीरिक स्वास्थ्य भी ठीक रखता है। इससे कई क्रोनिक बीमारियाँ दूर रहती हैं। मिसुरी यूनिवर्सिटी के शोधकर्ताओं ने पाया है कि क्रोनिक बीमारी जैसे कि कैंसर, ब्रेन इंज्युरी, स्ट्रोक और स्पाइनल कॉर्ड इंज्युरी से लड़ने के लिए अध्यात्म बेहद कारगर साबित होता है। हालाँकि पहले भी इस तरह के कई शोध हुए हैं जिनमें अध्यात्म के फायदे गिनाये गये हैं। प्रमुख शोधकर्ता स्टेफेनी रीड ने बताया कि अध्ययन में इस सिद्धांत को बल मिला है जिसमें कहा जाता है कि धर्म या अध्यात्म स्वास्थ्य स्थिति की नकारात्मकता को दूर करता है। लाइव साइंस की रिपोर्ट के मुताबिक 18 और इससे ऊपर के लगभग 168 लोगों पर यह अध्ययन किया गया। ये लोग किसी न किसी तरह की क्रोनिक बीमारी से ग्रस्त थे। 61 को ब्रेन इंज्युरी, 32 को स्ट्रोक, 25 को स्पाइनल कॉर्ड इंज्युरी और 25 को कैंसर था। बाकी संतुलित थे। इन लोगों ने धार्मिकता और आध्यात्मिकता का पैमाना मापा गया। शोधकर्ताओं ने मानसिक और शारीरिक स्वास्थ्य जाँचने के बाद सवालों के एक कागज को भरने के लिए कहा। हालाँकि अध्ययन में महिलाएँ पुरुषों की तुलना में स्टीरियोटाइप थी और इनमें धर्म और अध्यात्म ज्यादा मायने रखता था लेकिन आध्यात्मिक अनुभव, धार्मिक अनुष्ठान और सामूहिक मदद के मामले में महिला-पुरुष दोनों में एक ही तरह से फायदा हुआ। सामाजिक मदद दोनों में बराबर मिली।

लेकिन पुरुष और महिलाओं में अध्यात्म के अलग-अलग फायदे देखने को मिले।

महिलाओं में जहाँ आध्यात्मिक अनुभव से मानसिक स्वास्थ्य पर जबर्दस्त सकारात्मक असर पड़ा वहीं पुरुषों में इसके साथ ही अन्य समस्याओं में हल्कापन महसूस हुआ। उनके शारीरिक स्वास्थ्य पर स्पष्ट सकारात्मक असर देखा गया।

संदर्भ-

ध्यान का लक्षण और उसका फल

एकाग्र-चिन्ता-रोधो यः परिस्पन्देन वर्जितः।
तद्ध्यानं निर्जराहेतुः संवरस्य च कारणम्।। (56)

परिस्पंद से रहित जो एकाग्र चिंता का निरोध है-एक अवलंबन रूप विषय में चिंता का स्थिर करना है-**उसका नाम ध्यान है और वह** (संचित कर्मों की) **निर्जरा तथा** (नये कर्मास्रव के निरोध रूप) **संवर का कारण है**।

व्याख्या-नाना अर्थों-पदार्थों का अवलंबन लेने से चिंता परिस्पंदवती होती है-डावाँडोल रहती है अथवा स्थिर नहीं हो पाती-उसे अन्य समस्त अंगो-मुखों से हटाकर एकमुखी करने का नाम ही एकाग्र चिंता निरोध है, जो ध्यान का सामान्य लक्षण है। ऐसा ध्यान संचित कर्मों की निर्जरा तथा नये कर्मों के आस्रव को रोकने रूप संवर का कारण होता है। एकाग्र ध्यान में निर्जरा और संवर दोनों की शक्तियां होती हैं।

ध्यान के लक्षण में प्रयुक्त शब्दों का वाच्यार्थ

एकं प्रधानमित्याहुरग्रमालम्बनं मुखम्।
चिन्ता स्मृतिर्निरोधस्तु तस्यास्तत्रैव वर्तनम्।। (57)
द्रव्य-पर्याययोर्मध्ये प्राधान्येन यदर्पितम्।
तत्र चिन्तानिरोधो यस्तद् ध्यानं बभणुर्जिनाः।। (58)

(एकाग्रचिन्तानिरोधोध्यानम् इस ध्यान-लक्षणात्मक वाक्य में एक प्रधान को और अग्र आलंबन को तथा मुख को कहते हैं। चिंता स्मृति का नाम है और निरोध उस चिंता का उसी एकाग्र विषय में वर्तन का नाम है। द्रव्य और पर्याय के मध्य में प्रधानता से जिसे विवक्षित किया जाये उसमें चिंता का जो निरोध है-उसे अन्यत्र न जाने देना है-उसको सर्वज्ञ भगवंतों ने ध्यान कहा है।)

व्याख्या-पूर्व पद्य में दिया हुआ ध्यान का लक्षण जिन शब्दों से बना है, उनमें से प्रत्येक के आशय को यहाँ व्यक्त किया गया है, जिससे भ्रम के लिए कोई स्थान न रहे। 'एक' शब्द संख्यापरक होने के साथ यहाँ पर प्रधान अर्थ में विवक्षित है; अग्र शब्द आलंबन तथा मुख अर्थ में प्रयुक्त है और चिंता को जो स्मृति कहा गया है वह तत्त्वार्थसूत्र में वर्णित '**स्मृतिसमन्वाहारः**' का वाचक है, जो उसी विषय की बार-बार स्मृति, चिंता अथवा चिंता प्रबंध का नाम है। इस ध्यान में द्रव्य तथा पर्याय में से किसी एक को प्रधानता के साथ विवक्षित किया जाता है और उसी में चिंता को अन्यत्र से हटाकर रोका जाता है।

ध्यान-लक्षण में एकाग्र ग्रहण की दृष्टि

एकाग्रं ग्रहणं चाऽत्र वैयग्य-विनिवृत्तये।
व्यग्रं हि ज्ञानमेव स्याद् ध्यानमेकाग्रमुच्यते।। (59)

इस ध्यान-लक्षण में जो एकाग्र शब्द का ग्रहण है वह व्यग्रता की विनिवृत्ति के लिए है। ज्ञान ही वस्तुतः व्यग्र होता है, ध्यान नहीं। ध्यान को तो एकाग्र कहा जाता है।

व्याख्या-यहाँ स्थूल रूप से ज्ञान और ध्यान के अंतर को व्यक्त किया गया है। ज्ञान व्यग्र है-विविध अग्रों-मुखों अथवा आलंबनों के लिए हुए है; जबकि ध्यान व्यग्र नहीं होता, वह एकमुख तथा आलंबन को लिए हुए एकाग्र ही होता है। वस्तुतः देखा जाय तो ज्ञान से भिन्न ध्यान कोई जुदी वस्तु नहीं, निश्चल अग्नि शिखा के समान अवभासमान ज्ञान ही ध्यान कहलाता है; जैसा कि पूज्यपादाचार्य के निम्न वाक्य से प्रकट है-

एतदुक्तं भवति-ज्ञानमेवाऽपरिस्पन्दाग्निशिखावदवभासमानं ध्यानमिति।

(सर्वार्थसिद्धि 9-27)

इससे यह फलित होता है कि ज्ञान की उस अवस्था विशेष का नाम ध्यान है, जिसमें वह व्यग्र न रहकर एकाग्र हो जाता है। शायद इसी से ध्यानशतक की निम्न गाथा में स्थिर अध्यवसान को ध्यान बतलाया गया है और जिसमें चित्त चलता रहता है उसे भावना, अनुप्रेक्षा तथा चिंता के रूप में निर्दिष्ट किया है-

जं थिरमज्झवसाणं तं झाणं तं चलंतयं चित्तं।
तं होज्ज भावना वा अणुपेहा वा अहव चिंता।। (2)

एकाग्रचिंतानिरोधरूप ध्यान कब बनता है और उसके नामांतर

प्रत्याहृत्य यदा चिंतां नानाऽऽलम्बनवर्तिनीम्।
एकालम्बन एवैनां निरुणद्धि विशुद्धधीः।। (60)
तदाऽस्य योगिनो योगश्चिन्ताचिन्तैकाग्रनिरोधनम्।
प्रसंख्यानं समाधिः स्याद्ध्यानं स्वेष्ट-फलप्रदम्।। (61)

जब विशुद्ध बुद्धि का धारक योगी नाना आलंबनों में वर्तने वाली चिंता को खींचकर उसे एक आलंबन में ही स्थिर करता है-अन्यत्र जाने नहीं देता-**तब उस योगी के चिंता का एकाग्रनिरोधन नाम का योग होता है, जिसे प्रसंख्यान, समाधि और ध्यान भी कहते हैं और वह अपने इष्टफल का प्रदान करने वाला होता है।**

व्याख्या-यहाँ पूर्व वर्णित ध्यान के विषय को और स्पष्ट किया गया है और उसी को योग, समाधि तथा प्रसंख्यान नाम भी दिया गया है। साथ ही उसे स्वेष्ट फल का प्रदाता लिखा है, जो मुख्यतः निर्जरा तथा संवर के रूप में है और गौणतः अन्य लौकिक फलों का भी प्रदाता है।

ध्यान के योग और समाधि ये दो नाम तो सुप्रसिद्ध है ही, श्री जिनसेनाचार्य के महापुराण में इनके साथ धीरोध, स्वांतनिग्रह और अंतःसंलीनता को भी ध्यान के पर्यायनाम बतलाया गया है, जो बहुत कुछ स्पष्टार्थ को लिए हुए हैं; परंतु प्रसंख्यान नाम किस दृष्टि को लिए हुए है, यह यहाँ विचारणीय है। खोजने पर पता चला कि यह शब्द मुख्यतः योगदर्शन का है-योगदर्शन के चतुर्थपादगत सूत्र 29में प्रयुक्त हुआ है। प्र और सम् उपसर्गपूर्वक ख्या धातु से ल्युट् (अन्) प्रत्यय होकर इस शब्द की उत्पत्ति हुई है। ख्या धातु गणना, तत्त्वज्ञान और ध्यान जैसे अर्थों में व्यवहृत होती है, जिनमें पिछले दो अर्थ यहाँ विवक्षित जान पड़ते हैं। उक्त सूत्र की टीकाओं से भी यही फलित होता है जिनमें विवेक-साक्षात्कार तथा सत्त्वपुरुषान्यताख्याति को प्रसंख्यान बतलाया है। वामन शिवराम आप्टे की संस्कृत-इंग्लिश डिक्शनरी में इसके लिए Reflection, meditation, deep meditation, abstract contemplation जैसे अर्थों का उल्लेख करके उदाहरण के रूप में हर प्रसंख्यानपरो बभूव यह कुमारसंभव ग्रंथ का वाक्य भी उद्धृत किया है। इससे प्रसंख्यान शब्द भी ध्यान और समाधि का वाचक है, यह स्पष्ट हो जाता है।

अग्र का निरुक्त्यर्थ

अथवाऽङ्गति जानातीत्यग्रमात्मा निरुक्तितः।

तत्त्वेषु चाऽग्रगण्यत्वादसावग्रमिति स्मृतः।। (62)

अथवा 'अंगति जानाति इति अग्र' इस निरुक्ति से अग्र आत्मा का नाम है, जो कि जानता है और वह आत्मा (जीवादि नव) तत्त्वों में अग्रगण्य होने से भी अग्र रूप से स्मरण किया गया है।

व्याख्या-यहाँ दो दृष्टियों से अग्र नाम आत्मा का बतलाया है-एक निरुक्ति की दृष्टि, जो ज्ञाता अर्थ को व्यक्त करती है, दूसरी तत्त्वों में अग्रगण्यता की दृष्टि, जिससे सात तथा नव तत्त्वों की गणना में जीवात्मा को पहला स्थान प्राप्त है।

छह द्रव्यों में भी उसकी प्रथम गणना की जाती है।

द्रव्यार्थिकनयादेकः केवलो वा तथोदितः।

अन्तःकरणवृत्तिस्तु चिन्तारोधो नियन्त्रणः।। (63)

द्रव्यार्थिक नय से एक शब्द केवल (असहाय) अथवा तथोदित (शुद्ध) का वाचक है; चिंता अंतःकरण की वृत्ति को कहते हैं और रोध नाम नियंत्रण का है।

व्याख्या-यहाँ निश्चयनय की दृष्टि से एक आदि शब्दों को आशय को व्यक्त किया गया है, जिससे एक शब्द शुद्धात्मा का वाचक होकर उसी में चित्त वृत्ति के नियंत्रण का नाम ध्यान हो जाता है।

चिंतानिरोध का वाच्यांतर

अभावो वा निरोधः स्यात्स च चिन्तान्तरव्ययः।

एकचिन्तात्मको यद्वा स्वसंविच्चिन्तयोज्झिता।। (64)

अथवा अभाव का नाम निरोध है और वह दूसरी चिंता के विनाश रूप एक चिंतात्मक है अथवा चिंता से रहित स्वसंवित्ति रूप है।

व्याख्या-पूर्व पद्य में जिसे रोध शब्द से उल्लेखित किया है उसी के लिए इस पद्य में निरोध शब्द प्रयोग किया गया है। इससे रोध और निरोध शब्द एक ही अर्थ के वाचक हैं, यह स्पष्ट हो जाता है। चिंता शब्द के साथ प्रयुक्त हुआ रोध या निरोध शब्द जब अभाव अर्थ का वाचक होता है तब उसका आशय चिंतातर के दूसरी चिंताओं के-अभाव रूप होता है, न कि चिंतामात्र के अभाव रूप, और इसलिए उसे एक

चिंतात्मक अथवा चिंताओं से रहित स्वसंवेदन रूप भी कहा जाता है। निरोधक अभाव अर्थ ध्येय वस्तु की किसी एक पर्याय के अभाव की दृष्टि को भी लिए हुए होता है और इससे ध्यान सर्वथा असत् नहीं ठहरता। अन्य चिंता के अभाव की विवक्षा में वह असत् (अभाव रूप) है। किन्तु विवक्षित अर्थ-विषय के अधिगम स्वभाव रूप सामर्थ्य की अपेक्षा से सत्रूप ही है।

तत्राऽऽत्मन्यासहाये यच्चिन्तायाः स्यान्निरोधनम्।

तद्ध्यानं तदभावो वा स्वसंवित्तिमयश्च सः।। (65)

किसी की भी सहायता से रहित उस केवल शुद्ध आत्मा में जो चिंता का नियंत्रण है उसका नाम ध्यान है अथवा उस आत्मा में अन्य चिंता के अभाव का नाम ध्यान है और वह स्वसंवेदन रूप है।

व्याख्या-पूर्व पद्य में जो बात मुख्यतः कही गयी है उसी को शुद्ध आत्मा पर घटित करते हुए यहाँ और स्पष्ट करके बतलाया गया है और यह साफ कर दिया है कि शुद्धात्मा के विषय में जो चिंता का नियंत्रण है अथवा अभाव है वह सब स्वसंवेदन रूप ध्यान है।

कौनसा श्रुतज्ञान ध्यान है और ध्यान का उत्कृष्ट काल

श्रुतज्ञानमुदासीनं यथार्थमतिनिश्चलम्।

स्वर्गापवर्गफलदं ध्यानमाऽऽन्तर्मुहूर्ततः।। (66)

जो श्रुतज्ञान उदासीन-राग-द्वेष से रहित उपेक्षामय यथार्थ और अत्यंत स्थिर है वह ध्यान है, अंतर्मुहूर्त पर्यंत रहता और स्वर्ग तथा मोक्षफल का दाता है।

अचेतनमिदं दृश्यमदृश्यं चेतनं तत्ः।

क्व रुष्यामि क्व तुष्यामि मध्यस्थोऽहं भवाम्यतः।। (46) समाधितंत्र

शरीर धनादि से बाहर से दिखाई देता है परन्तु अचेतन है उसमें कुछ समझबूझ नहीं है। जिसमें ज्ञान है वह चेतन आत्मा है परन्तु वह दिखाई नहीं देता, ऐसी दशा में सम्यक् दृष्टि आत्मा विचारता है कि यदि मैं शरीर से राग या द्वेष करूँ तो उसका क्या लाभ? वह तो ज्ञान शून्य अचेतन है और आत्मा दिखाई नहीं देता अतः उसमें राग-द्वेष का विकार कैसा किया जावे। इस कारण मुझे राग करना या द्वेष करना छोड़कर मध्यस्थ रहना ठीक है।

मूढ़ों से बोलना अयोग्य

अज्ञापितं न जानन्ति यथा मां ज्ञापितं तथा।

मूढात्मानस्ततस्तेषां वृथा मे ज्ञापनश्रम।। (58) समाधितंत्र

अंतरात्मा विचार करता है कि आत्मा की मिथ्या श्रद्धा मिथ्यात्व तथा अज्ञान का ऐसा बुरा प्रभाव है कि बहिरात्मा जीवों को शरीर आदि अन्य पदार्थों से भिन्न आत्मा का शुद्ध स्वरूप बिना समझाये तो मालूम होता ही नहीं परन्तु यदि उसको समझा जाय तो भी उसकी समझ में नहीं आता। चिरकाल के मिथ्या संस्कार से वे शरीर को ही आत्मा समझे हुए है।

कथन एवं मौन से हानि-लाभ

जनेभ्यो वाक ततः स्पन्दो मनसश्चित्तविभ्रमाः।

भवन्ति तस्मात्संसर्ग जनैर्योगी ततस्त्यजेत्।। (72) समाधितंत्र

मुनि को मनुष्यों के संसर्ग से दूर रहकर सदा आत्म-ध्यान, आत्म-चिंतन या आत्म-मनन करना चाहिए। क्योंकि मनुष्य आ करके अनेक प्रकार की सांसारिक बातें किया करते हैं, उन बातों को सुनकर मुनि के हृदय में राग-द्वेष भावों का क्षोभ उत्पन्न होना स्वाभाविक बात है जब हृदय में किसी प्रकार का क्षोभ पैदा हो जावे तब वह मुनि अपने शुद्ध आत्मा का चिन्तवन कैसे कर सकता है। इस कारण मुनि को जहाँ तक हो सके अन्य मनुष्यों के संसर्ग से दूर रहना चाहिए।

कठोर-कोमल स्वभाव के आध्यात्मिक पुरुष

वज्रादपि कठोराणि मृदुनि कुसुमादपि।

लोकोत्तराणां चेतासि को हि विज्ञातुमर्हति।। (भवभूति)

साधु वज्र के समान कठोर होते हैं, चारित्र में बड़े कठोर होते हैं परन्तु किसी को कष्ट नहीं देते, दूसरों के लिए वे मृदु, कमल के समान कोमल होते हैं। दूसरों के दुःखों में दुःखी हो जाते हैं। उनका ध्यान रहता है कि उनके द्वारा एकेन्द्रिय जीव को भी कष्ट न पहुँचे।

पाणिः पात्रं पवित्र भ्रमणपरिगतं भैक्षमक्षय्यमन्नं,
विस्तीर्णं वस्त्रमाशादशकमचपलं तल्पमस्दल्पमुर्वी।
येषां निःसंगतार्गीकरणपरिणतस्वात्मसंतोषिणस्ते,
धन्या संन्यस्तदैन्यव्यतिकरनिकराकर्मनिर्मूलयन्ति।।

वे धन्य हैं जिनका हाथ ही पवित्र पात्र है, भ्रमर द्वारा प्राप्त भिक्षा ही अक्षय भोजन है, लंबी-चौड़ी दसों दिशाएँ ही जिनका वस्त्र है, पृथ्वी ही जिनकी बड़ी शैय्या है, अंतःकरण के अनासक्ति योग से जो सदा संतुष्ट रहा करते है और दीनता के भावों को त्याग कर जन्म परंपरा से प्राप्त कर्मों का नाश करते हैं।

मुनि के अलौकिक आकिञ्चन्य धर्म

ति-विहेण जो विवज्जदि चेयणमियरं च सव्वहा संगं।
लोय-ववहार-विरदो णिग्गंथत्तं हवे तस्स।। (402)

जो लोक व्यवहार से विरक्त मुनि चेतन और अचेतन परिग्रह को मन वचन काय से सर्वथा छोड़ देता है उसके निर्ग्रंथपना अथवा आकिञ्चन्य धर्म होता है।

लोकव्यवहारविरत लोकानां व्यवहारः मानसम्मानदानपूजालाभादिलक्षणः तस्मात् विरतः विरक्तः निवृत्तः, अथवा संघयात्राप्रतिष्ठाप्रतिमाप्रासादोद्धरणादिपुण्यकरणादि रहितः।

मुनि दान, सम्मान, पूजा, प्रतिष्ठा, विवाह आदि लौकिक कर्मों से विरक्त होते ही हैं, अतः पुत्र, स्त्री, मित्र, बंधु-बांधव आदि सचेतन परिग्रह तथा जमीन-जायदाद, सोना, चाँदी, मणि, मुक्ता आदि अचेतन परिग्रह को तो पहले से ही छोड़ देते हैं। किन्तु मुनि अवस्था में भी शिष्य संघ आदि सचेतन परिग्रह से और पिच्छी-कमण्डलु आदि अचेतन परिग्रह से भी महत्व नहीं करते अथवा संघयात्रा, पंचकल्याणक आदि प्रतिष्ठा, प्रतिमा-प्रासाद (मूर्ति, मंदिर, धर्मशाला) आदि जीर्णोद्धार आदि पुण्य कार्य से भी विरक्त होना इसी का नाम आकिञ्चन्य है। मेरा कुछ भी नहीं है, इस प्रकार के भाव को आकिञ्चन्य कहते हैं अर्थात् यह मेरा है इस प्रकार के संस्कार को दूर करने के लिए अपने शरीर वगैरह से भी ममत्व न रखना आकिञ्चन्य धर्म है। शरीर वगैरह से भी निर्ममत्व होने से मोक्षपद की प्राप्ति होती है।

धैर्ययस्य पिता क्षमाश्च जननी शान्तिश्चिर गृहिणी।
सत्यं सुनुरयं दया च भगनि भ्रातः मन संयमः।।
शय्या भूमितलं दिशोऽपि वसनं ज्ञानामृतं भोजनं।
ये ते यस्य कुटुंबिनो वद सखे कस्मात् भीतो योगिनः।। (रत्नत्रय भूषण)

हे रानी! जिनके विशाल परिवार में इसका पिता धैर्य, माता क्षमा, दीर्घकालीन शांति पत्नी, सत्य पुत्र, दया बहिन, मन संयम भाई, पलंग भूमितल, दिशा वस्त्र, ज्ञानामृत

भोजन, रत्नत्रय आभूषण है। ऐसा विशाल परिवार जिनके हैं ऐसे साधु को किससे डर है? अर्थात् किसी से नहीं है।

अपने विश्वासों का विश्लेषण करें

इंसान और उसकी ख्वाहिशों के बीच सिर्फ एक चीज खड़ी होती है- उन्हें पूरी करने के लिए कोशिश करने की इच्छा-और यह विश्वास कि उन्हें पाना संभव है। **-रिचर्ड एम. डेवॉस**

विश्वास का नियम शायद सबसे महत्वपूर्ण मानसिक नियम है। यह नियम कहता है कि आप जिस चीज पर दृढ़ता से विश्वास करते हैं, वह आपकी वास्तविकता बन जाती है। आप देखी हुई चीजों पर विश्वास नहीं करते; दरअसल आप अपने विश्वास के अनुरूप ही देखते हैं। आप दुनिया को अपने विश्वासों, नजरियों, पूर्वाग्रहों और पहले से तय धारणाओं के चश्मे से देखते हैं। आप वो नहीं हैं, जो आप सोचते हैं कि आप हैं। सच तो यह है कि आप वही हैं, जो आप सोचते हैं।

प्रोवर्ब 23:7 में कहा गया है, जैसा इंसान ''अपने दिल में सोचता है, वैसा ही वह होता है।'' इसका मतलब यह है कि आप बाहर हमेशा वही काम करते हैं, जो अपने बारे में आपके सबसे भीतरी विश्वासों पर आधारित होते हैं।

मैथ्यू 9:29 में ईसा मसीह कहते हैं, ''तुम्हारी आस्था के अनुरूप ही तुम्हें दिया जाएगा।'' इसका मतलब यह है कि आपके प्रबल विश्वास हकीकत में बदल जायेंगे। उन्हीं से तय होगा कि आपके साथ क्या होता है।

हार्वर्ड के डॉ. विलियम जेम्स ने 1905 में कहा था, ''विश्वास वास्तविक तथ्य का निर्माण करता है।'' उन्होंने आगे कहा था, ''मेरी पीढ़ी की सबसे क्रांतिकारी खोज यह थी कि इंसान अपने अंदरूनी नजरिये को बदलकर अपनी जिंदगी के बाहरी पहलुओं को बदल सकता है।''

सोच बदलो, जिंदगी बदलो

जिंदगी में सारा सुधार आपने और अपनी संभावनाओं के बारे में विश्वास बदलने से होता है। निजी विकास के लिए आपको यह विश्वास बदलना होगा कि आप क्या कर सकते हैं और आपके लिए क्या संभव है। क्या आप अपनी आमदनी दोगुनी करना चाहेंगे? जाहिर है, चाहेंगे! बुनियादी सवाल है-क्या आप इसे संभव

मानते हैं? क्या आप आमदनी तिगुनी करना चाहेंगे? क्या आप इसे संभव मानते हैं?

आपकी शंका का स्तर जो भी हो, मुझे एक सवाल पूछने की अनुमति दें। क्या पहली नौकरी में मिली पहली तनख्वाह के बाद से अब तक आपकी आमदनी दोगुनी या तिगुनी नहीं हुई है? आपने जब कमाना शुरू किया था, तब की तुलना में क्या इस वक्त आप बहुत ज्यादा नहीं कमा रहे हैं? क्या इस तरह आप खुद ही यह साबित नहीं कर चुके हैं कि अपनी आमदनी को दोगुना या तिगुना करना संभव है? और आप पहले जो कर चुके हैं, उसे आप दोबारा-शायद बार-बार कर सकते हैं, बशर्ते आप सीख ले कि इसे कैसे किया जा सकता है। आपको तो बस यकीन करना होगा कि यह संभव है।

नेपोलियन हिल ने कहा था, ''इंसान का दिमाग जो सोच सकता है और यकीन कर सकता है, उसे वह हासिल भी कर सकता है।''

सफलता का आपका मास्टर प्रोग्राम

आत्म-अवधारणा (self-concept) की खोज मानवीय क्षमता के क्षेत्र में बीसवीं सदी की शायद सबसे क्रांतिकारी खोज थी। आप जिंदगी में जो भी करते या हासिल करते हैं, आपका हर विचार, भावना या काम आपकी आत्म-अवधारणा से नियंत्रित और निर्धारित होता है। आपकी आत्म-अवधारणा आपके कार्य-प्रदर्शन और प्रभाव के स्तर से पहले आती है और उसकी भविष्यवाणी करती है। आपकी आत्म-अवधारणा आपके मानसिक कंप्यूटर का मास्टर प्रोग्राम है। यह बुनियादी ऑपरेटिंग सिस्टम है। आप बाहरी संसार में जो भी हासिल करते हैं, वह आपकी आत्म-अवधारणा का ही परिणाम है।

मनोवैज्ञानिकों ने यह पता लगा लिया है कि आपकी आत्म-अवधारणा उन सारे विश्वासों, नजरियों, भावनाओं और रायों का महायोग होती है, जो आपकी अपने और संसार के बारे में होती हैं। इस वजह से आप हमेशा अपनी आत्म-अवधारणा के अनुरूप ही काम करते हैं, चाहे वह सकारात्मक हो या नकारात्मक।

कचरा अंदर, कचरा बाहर

आत्म-अवधारणा के बारे में एक और दिलचस्प खोज पर गौर करें। भले ही आपकी आत्म-अवधारणा आपके या संसार के बारे में गलत विश्वासों पर आधारित हो, लेकिन यही गलत विश्वास तथ्य बन जाते हैं। फिर आप उन्हीं के अनुरूप सोचेंगे,

महसूस करेंगे और काम करेंगे।

इस तरह अपने बारे में आपके विश्वास काफी हद तक व्यक्तिपरक (subjective) होते हैं। उनकी बुनियाद अक्सर तथ्यों पर टिकी ही नहीं होती। वे तो उस जानकारी का परिणाम होते हैं, जिसे अपने जिंदगी भर ग्रहण किया है और जिस तरीके से आपने उसे प्रोसेस किया है। आपका बचपन, आपके दोस्त और सहयोगी, आपका ध्यान और शिक्षण, आपके अनुभव-सकारात्मक और नकारात्मक दोनों ही- और हजारों अन्य चीजें आपके विश्वासों को आकार देती है।

खुद को सीमित करने वाले विश्वास सबसे बुरे होते हैं। अगर आपको यकीन है कि आपकी कोई सीमा है, चाहे यह सच हो या न हो, तो यह आपके लिए सच बन जाता है। अगर आप इस पर यकीन कर लेते हैं, तो आप इस तरह काम करेंगे, जैसे आपमें उस क्षेत्र से संबंधित योग्यता या प्रतिभा कम हो। खुद को सीमित करने वाले विश्वासों और अपनी लादी हुई सीमाओं से उबरना ही अक्सर आपके और आपकी पूरी संभावना को साकार करने के बीच खड़ी सबसे बड़ी बाधा होती है।

विशेषज्ञों को नजरअंदाज कर दे

अल्बर्ट आइंस्टीन को सीखने में अक्षम करार देकर बचपन में ही स्कूल से घर भेज दिया गया था। उनके माता-पिता को बताया गया कि यह लड़का शिक्षित हो ही नहीं सकता। माता-पिता ने इस बात को मानने से इंकार कर दिया और अंततः ऐसी व्यवस्था की, कि आइंस्टीन को उत्कृष्ट शिक्षा मिली।

डॉ. अल्बर्ट श्वेट्जर को भी स्कूल में यही समस्या आई थी। दरअसल, स्कूल वालों ने उनके माता-पिता को प्रोत्साहित किया कि वे उसे किसी मोची का एप्रेंटिस बना दे, ताकि बड़े होने पर उसके पास कम से कम एक सुरक्षित काम तो रहे। आइंस्टीन और श्वेट्जर, दोनों ही ने बीस साल की उम्र से पहले ही डॉक्टरेट हासिल की और बीसवीं सदी के इतिहास पर अपने कदमों के निशान छोड़े।

सीखने की अयोग्यताओं पर फॉरच्यून पत्रिका में एक लेख छपा था। व्यवसायियों पर केंद्रित इस लेख का निष्कर्ष था कि फॉरच्यून 500 कॉरपोरेशन्स के बहुत से प्रेसिडेंट्स और सीनियर एक्जीक्यूटिव्ज को स्कूल में खास प्रतिभाशाली या सक्षम नहीं माना जाता था। लेकिन मेहनत की बदौलत उन्होंने बाद में अपने उद्योग में भारी सफलता हासिल की।

थॉमस एडिसन को छठे ग्रेड में स्कूल से निकाल दिया गया था। टीचर्स ने उनके माता-पिता से साफ-साफ कह दिया था कि उन्हें कुछ सिखाने की कोशिश करना समय की बर्बादी है, क्योंकि वे कुछ भी नहीं सीख सकते और कतई स्मार्ट नहीं है। एडिसन बाद में जाकर आधुनिक युग के सबसे महान् आविष्कारक बने। इस तरह की कहानी हजारों बार दोहराई जा चुकी है।

खुद को सीमित करने वाले विश्वास कई बार तो सिर्फ एक अनुभव या टिप्पणी पर ही आधारित होते हैं। दुःखद बात यह है कि उनकी वजह से आप बरसों तक दबे रहते हैं। ज्यादातर लोग जिस क्षेत्र में खुद को अयोग्य मानते थे, बाद में उन्होंने उसी में महारत हासिल की। यह देखकर दूसरे तो हैरान हुए ही, उन्हें भी कोई कम हैरानी नहीं हुई। शायद आपके साथ भी ऐसा हो चुका होगा। आपको अचानक एहसास होता है कि उस क्षेत्र में अपने बारे में आपके सीमित करने वाले विचार दरअसल सच्चाई पर आधारित थे ही नहीं।

आप अपने अंदाजे से बेहतर हैं

लेखक लुइसे हे के अनुसार जीवन में हमारी ज्यादातर समस्याओं की जड़ इस भावना में है, ''मैं पर्याप्त अच्छा नहीं हूँ।'' डॉ. अल्फ्रेड एडलर ने कहा है कि पाश्चात्य व्यक्ति की नैसर्गिक विरासत ''हीनता'' की भावनाएँ हैं, जो बचपन में ही शुरू हो जाती है और अधिकांशतः आजीवन चलती रहती हैं।

अपने नकारात्मक विश्वासों, जिनमें से ज्यादातर गलत होते है, की वजह से कई लोग अकारण ही अपनी बुद्धि, प्रतिभा, क्षमता, रचनात्मकता या योग्यता को सीमित मान लेते हैं। लगभग हर मामले में ये विश्वास झूठे होते हैं।

दरअसल आपमें इतनी ज्यादा क्षमता है कि आप इसका पूरा इस्तेमाल इस जिंदगी में तो नहीं कर सकते। कोई भी आपसे बेहतर या स्मार्ट नहीं है। लोग तो बस अलग-अलग वक्त पर अलग-अलग क्षेत्रों में ज्यादा स्मार्ट या बेहतर होते हैं।

आप भी जीनियस बन सकते हैं

बहुत बुद्धियों (multiple intelligences) की अवधारणा के प्रवर्तक हार्वर्ड यूनिवर्सिटी के डॉ. हॉवर्ड गार्डनर के अनुसार आपमें कम से कम दस अलग-अलग रुचियाँ होती हैं, जिनमें से किसी एक में आप जीनियस हो सकते हैं।

दुर्भाग्य से, स्कूल-कॉलेजों में सिर्फ दो ही बुद्धियों को नापा जाता है और उन्हीं

पर ध्यान दिया जाता है-शाब्दिक और गणितीय। लेकिन अन्य बुद्धियाँ भी होती है, जैसे विजियो-स्पेशियल बुद्धि (कला, डिजाइन), उद्यमी बुद्धि (बिजनेस खड़ा करना), शारीरिक या काइनेस्थेटिक (खेलकूद), सांगीतिक बुद्धि (वाद्य यंत्र बजाना या संगीत की रचना करना), सामाजिक बुद्धि (दूसरों के साथ मिलकर चलना), इंट्रापर्सनल बुद्धि (गहरे स्तर पर खुद को समझना), सहज बुद्धि (intuitive intelligence/सही चीज करने या कहने की योग्यता), कलात्मक बुद्धि (कलाकृतियाँ बनाना) या अमूर्त बुद्धि (भौतिकी, विज्ञान)। आप इनमें से किसी में भी जीनियस हो सकते हैं।

जैसा कि एक सिटी स्कूल के साइन बोर्ड पर लिखा था, ''ईश्वर घटिया सामान नहीं बनाता।'' हर इंसान में किसी न किसी क्षेत्र में उत्कृष्ट बनने की क्षमता होती है। इस वक्त आपके भीतर कम से कम एक और शायद कई अलग-अलग बुद्धियों में जीनियस बनने या असाधारण स्तर पर काम करने की योग्यता है। आपका काम तो सिर्फ यह पता लगाना है कि वह बुद्धि कौनसी है।

अपने प्रति आपकी जिम्मेदारी यह है कि आप सीमित करने वाले इन सारे विश्वासों को छोड़ दें और यह मान लें कि आप असाधारण रूप से सक्षम और गुणी इंसान हैं। आपको महानता के लिए बनाया गया है और सफलता के लिए गढ़ा गया है। आपमें ऐसी क्षमताएँ और योग्यताएँ हैं, जिनका आज तक दोहन नहीं हुआ। इस वक्त भी आपमें हर वह लक्ष्य हासिल करने की योग्यता है, जो आप अपने लिए तय कर सकते हैं, बशर्ते आप इसे पाने के लिए पर्याप्त समय तक पर्याप्त कड़ी मेहनत करना चाहते हों।

आपके विश्वास पैदाइशी नहीं होते, सीखे जाते हैं

अच्छी खबर यह है कि सभी विश्वास सीखे जाते हैं। इसलिए उन्हें छोड़ा भी जा सकता है, खासतौर पर तब, जब उनसे आपको मदद न मिल रही हो। जब आप दुनिया में आते हैं, तो आपके पास कोई विश्वास नहीं होता। न अपने बारे में, न धर्म के बारे में, न अपनी राजनीतिक पार्टी के बारे में, न दूसरे लोगों के बारे में, न ही आमतौर पर दुनिया के बारे में। आज आप बहुत-सी चीजें ''जानते'' हैं। लेकिन जैसा कि कॉमेडियन जॉश बिलिंग्स ने लिखा था, ''इंसान जो जानता है, उससे उसे चोट नहीं पहुँचती। चोट तो वह जानने से पहुँचती है, जो उसके लिए सच नहीं है।''

आप अपने बारे में जिन चीजों को सच मानते हैं, उनमें से कई तो सच हैं ही

नहीं और ये लगभग हमेशा आपको सीमित कर देते हैं। अपनी प्रचुर संभावना का ताला खोलने का शुरुआती बिंदु अपने सीमित करने वाले विश्वासों को पहचानना और खुद से पूछना है, ''क्या हो, अगर ये जरा भी सच न हों?''

हो सकता है कि आपमें किसी ऐसे क्षेत्र से संबंधित असाधारण योग्यता हो, जिसके बारे में आप खुद को खास अच्छा नहीं मानते, जैसे विक्रय, उद्यमिता, लोक-संभाषण या धनार्जन?

खुद के बारे में अलग सोचें

मैंने दुनिया भर के लाखों लोगों को ये सिद्धांत सिखाये हैं। मेरे फाइल ड्रॉअर्स में ऐसे बहुत से लोगों के पत्र और ई-मेल्स भरे हैं, जिन्होंने सीमित करने वाले विश्वासों के बारे में कभी सुना ही नहीं था। लेकिन इसका पता चलने के बाद उन्होंने अपने बारे में अपना पूरा नजरिया ही बदल लिया। वे जिंदगी के प्रमुख क्षेत्रों में खुद को पहले से ज्यादा समर्थ, सक्षम और योग्य मानने लगे।

उनकी जिंदगी फौरन बदल गई और परिणाम भी। उनकी आमदनी दोगुनी, तिगुनी, चौगुनी हो गई। कई तो मिलियनेअर मल्टीमिलियनेअर भी बन गये। वे निचले स्तर से कंपनी के शीर्षस्थ स्तर तक पहुँच गये। वे अपनी सेल्स टीम के सबसे बुरे सेल्समैन से सबसे ज्यादा आमदनी वाले सेल्समैन बन गये।

अपने और अपनी व्यक्तिगत क्षमताओं के बारे में विश्वास बदलने के बाद उन्होंने नई योग्यताएँ सीखी और नई चुनौतियाँ लीं। उन्होंने ज्यादा बड़े लक्ष्य बनाये और उन्हें हासिल करने में दिल से जुट गये। अपने विश्वासों पर सवाल करके और अपनी सीमाएँ न मानकर उन्होंने अपनी जिंदगी और कैरियर की बागडोर पूरी तरह अपने हाथ में ले ली और अपने सपने साकार किये और जो अनगिनत लोग कर चुके हैं, वह आप भी कर सकते हैं।

मनचाहे विश्वास चुनें

कल्पना करे कि ''विश्वास की दुकान'' है, काफी हद तक किसी कंप्यूटर सॉफ्टवेयर स्टोर की तरह, जहाँ जाकर आप कोई भी विश्वास खरीद सकते हैं और अपने अवचेतन मन में उसकी प्रोग्रामिंग कर सकते हैं। अगर आप कोई भी विश्वास चुन सकते हों, तो कौनसा विश्वास आपकी सबसे ज्यादा मदद करेगा?

मेरी सलाह तो है कि आप यह विश्वास चुने-''मुझे जिंदगी में महान सफलता

मिलना तय है।''

अगर आपको पूरा विश्वास है कि आपको महान् सफलता मिलना तय है, तो आप ऐसे चलेंगे, बोलेंगे और काम करेंगे, जैसे जिंदगी में आपके साथ होने वाली हर घटना आपको सफल बनाने की विराट योजना का हिस्सा है। हर क्षेत्र के शीर्षस्थ लोगों का विश्वास यही होता है।

अच्छाई की तलाश करें

सफल लोग हर स्थिति में अच्छाई की तलाश करते हैं। वे जानते हैं कि यह हमेशा मौजूद रहती है। चाहे उन्हें कितने ही झटके लगे, चाहे कितनी ही विपत्तियाँ सामने आये, वे हमेशा अपने साथ होने वाली हर घटना में कोई न कोई अच्छाई खोजने की अपेक्षा करते हैं। उन्हें विश्वास होता है कि हर विपत्ति उस महान् योजना का हिस्सा है, जो उन्हें अवश्यंभावी सफलता की ओर लगातार ले जा रही है।

अगर आपके विश्वास सकारात्मक हैं, तो आप हर विपत्ति या मुश्किल में मूल्यवान् सबक खोज लेंगे। आपको यकीन होगा कि ऐसे कई सबक हैं, जो आपको सफलता हासिल करने और उसे कायम रखने की राह पर सीखने होंगे। इसलिए आप हर समस्या को सीखने का अनुभव मानते हैं। नेपोलियन हिल ने लिखा था, ''हर मुश्किल या विपत्ति के भीतर उसके बराबर या उससे ज्यादा बड़े लाभ का बीज होता है।''

ऐसे नजरिये के साथ आप अपने साथ होने वाली हर चीज से फायदा उठाते हैं, अपने प्रमुख निश्चित उद्देश्य हासिल करने की ओर तेजी से बढ़ते हैं।

काम करके भावना महसूस करें

मनोविज्ञान और तत्त्वमीमांसा (metaphysics) में उलटाव (reversibility) का नियम कहता है, ''काम करने की भावना जगाने का नुस्खा है, काम करके भावना को जगाना।''

इसका मतलब यह है कि शुरुआत में शायद आपको महान् सफलता का एहसास नहीं होगा, जैसा आप चाहते हैं। आपके पास वह आत्मविश्वास नहीं होगा, जो सफल उपलब्धियों के पुराने रिकॉर्ड से मिलता है। आपको अक्सर अपनी योग्यताओं पर शंका होगी और असफलता का डर होगा। आपको लगेगा कि आप पर्याप्त अच्छे नहीं हैं, कम से कम उस वक्त तो नहीं।

लेकिन अगर आप ''जैसे'' सिद्धांत पर काम करते हैं, जैसे आप पहले से ही वह व्यक्ति बन चुके हैं, जो आप बनना चाहते हैं, जिसमें सभी मनचाहे गुण और प्रतिभाएँ हैं, तो आपके काम ही अपने साथ पैदा होने वाली भावनाओं को जगा देंगे। दरअसल, उलटाव के नियम के अनुसार काम करके ही आप अपनी मनचाही भावना जगाते हैं।

अगर आप अपने बिजनेस में शीर्षस्थ व्यक्ति बनना चाहते हैं, तो शीर्षस्थ व्यक्तियों जैसे कपड़े पहनें। खुद को शीर्षस्थ लोगों जैसा बनाये। अपने काम की आदतें उनके जैसी बनाये। अपने क्षेत्र के सबसे सफल लोगों को अपना रोल मॉडल बनाये। संभव हो, तो उनसे सलाह ले कि तेजी से आगे बढ़ने के लिए क्या किया जाये और वे आपको जो भी सलाह दें, उस पर फौरन अमल करें। कर्म करें।

जब आप शीर्षस्थ लोगों की तरह चलना, बोलना, कपड़े पहनना और व्यवहार करना शुरू कर देते हैं, तो जल्द ही आप शीर्षस्थ लोगों जैसा महसूस भी करने लगते हैं। आप दूसरों के साथ वैसा ही व्यवहार करेंगे, जैसा शीर्षस्थ व्यक्ति करते हैं। उसी तरह से काम करेंगे, जिस तरह शीर्षस्थ व्यक्ति करते हैं। नतीजा यह होगा कि कुछ समय बाद ही आपको भी वही परिणाम मिलने लगेंगे, जो शीर्षस्थ व्यक्तियों को मिलते हैं। जल्दी ही आप खुद शीर्षस्थ व्यक्ति बन जायेंगे। यह कहना घिसा-पिटा लग सकता है, ''किसी चीज नाटक करो, जब तक कि उसकी आदत न पड़ जाये!'' लेकिन इसमें बड़ी सच्चाई है।

मानसिक समतुल्य बनाये

आध्यात्मिक गुरु एम्मेट फॉक्स ने एक बार कहा था, ''जिंदगी में आपका प्रमुख काम अपने भीतर उस चीज का मानसिक समतुल्य बनाना है, जिसे आप बाहरी दुनिया में साकार करना चाहते हैं और आनंद लेना चाहते हैं।''

आपको अपने भीतर ऐसे विश्वास बनाने पर ध्यान केंद्रित करना चाहिए, जो उस बड़ी सफलता के अनुरूप हो, जो आप अपने बाहरी संसार में पाना चाहते हैं। आप यह काम कैसे करें? खुद को सीमित करने वाले विश्वासों को चुनौती देकर, उन्हें अस्वीकार करके और फिर इस तरह काम करके, जैसे उनका अस्तित्व ही न हो।

आप अपने क्षेत्र में अपना ज्ञान और योग्यताएँ बढ़ाकर नये विश्वासों के विकास को शक्ति देते हैं। तब आप उस बिंदु पर पहुँच जाते हैं, जहाँ आप किसी भी

चुनौती या आवश्यकता से निबटने में खुद को सक्षम मानने लगते हैं। आप हर क्षेत्र में ज्यादा बड़े और रोमांचक लक्ष्य बनाकर नये, सकारात्मक विश्वासों के विकास की गति बढ़ा देते हैं। अंत में, आप लगातार इस तरह काम करते हैं, जैसे आप उसी वक्त वैसे बन चुके हैं, जैसे आप बनना चाहते हैं।

आपका लक्ष्य अपने द्वारा की या कही गई हर चीज में मानसिक समतुल्य बनाकर, सफलता के लिए अपने अवचेतन मन की दोबार प्रोग्रामिंग करना है।

अपनी नई आत्म-छवि के अनुरूप व्यवहार करें

आप नये विश्वासों के अनुरूप काम करके उन्हें विकसित करते हैं। आप इस तरह काम करते हैं, जैसे आपको पहले से ही यकीन हो कि आपमें वे क्षमताएँ और योग्यताएँ हैं। आप हर किसी के साथ सकारात्मक, आशावादी और सुखी व्यक्ति जैसा व्यवहार करते हैं। आप इस तरह काम करते हैं, जैसे आप असफल हो ही नहीं सकते। आप इस तरह काम करते हैं, जैसे आपको सफलता की गारंटी मिल चुकी हो और सिर्फ आप ही उसके बारे में जानते हों।

आपको एहसास हो जाता है कि आप अपने हर काम और बात से अपने चरित्र और व्यक्तित्व का लगातार विकास कर रहे हैं, उसे आकार दे रहे हैं और नियंत्रित कर रहे हैं।

चूँकि आप वही बन जाते हैं, जिसके बारे में आप सोचते हैं, इसलिए आपको वही कहना और करना चाहिए, जो आपके मनचाहे आदर्शों और दीर्घकालीन भावी परिकल्पना के सामंजस्य में हो। आपको उन गुणों और व्यवहारों के बारे में ही सोचना और बोलना चाहिए, जो आपको अपने आदर्श स्वरूप की ओर बढ़ाये और उन लक्ष्यों को हासिल करने की ओर ले जाये, जिन्हें आप पाना चाहते हैं।

निर्णय लें

आज ही खुद को सीमित करने वाले विश्वासों को चुनौती देने और अस्वीकार करने का निर्णय लें, जिन्होंने आपको पीछे रोक रखा है। अपने भीतर झाँके और जिंदगी के उन क्षेत्रों पर सवाल करे, जहाँ आपको अपनी योग्यताओं या गुणों के बारे में शंका हो। आप अपने मित्रों और परिवार के सदस्यों से पूछ सकते हैं कि क्या उन्हें आपमें कोई नकारात्मक विश्वास नजर आता है।

अक्सर, दूसरे लोगों को आपके सीमित करने वाले विश्वासों का पता होता है,

जबकि आपको नहीं होता। इन नकारात्मक विश्वासों को जानने के बाद खुद से पूछे, क्या इसका विपरीत सच हो सकता है?

क्या हो, अगर आपमें उस क्षेत्र में असाधारण सफलता पाने की क्षमता हो, जहाँ आप वर्तमान में खुद पर शंका करते हैं? क्या हो, अगर बचपन से ही किसी खास क्षेत्र में आपकी प्रोग्रामिंग जीनियस जैसी की गई हो? उदाहरण के तौर पर, क्या हो अगर आपके भीतर इसी वक्त वह सारा पैसा कमाने और इकट्ठा करने की योग्यता हो, जो आप अपनी जिंदगी में कमाना चाहते हैं? क्या हो, अगर पैसे के मामले में आपमें ''पारस पत्थर का स्पर्श'' (midas touch) हो?

अगर आप इन विचारों पर पूरा विश्वास कर ले और इन्हें सच मान ले, तो आप आज जो कर रहे हैं, उससे क्या-क्या अलग करेंगे?

अपने शब्दों और कामों में तालमेल रखें

आपके विश्वास हमेशा आपके शब्दों और कामों में प्रकट होते हैं। यह सुनिश्चित करे कि आप आगे जो भी कहे और करे, वह आपके वांछित विश्वासों के अनुरूप हो और उस मनचाहे व्यक्तित्व के भी, जिसे आप पाना चाहते हैं। वक्त के साथ आप सीमित करने वाले विश्वासों की जगह, जीवन बढ़ाने वाले विश्वास रखने लगेंगे। समय के साथ आप सफलता की प्रोग्रामिंग कर लेंगे। जब यह होगा, तो आपके बाहरी जीवन का इतना जबर्दस्त कायाकल्प होगा कि आपके आस-पास के लोग और आप खुद हैरान रह जायेंगे।

अपने विश्वासों का विश्लेषण करें

''इस तरह काम करें जैसे!'' अगर आप अपने क्षेत्र के सबसे योग्य और सम्मानित व्यक्तियों में से एक होते, तो वर्तमान से किस तरह अलग सोचते, काम करते और महसूस करते?

कल्पना करे कि पैसे के मामले में आपमें ''पारस पत्थर जैसा स्पर्श'' है।

खुद को सीमित करने वाले विश्वासों को पहचाने, जिन्होंने आपको पीछे रोक रखा है। अगर वे गलत हो, तो आप कैसे काम करेंगे?

एक विश्वास चुने, जिसे आप दिल की गहराई में सबसे ज्यादा पसंद करेंगे। ऐसा नाटक करे, जैसे आप इसे अपने बारे में इसी वक्त सच मानते हो और इसमें विश्वास करते हों।

इस वक्त अपने सामने की सबसे मुश्किल स्थिति पर गौर करें। इसमें कौनसे मूल्यवान् सबक छिपे हो सकते हैं, जो भविष्य में बेहतर बनने में आपकी मदद कर सकते हैं?

स्व-आत्म चिंतन-श्रद्धान-ज्ञान-आचरण से मोक्ष

(चाल : मन रे! तू काहे न धीर धरे....., सायोनारा.....)

जिया रे! तू स्व-चिंतन करऽऽ
जिससे होगा आत्म श्रद्धानऽऽ जिससे होंगे ज्ञान-आचरणऽऽ...(ध्रुव)

तू तो आत्मा चैतन्यपूर्णऽऽ तन-मन-इन्द्रिय परेऽऽ
तू तो स्वयंभू-स्वयंपूर्णऽऽ जन्म-जरा-मरण परेऽऽ
(तू तो) सच्चिदानंद पूरेऽऽ...जिया रे...(1)

तन-मन-इन्द्रिय नहीं है चैतन्यऽऽ चैतन्य से भले वे संयुक्तऽऽ
यथा आकाश नहीं है नीला वर्णऽऽ भले नीला वर्ण होता दृश्यमानऽऽ
आकाश तो अमूर्तिक-अनंत/(शाश्वत)ऽऽ पौद्गलिक रंग युक्त आकाशऽऽ...जिया रे...(2)

जन्म-जरा-मृत्यु होते हैं तन केऽऽ माँस रक्तादि से तन निर्मितऽऽ
रज-वीर्य से हुआ तन का जन्मऽऽ ये सभी पुद्गल/(भौतिक) जनितऽऽ
तू तो अमूर्तिक-स्वयंभू-शाश्वतऽऽ...जिया रे...(3)

इन्द्रिय-मन भी होते तन समऽऽ तथाहि होते (है)D.N.A., R.N.A./(हॉर्मोन)ऽऽ
सत्ता-संपत्ति-प्रसिद्धि-डिग्री तोऽऽ प्रत्यक्ष से तुम से अति भिन्नऽऽ
ये सभी कर्मजनित परिणामऽऽ...जिया रे...(4)

शत्रु-मित्र-भाई-बंधु-कुटुम्बऽऽ सभी (है) स्व-स्व कर्मजनित परिणामऽऽ
राग द्वेष मोह काम क्रोधादि विभावऽऽ द्रव्य कर्म से जायमान परिणामऽऽ
तू तो द्रव्य भाव नोकर्म से भिन्नऽऽ...जिया रे...(5)

ऐसा ही तू करो चिंतन-ध्यानऽऽ स्वाध्याय-चर्चा-अनुप्रेक्षाऽऽ
लेखन-प्रवचन-शोध व बोधऽऽ आत्म परिशोधन-परिणमनऽऽ
संसारिक द्वंद्वों से होकर भिन्नऽऽ...जिया रे...(6)

एकांत-शांत व मौन में रहोऽऽ निस्पृह-निराडम्बर-वीतरागीऽऽ

आत्म संवेदन-आत्मलीनता में रहोऽऽ संकल्प-विकल्प-संक्लेश शून्यऽऽ
स्वयं में ही स्वयं परिपूर्णऽऽ...जिया रे...(7)

परम रहस्य व परम यह सत्यऽऽ अज्ञानी-मोही से अगम्य (अज्ञात)ऽऽ
सर्वज्ञ ज्ञानगम्य स्व-श्रद्धा-प्रज्ञा गम्यऽऽ लौकिक ज्ञान-विज्ञान अगम्यऽऽ
'कनक' तेरे ये अनुभवगम्यऽऽ अतः तू आत्मन् अति भाग्यवान्ऽऽ...जिया रे...(8)

सीपुर, दिनांक 27.01.2017, रात्रि 9.02

संदर्भ-

लोयालोय-विभागं, तम्मिद्विय सव्व-दव्व-पज्जायं।
तिय-काल-गदं सव्वं, जाणंति हु एक्क-समएण।। (18)

अर्थ-अनुपम स्वरूप से संयुक्त, कृतकृत्य, नित्य, निरंजन, निरोग, निर्वद्य, निष्पाप, स्व-आधार और निर्मल ज्ञान से युक्त सिद्ध परमेष्ठी लोक और अलोक के विभाग को, लोक स्थित सर्व द्रव्यों और उनकी त्रिकालवर्ती सब पर्यायों को एक ही समय में जानते हैं।

जाइ-जरा-मरणेहिं, णिम्मुक्का णिम्मला अणक्खयरा।
अवगद-वेदा सव्वे, अणंत-बोहा अणंत-सुहा।। (19)
किदकिच्चा सव्वण्हू, सत्ताघादा सदा-सिवा सुद्धा।
परमेट्ठी परम-सुही, सव्वगया सव्व-दरिसीय।। (20)
अव्वावाहमणंतं, अक्खयमणुवममणिंदियं सोक्खं।
अप्पुट्ठं भुंजंति हु, सिद्धा सदा-सदा सव्वे।। (21)

अर्थ-जन्म, जरा और मरण से विनिर्मुक्त, निर्मल, अनक्षर (शब्दातीत), वेद से रहित, अनंतज्ञानी, अनंतसुखी, कृतकृत्य, सर्वज्ञ, स्व-सत्ता से सब कर्मों का घात करने वाले, सदाशिव, शुद्ध, परम पद में स्थित, परम सुखी, सर्वगत, सर्वदर्शी, ऐसे सर्व सिद्ध अव्याबाध, अनंत, अक्षय, अनुपम और अतीन्द्रिय सुख का निरंतर भोग करते हैं।

सिद्धत्व के कारण

जह चिर-संचिदमिंधणमणलो पवणाहदो लहुं दहइ।
तह कम्मिंधणमहियं, खणेण झाणाणलो दहइ।। (22)

अर्थ-जिस प्रकार चिर-सञ्चित ईंधन को पवन से आहत अग्नि शीघ्र ही जला

देती है, उसी प्रकार ध्यानरूपी अग्नि बहुत भारी कर्मरूपी ईंधन को क्षण-मात्र में जला देती।

जो खविद-मोह-कलुसो, विसय-विरत्तो मणो णिरुंभित्ता।
समवट्ठिदो सहावे, सो पावइ णिव्वुदिं सोक्खं।। (23)

अर्थ-जो दर्शनमोह और चारित्रमोह को नष्ट कर विषयों से विरक्त होता हुआ मन को रोककर (आत्म) स्वभाव में स्थित होता है वह मोक्ष-सुख को प्राप्त करता है।

जस्स ण विज्जदि रागो, दोसो मोहो व जोग-परिकम्मो।
तस्स सुहासुह-दहण-ज्झाणमओ जायदे अगणी।। (24)

अर्थ-जिसके राग, द्वेष, मोह और योग-परिकर्म (योग-परिणति) नहीं है उसके शुभाशुभ (पुण्य-पाप) को जलाने वाली ध्यानमय अग्नि उत्पन्न होती है।

दंसण-णाण-समग्गं, झाणं णो अण्ण-दव्व-संसत्तं।
जायदि णिज्जर-हेदू, सभाव-सहिदस्स साहुस्स।। (25)

अर्थ-(शुद्ध) स्वभाव युक्त साधु का दर्शन-ज्ञान से परिपूर्ण ध्यान निर्जरा का कारण होता है, अन्य द्रव्यों से संसक्त वह (ध्यान) निर्जरा का कारण नहीं होता।

जो सव्व-संग-मुक्को, अणण्ण-मणो अप्पणो सहावेण।
जाणदि पस्सदि आदं, सो सग-चरियं चरदि जीवो।। (26)

अर्थ-जो (अंतरंग-बहिरंग) सर्व संग से रहित और अनन्यमन (एकाग्रचित्त) होता हुआ अपने चैतन्य स्वभाव से आत्मा को जानता एवं देखता है, वह जीव आत्मीय चारित्र का आचरण करता है।

णाणम्मि भावणा खलु, कादव्वा दंसणे चरित्ते य।
ते पुण आदा तिण्णि वि, तम्हा कुण भावणं आदे।। (27)

अर्थ-ज्ञान, दर्शन और चारित्र में भावना करनी चाहिए। यद्यपि वे तीनों (दर्शन, ज्ञान और चारित्र) आत्मस्वरूप हैं अतः आत्मा में ही भावना करो।

अहमेक्को खलु सुद्धो, दंसण-णाणप्पगो सदारूवी।
ण वि अत्थि मज्झि किंचि वि, अण्णं परमाणुमेत्तं पि।। (28)

अर्थ-मैं निश्चय से सदा एक, शुद्ध, दर्शन-ज्ञानात्मक और अरूपी हूँ। परमाणु मात्र (प्रमाण भी) अन्य कुछ मेरा नहीं है।

णत्थि मम कोइ मोहो, बुज्झो उवजोगमेवमहमेगो।

इह भावणाहि जुत्तो, खवेइ दुट्ठट्ठ-कम्माणिं।। (29)

अर्थ-मोह मेरा कुछ भी नहीं है, एक ज्ञान दर्शनोपयोग रूप ही मैं जानने योग्य हूँ; ऐसी भावना से युक्त जीव दुष्ट-कर्मों को नष्ट करता है।

णाहं होमि परेसिं, ण मे परे संति णाणमहमेक्को।

इदि जो झायदि झाणे, से मुच्चइ अट्ठ-कम्मेहिं।। (30)

अर्थ-न मैं पर पदार्थों का हूँ और न पर पदार्थ मेरे हैं, मैं तो ज्ञान-स्वरूप अकेला ही हूँ; इस प्रकार जो ध्यान में चिंतन करता है वह आठ कर्मों से मुक्त होता है।

चित्त-विरामे विरमंति, इंदिया इंदियासु विरदेसुं।

आद-सहावम्मि रदी, होदि पुढं तस्स णिव्वाणं।। (31)

अर्थ-चित्त के शांत होने पर इन्द्रियाँ शांत होती हैं और इन्द्रियों के शांत होने पर आत्म-स्वभाव में रति होती है, फिर उसका स्पष्टतया निर्वाण होता है।

णाहं देहो ण मणो, ण चेव वाणी ण कारणं तेसिं।

एवं खलु जो भाओ, सो पावइ सासयं ठाणं।। (32)

अर्थ-न मैं देह हूँ, न मन हूँ, न वाणी हूँ और न उनका कारण ही हूँ। इस प्रकार का जो भाव है (उसे भाने वाला) वह शाश्वत स्थान को प्राप्त करता है।

देहो व मणो वाणी, पोग्गल-दव्वं परोत्ति णिद्दिट्ठं।

पोग्गल-दव्वं पि पुणो, पिंडो परमाणु-दव्वाणं।। (33)

अर्थ-देह के सदृश मन और वाणी पुद्गल-द्रव्यात्मक पर है ऐसा कहा गया है। पुनः पुद्गल द्रव्य भी परमाणु-द्रव्यों का पिण्ड है।

णाहं पुग्गलमइओ, ण दे मया पुग्गला कदा पिंडं।

तम्हा हि ण देहो हं, कत्ता वा तस्स देहस्स।। (34)

अर्थ-न मैं पुद्गलमय हूँ और न मैंने उन पुद्गलों को पिण्ड (स्कंध) रूप किया है, इसलिए न मैं देह हूँ और न इस देह का कर्त्ता ही हूँ।

एवं णाणप्पाणं, दंसण-भूदं अदिंदियमहत्थं।

धुवममलमणालंबं, भावेमं अप्पयं सुद्धं।। (35)

अर्थ-इस प्रकार ज्ञानात्मक, दर्शनभूत, अतीन्द्रिय, महार्थ, नित्य, निर्मल और

निरालंब शुद्ध आत्मा का चिंतन करना चाहिए।

णाहं होमि परेसिं, ण मे परे संति णाणमहमेक्को।

इदि जो झायदि झाणे, सो अप्पाणं हवदि झावो।। (36)

अर्थ-न मैं पर पदार्थों का हूँ और न पर पदार्थ मेरे हैं मैं तो ज्ञानमय अकेला हूँ, इस प्रकार जो ध्यान में आत्मा का चिंतन करता है वही ध्याता है।

जो एवं जाणित्ता, झादि परं अप्पयं विसुद्धप्पा।

अणुवममपारमदिसय, सोक्खं पावेदि सो जीओ।। (37)

अर्थ-जो विशुद्ध आत्मा इस प्रकार जानकर उत्कृष्ट आत्मा का ध्यान करता है वह जीव अनुपम, अपार और अतिशय सुख प्राप्त करता है।

णाहं होमि परेसिं, ण मे परे णत्थि मज्झमिह किंचि।

एवं खलु जो भावइ, सो पावइ सव्व-कल्लाणं।। (38)

अर्थ-न मैं पर पदार्थ का हूँ और न पर पदार्थ मेरे हैं, यहाँ मेरा कुछ भी नहीं है; जो इस प्रकार भावना भाता है वह सब कल्याण पाता है।

उड्ढोध-मज्झ-लोए, ण मे परे णत्थि मज्झमिह किंचि।

इह भावणाहि जुत्तो, सो पावइ अक्खयं सोक्खं।। (39)

अर्थ-यहाँ ऊर्ध्वलोक, अधोलोक और मध्यलोक में पर पदार्थ मेरे कुछ भी नहीं है, यहाँ मेरा कुछ भी नहीं है। इस प्रकार की भावनाओं से युक्त वह जीव अक्षय-सुख पाता है।

मद-माण-माय-रहिदो, लोहेण विवज्जिदो य जो जीवो।

णिम्मल-सहाव-जुत्तो, सो पावइ अक्खयं ठाणं।। (40)

अर्थ-जो जीव मद, मान एवं माया से रहित; लोभ से वर्जित और निर्मल स्वभाव से युक्त होता है वह अक्षय स्थान को पाता है।

परमाणु-पमाणं वा, मुच्छा देहादिएसु जस्स पुणो।

सो ण विजाणदि समयं-सगस्स सव्वागम-धरो वि।। (41)

अर्थ-जिसके परमाणु प्रमाण भी देहादिक में राग है, वह समस्त आगम का धारी होकर भी अपने समय (आत्मा) को नहीं जानता है।

तम्हा णिव्वुदि-कामो, रागं देहेसु कुणदु मा किंचि।

देह-विभिण्णो अप्पा, झायव्वो इंदियादीदो।। (42)

अर्थ-इसलिए हे मोक्षाभिलाषी! देह में कुछ भी राग मत करो। (तुम्हारे द्वारा) देह से भिन्न अतीन्द्रिय आत्मा का ध्यान किया जाना चाहिए।

देहत्थो देहादो, किंचूणों देह-वज्जिओ सुद्धो।
देहायारो अप्पा, झायव्वो इंदियातीदो।। (43)

अर्थ-देह स्थित, देह से कुछ कम, देह से रहित, शुद्ध, देहाकार और इन्द्रियातीत आत्मा का ध्यान करना चाहिए।

झाणे जदि णिय-आदा, णाणादो णावभासदे जस्स।
झाणं होदि ण तं पुण, जाण पमादो हु मोह-मुच्छा वा।। (44)

अर्थ-जिस जीव के ध्यान में यदि ज्ञान से निज आत्मा का प्रतिभास नहीं होता है तो फिर वह ध्यान नहीं है। उसे (तुम) प्रमाद, मोह अथवा मूर्च्छा ही जानो।

गयसित्थ-मूस-गब्भायारो रयणत्तयादि-गुण-जुत्तो।
णिय-आदा झायव्वो, खय-रहिदो जीव-घण-देसो।। (45)

अर्थ-मोम से रहित मूसक के (अभ्यंतर) आकाश के आकार, रत्नत्रयादि गुणों से युक्त, अविनश्वर और अखण्ड-प्रदेशी निज आत्मा का ध्यान करना चाहिए।

जो आद-भाव-णमिणं, णिच्चुव-जुत्तो मुणी समाचरदि।
सो सव्व-दुक्ख-मोक्खं, पावइ अचिरेण कालेण।। (46)

अर्थ-जो साधु नित्य उद्योगशील होकर इस आत्म-भावना का आचरण करता है वह थोड़े समय में ही सब दुःखों से छुटकारा पा लेता है।

कम्मे णोकम्मम्मि य, अहमिदि अहयं च कम्म-णोकम्मं।
जायदि सा खलु बुद्धी, सो हिंडइ गरुव-संसारं।। (47)

अर्थ-कर्म और नोकर्म में ''मैं हूँ'' तथा मैं कर्म-नोकर्म रूप हूँ; इस प्रकार जो बुद्धि होती है उससे यह प्राणी गहन संसार में घूमता है।

जो खविद-मोह-कम्मो, विसय-विरत्तो मणो णिरुंभित्ता।
समवट्ठिदो सहावे, सो मुच्चइ कम्म-णिगलेहिं।। (48)

अर्थ-जो मोहकर्म (दर्शनमोह और चारित्रमोह) को नष्टकर विषयों से विरक्त होता हुआ मन को रोककर स्वभाव में स्थित होता है, वह कर्मरूपी साँकलों से छूट जाता है।

पयडिट्ठिदि-अणुभाग-प्पदेस-बंधेहि वज्जिओ अप्पा।

सो हं इदि चिंतेज्जो, तत्थेव य कुणह थिर-भावं।। (49)

अर्थ-जो प्रकृति, स्थिति, अनुभाग और प्रदेश बंध से रहित आत्मा है वही मैं हूँ, इस प्रकार चिंतन करना चाहिए और उसमें ही स्थिरता करनी चाहिए।

केवलणाण-सहाओ, केवलदंसण-सहाओ सुहमइयो।

केवल-विरिय-सहाओ, सो हं इदि चिंतए णाणी।। (50)

अर्थ-जो केवलज्ञान एवं केवलदर्शन स्वभाव से युक्त, सुख-स्वरूप और केवल-वीर्य-स्वभाव है वहीं मैं हूँ, इस प्रकार ज्ञानी जीव को विचार करना चाहिए।

जो सव्व-संग-मुक्को, झायदि अप्पाणमप्पणो अप्पा।

सो सव्व दुक्ख-मोक्खं, पावइ अचिरेण कालेण।। (51)

अर्थ-सर्व सङ्ग (परिग्रह) से रहित जो जीव अपने आत्मा का आत्मा के द्वारा ध्यान करता है वह थोड़े ही समय में समस्त दुःखों से छुटकारा पा लेता है।

जो इच्छदि णिस्सरिदुं, संसार-महण्णवस्स रुंदस्स।

सो एवं जाणित्ता, परिझायदि अप्पयं सुद्धं।। (52)

अर्थ-जो गहरे संसार रूपी समुद्र से निकलने की इच्छा करता है वह इस प्रकार जानकर शुद्ध आत्मा का ध्यान करता है।

पडिकमणं पडिसरणं, पडिहरणं धारणा णियत्ती य।

णिंदण-गरहण-सोही, लब्भंति णियाद-भावणए।। (53)

अर्थ-निजात्म-भावना से (जीव) प्रतिक्रमण, प्रतिसरण, प्रतिहरण, धरणा, निवृत्ति, निंदन, गर्हण और शुद्धि को प्राप्त करते हैं।

जो णिहद-मोह-गंठी, राय-पदोसे हि खविय सामण्णे।

होज्जं सम-सुह-दुक्खो, सो सोक्खं अक्खयं लहदि।। (54)

अर्थ-जो मोह रूप ग्रंथि को नष्ट कर श्रमण अवस्था में राग-द्वेष का क्षपण करता हुआ सुख-दुःख में समान हो जाता है, वह अक्षय सुख को प्राप्त करता है।

ण जहदि जो दु ममत्तं, अहं ममेदं ति देह-दविणेसुं।

सो मूढो अण्णाणी, बज्झदि दुट्ठट्ठ-कम्मेहिं।। (55)

अर्थ-जो देह में 'अहम्' (मैं पना) और धन में 'ममेदं' (यह मेरा) इस दो प्रकार के ममत्व को नहीं छोड़ता है, वह मूर्ख अज्ञानी दुष्ट कर्मों से बँधता है।

पुण्णेण होइ विहओ, विहवेण मओ मएण मइ-मोहो।

मइ-मोहेण य पावं, तम्हा पुण्णो विबज्जेज्जो।। (56)

अर्थ-पुण्य से वैभव, वैभव से मद, मद से मति-मोह और मति-मोह से पाप होता है, अतः पुण्य को छोड़ना चाहिए।

परमट्ठ-बाहिरा जे, ते अण्णाणेण पुण्णमिच्छंति।
संसार-गमण-हेदुं, विमोक्ख-हेदुं अयाणंता।। (57)

अर्थ-जो परमार्थ से बाहर है वे संसार-गमन और मोक्ष के हेतु को न जानते हुए अज्ञान से पुण्य की इच्छा करते हैं।

ण हु मण्णदि जो एवं, णत्थि विसेसो त्ति पुण्ण-पावाणं।
हिंडदि घोरमपारं, संसारं मोह-संछण्णो।। (58)

अर्थ-पुण्य और पाप में कोई भेद नहीं है, इस प्रकार जो नहीं मानता है, वह मोह से युक्त होता हुआ घोर एवं अपार संसार में भ्रमण करता है।

मिच्छत्तं अण्णाणं, पावं पुण्णं चएवि तिविहेणं।
सो णिच्चयेण जोई, झायव्वो अप्पयं सुद्धं।। (59)

अर्थ-मिथ्यात्व, अज्ञान, पाप और पुण्य इनका (मन, वचन, काय) तीन प्रकार से त्याग करके योगी को निश्चय से शुद्ध आत्मा का ध्यान करना चाहिए।

जीवो परिणमदि जदा, सुहेण असुहेण वा सुहो असुहो।
सुद्धेण तहा सुद्धो, हवदि हु परिणाम-सब्भावो।। (60)

अर्थ-परिणाम-स्वभाव रूप जीव जब शुभ अथवा अशुभ परिणाम से परिणमता है तब शुभ अथवा अशुभ (रूप) होता है और जब शुद्ध परिणाम से परिणमता है तब शुद्ध होता है।

धम्मेण परिणदप्पा, अप्पा जइ सुद्ध-संपजोग-जुदो।
पावइ णिव्वाण-सुहं, सुहोवजुत्तो य सग्ग-सुहं।। (61)

अर्थ-धर्म से परिणत आत्मा यदि शुद्ध उपयोग से युक्त होता है तो निर्वाण-सुख को और शुभोपयोग से युक्त होता है तो स्वर्ग-सुख को प्राप्त करता है।

असुहोदएण आदा, कुणरो तिरियो भवीय णेरइयो।
दुक्ख-सहस्सेहिं सदा, अभिंधुदो भमदि अच्चंतं।। (62)

अर्थ-अशुभोदय से यह आत्मा कुमानुष, तिर्यञ्च और नारकी होकर सदा अचिन्त्य हजारों दुःखों से पीड़ित होकर संसार में अत्यंत (दीर्घकाल तक) परिभ्रमण

करता है।

अदिसयमाद-समेत्तं, विसयातीदं अणोवममणंतं।

अव्वुच्छिण्णं च सुहं, सुद्ध वजोगप्प-सिद्धाणं।। (63)

अर्थ-शुद्धोपयोग से उत्पन्न सिद्धों को अतिशय, आत्मोत्थ, विषयातीत, अनुपम, अनंत और विच्छेद रहित सुख प्राप्त होता है।

रागादि-संग-मुक्को, दहइ मुणी सेय-झाण-झाणेणं।

कम्मिंधण-संघायं, अणेय-भव-संचियं खिप्पं।। (64)

अर्थ-रागादि परिग्रह से रहित मुनि शुक्लध्यान नामक ध्यान से अनेक भवों में संचित किये हुए कर्मरूपी ईंधन के समूह को शीघ्र जला देता है।

जो संकप्प-वियप्पो, तं कम्मं कुणदि असुह-सुह-जणणं।

अप्पा-सभाव-लद्धी, जाव ण हियये परिफुरइ।। (65)

अर्थ-जब तक हृदय में आत्म-स्वभाव की उपलब्धि प्रकाशमान नहीं होती तब तक जीव संकल्प-विकल्प रूप शुभ-अशुभ को उत्पन्न करने वाला कर्म करता है।

बंधाणं च सहावं, विजाणिदुं अप्पणो सहावं च।

बंधेसु जो ण रज्जदि, सो कम्म विमोक्खणं कुणइ।। (66)

अर्थ-जो बंधों के स्वभाव को और आत्मा के स्वभाव को जानकर बंधों में अनुरंजायमान नहीं होता है, वह कर्मों का मोक्ष (क्षय) करता है।

जाव ण वेदि विसेसंतरं तु आदासवाण दोण्हं पि।

अण्णाणी ताव दु सो, विसयादिसु वट्टते जीवो।। (67)

अर्थ-जब तक जीव आत्मा और आस्रव इन दोनों के विशेष अंतर को नहीं जानता तब तक वह अज्ञानी विषयादि को में प्रवृत्त रहता है।

ण वि परिणमदि ण गेण्हदि, उप्पज्जदि ण परदव्व-पज्जाए।

णाणी जाणंतो वि हु, पोग्गल-दव्वं अणेय-विहं।। (68)

अर्थ-ज्ञानी जीव अनेक प्रकार के पुद्गल द्रव्य को जानता हुआ भी परद्रव्य-पर्याय से न परिणमता है, न (उसे) ग्रहण करता है और न (उस रूप) उत्पन्न होता है।

जो परदव्वं तु सुहं, असुहं वा मण्णदे विमूढ-मई।

सो मूढो अण्णाणी, बज्झदि दुट्ठट्ठ-कम्मेहिं।। (69)

अर्थ-जो मूढ़-मति पर द्रव्य को शुभ अथवा अशुभ मानता है, वह मूढ़ अज्ञानी दुष्ट आठ कर्मों से बँधता है।

गुण दोषों के परिज्ञान व त्याग न होने के व होने के कारण

(चाल : छोटी-छोटी गैया.....)

जब तक घाती कर्म उदय होते, तब तक स्व-गुण दोष ज्ञात न होते।
यथा घन बादल से आछन्न सूर्य, दिखाई न देता हो भी उदयमान।। (1)

मोहनीय से जीव मोहित होते, मद्यपायी यथा सत्य नहीं जानते।
आत्मा-परमात्मा को नहीं जानते, द्रव्य-तत्त्व-पदार्थ को नहीं मानते।। (2)

स्वयं को मानते तन-मन इन्द्रियमय, सत्ता-संपत्ति-प्रसिद्धि को मानते मम।
क्रोध मान माया लोभ में प्रवृत्त, हिंसा झूठ चोरी कुशील संग्रह सहित।। (3)

उपशमादि जब होते अनंतानुबंधी मोह, तब ही ज्ञात होते उक्त सभी मर्म।
स्वयं को जानते/(मानते) हैं सच्चिदानंदमय, उक्त सभी को मानते कर्म सापेक्ष।। (4)

सप्त-व्यसन अष्ट मद करते त्याग, देव-शास्त्र-गुरु प्रति करते अनुराग।
आत्मविश्वास सह होता सम्यग्ज्ञान, हिताहित करणीय-अकरणीय का ज्ञान।। (5)

अप्रत्याख्यान चारों का जब होता अनुदय, पंचाणुव्रत पालन कर होते श्रावक।
ग्यारह प्रतिमा यथायोग्य करते पालन, ज्ञान-वैराग्य युक्त बनना चाहते श्रमण।। (6)

प्रत्याख्यान चारों का जब होता अनुदय, महाव्रत पालन कर वे बनते श्रमण।
संसार-शरीर-भोगों से होते विरक्त, ध्यान-अध्ययन-तप से होते संयुक्त।। (7)

ख्याति पूजा लाभ प्रसिद्धि रहित, रत्नत्रय दश धर्म से होते संयुक्त।
उदार-पावन-समता-शांति सहित, मैत्री प्रमोद कारुण्य माध्यस्थ सहित।। (8)

संज्वलन चारों को भी जब करते क्षीण, क्षपक श्रेणी का तब करते आरोहण।
चारों घातिया कर्मों को जब करते क्षय, केवली बनते अनंत चतुष्टय सह।। (9)

चारों अघाती कर्मों को जब करते क्षय, शुद्ध-बुद्ध-आनंद बनते अक्षय।
गुणस्थान से गुणस्थान परे बनते, 'कनक' गुणस्थान परे बनना चाहते।। (10)

सीपुर, दिनांक 29.01.2017, रात्रि 1.20

तनाव दूर रखने के लिए जरूरी

निगेटिव लोगों से ऐसे दूर रहते हैं सफल लोग

जर्मनी की फ्रेडरिक शिलर यूनिवर्सिटी की एक रिसर्च में सामने आया है कि जब आप टॉक्सिक लोगों से मिलते हैं तो दिमाग तनाव से भर जाता है। एक रिसर्च में यह पता चला है कि अच्छा काम करने वाले 90 प्रतिशत लोग तनाव को मैनेज करने में माहिर होते हैं। यहाँ बता रहे हैं कुछ तरीके जो टॉक्सिक लोगों से दूर रहने में मददगार हो सकते हैं।

(1) कुछ लोगों की आदत हमेशा शिकायत करने की होती है। संभवतः उन्हें इसी में आनंद आता है। काम में उनका फोकस नहीं होता। ऐसे लोगों से दूरी बनाकर रखना अच्छा होता है। इसे ऐसे समझा जा सकता है कि जैसे आपका कोई मित्र बार-बार स्मोकिंग करता है तो आप हमेशा उसके साथ नहीं जाते, क्योंकि अगर ऐसा करेंगे तो पेसिव स्मोकिंग से आपको भी नुकसान होगा। (2) सफल लोग काम से मिली खुशी को किसी और की प्रतिक्रिया के आधार पर जज नहीं करते। हर काम की प्रतिक्रिया तो होती है। लेकिन जिस काम को लेकर संतोष हो उस पर किसी से तुलना के आधार पर मिली प्रतिक्रिया के आधार पर कम नहीं होने देना चाहिए। इसके पीछे कारण यह है कि खुद को समझना जरूरी है। सफल लोग जानते हैं कि वे उतने बुरे नहीं हैं जितना लोग उन्हें बता रहे हैं और वे उतने अच्छे भी नहीं है, जितनी लोग उनकी तारीफ करते हैं। (3) असल में सीमाएँ तय करना महत्वपूर्ण होता है। लेकिन कभी-कभी हम सोचते हैं कि दिनभर साथ काम करने वालों के साथ सीमा तय करना मुश्किल है। लेकिन अगर इसके लिए कोशिश की जाये तो रास्ता भी निकल जाता है। उदाहरण के तौर पर अगर आप किसी के साथ किसी प्रोजेक्ट पर काम कर रहे हो तो यह जरूरी नहीं है कि उससे बिल्कुल दोस्तों जैसे संबंध बना लिए जाये और उन्हें कुछ भी बोलने की आजादी हो।

भावनाओं और काम का मेल

ऐसे होता है अच्छा काम

द पर्सनैलिटी एंड सोशल साइकोलॉजी बुलेटिन में प्रकाशित एक शोध के मुताबिक विचार भावनाओं को प्रभावित करते हैं, भावनाएँ काम को। विचार आने

पर सबसे पहला काम कल्पना करने का होता है। जब काम ठीक ढंग से हो जाता है तो आप ऊर्जा से भर जाते हैं, लेकिन विपरीत परिस्थितियों में कहीं ज्यादा ऊर्जा की जरूरत होती है। इसलिए जरूरी है कि हमेशा पॉजिटिव रहा जाये। उत्साह आपको एक्शन मूड में लाता है, एक्शन से परिणाम आते हैं। लेकिन कई बार अच्छे प्रयास के बाद भी परिणाम अच्छे नहीं आ पाते। विपरीत परिस्थितियों में उलझने से बेहतर है, सही वक्त के आने का इंतजार किया जाये। सफल होना है तो हमेशा नया और चुनौतीपूर्ण काम ही चुनने की आदत डालें।

सफल लोग अपना काम करने की समय सीमा तय कर लेते हैं। वे तय करते हैं कि उन्हें क्या नहीं करना है। वे ये उम्मीद लगाकर नहीं बैठे रहते कि उनके काम में उनका सहकर्मी, बॉस मदद करेंगे। वे खुद ही सब कुछ कर लेते हैं। वे एक योजना के साथ काम करते हैं। उन्हें पता होता कि हमारे अगले तीन कदम क्या होंगे। आप भी साप्ताहिक कैलेंडर तैयार कर तय कर सकते हैं कि अपने खाली समय में क्या काम कर सकते हैं, उसे कैसे करेंगे। हर दिन सोने से पहले यह सोचिये कि दिन कैसा गुजरा, क्या सीखा, कहाँ सुधारने की जरूरत है। खुद की ऊर्जा को बेकार होने से बचाये। ध्यान करें। उत्साह की कमी का मतलब यह नहीं कि आप आलसी हैं या आपका कोई लक्ष्य नहीं है। काम की ललक और परिणाम को जल्दी पाने की कोशिश आपको सफल बनाती है।

संदर्भ-

मोहेन संवृतं ज्ञानं स्वभावं लभते नहि।
मत्तः पुमान् पदार्थनां यथा मदनकोद्रवैः।। (7)

Deluded by infatuation the knowing being is unable to acquire adequate knowledge of the nature of things, in the same way as a person who has lost his wits in coneguence of eating intoxicating is unable to know thow them properly!

यदि ये संसार के सुख और दुःख वासना मात्र ही है तब उसका यथार्थ परिज्ञान क्यों नहीं होता है? शिष्य का प्रश्न ये है-यदि वस्तुतः संसार के सुख एवं दुःख अवास्तविक हैं तब उसका परिज्ञान संसार के लोगों को अवास्तविक रूप में क्यों नहीं होता है? आचार्य शिष्य को प्रबोधन देते हैं-

''धातुनाम् अनेक अर्थत्वात्'' अर्थात् धातुओं के अनेक अर्थ होने के कारण यहाँ लभ धातु का अर्थ ज्ञान है। जब ज्ञान मोहनीय कर्म के विपाक से आविर्भूत हो जाता है तब वह ज्ञान वस्तु स्वरूप को यथार्थ प्रकाशन करने में असमर्थ हो जाता है। शुद्ध स्वरूप से ज्ञान कथंचित् आत्मा से अभिन्न है और वस्तु स्वरूप को यथार्थ से जानने के लिए पूर्ण समर्थ है परन्तु कर्म परवशता के कारण ज्ञान में/आत्मा में विकार उत्पन्न हो जाता है। कहा भी है-जिस प्रकार मल से आबद्ध मणि एक प्रकार का नहीं होता है, एक प्रकार का प्रकाश नहीं देता है उसी प्रकार कर्म से आबद्ध आत्मा भी एक प्रकार का नहीं होता है और एक प्रकार का नहीं जानता है।

प्रश्न-अमूर्तिक आत्मा किस प्रकार मूर्तिक कर्म से आविर्भूत होता है, आबद्ध होता है?

उत्तर-शुद्ध आत्मा अमूर्तिक होते हुए भी संसारी जीव अभी अमूर्तिक नहीं है कर्म से आबद्ध संसारी जीव व्यवहारनय की अपेक्षा मूर्तिक है।

नशे को पैदा करने वाले कोद्रव-कोदों धान्य को खाकर जिसे नशा पैदा हो गया है, ऐसा पुरुष घट, पट आदि पदार्थों के स्वभाव को नहीं जान सकता उसी प्रकार कर्म बद्ध आत्मा पदार्थों के स्वभाव को नहीं जान पाता है। अर्थात् आत्मा व उसका ज्ञान गुण यद्यपि अमूर्त है, फिर भी मूर्तिमान कोद्रवादि धान्यों से मिलकर वह बिगड़ जाता है। उसी प्रकार अमूर्त आत्मा मूर्तिमान कर्मों के द्वारा अभिभूत हो जाता है और उसके गुण भी दब सकते हैं।

समीक्षा-सत्य से विपरीत मान्यता श्रद्धा/प्रतीति विश्वास रूप परिणाम व भावों को मोह/मिथ्यात्व कहते हैं। सत्य का पूर्ण साक्षात्कार सर्वज्ञ वीतरागी देव करते हैं। सर्वज्ञ भगवान् ने दिव्य ध्वनि मूलक उस परम सत्य का प्रमाण, नय, निक्षेपों के द्वारा प्रतिपादन किया है, उनके द्वारा प्रतिपादित सत्य अर्थात् जो उनके द्वारा कहे हुए द्रव्य, तत्त्व पदार्थों में विश्वास नहीं करता, श्रद्धा नहीं करता वह मिथ्यादृष्टि है क्योंकि उसकी श्रद्धारूप दृष्टि विपरीत होने के कारण वह पदार्थ को भी विपरीत रूप श्रद्धान करता है। सिद्धांत चक्रवर्ती नेमीचन्द्र आचार्य गोम्मट्टसार में कहते हैं-

मिच्छाइट्ठी जीवो उवइट्ठं पवयणं च ण सद्दहदि।
सद्दहदि असब्भावं उवइट्ठं वा अणुवइः।। (18)

मिथ्यादृष्टि जीव 'उपदिष्ट' अर्थात् अर्हंत आदि के द्वारा कहे गये, 'प्रवचन'

अर्थात् आप्त आगम और पदार्थ ये तीन, इनका श्रद्धान नहीं करता है। प्रवचन अर्थात् जिनका वचन प्रकृष्ट है ऐसे आप्त, प्रकृष्ट का वचन प्रवचन अर्थात् परमागम। प्रकृष्ट रूप से जो कहा जाता है वह प्रवचन अर्थात् पदार्थ। इन निरूक्तियों से प्रवचन शब्द से आप्त, आगम और पदार्थ तीनों कहे जाते है तथा वह मिथ्यादृष्टि असद्भाव अर्थात् मिथ्या रूप प्रवचन यानी आप्त आगम पदार्थ का 'उपदिष्ट' अर्थात् आप्ताभासों के द्वारा कथित अथवा अकथित का भी श्रद्धान करता है।

मदि सुदणाण बलेण दु सच्छंदं बोल्लेदे जिणुवद्दिट्ठं।
जो सो होदि कुदिट्ठी ण होदि जिण मग्ग लग्गरवो।।(2) (रयणसार)

जो मतिज्ञान श्रुतज्ञानावरण कर्म के क्षयोपशम से प्राप्त हुए मतिज्ञान-श्रुतज्ञान के कारण उद्धत होकर स्वयं के मनमाने ज्ञान के द्वारा अपने मत अर्थात् पक्ष को लेकर स्वच्छंद होकर कपोल कल्पित मत का प्रतिपादन करते हैं, जिनवाणी को नहीं मानते हैं वे मिथ्यादृष्टि अज्ञानी जिनधर्म से बाह्य हैं। यदि जिनागम को दिखाने पर यथार्थ वस्तु का श्रद्धान करने लगता है और पूर्व कल्पित मत-पक्ष का त्याग करता है तब वह सम्यग्दृष्टि बन जाता है अन्यथा मिथ्यादृष्टि रहता है।

मिच्छत्तं वेदंतो जीवो विवरीय दंसणो होदि।
ण य धम्मं रोचेदि हु महुरं खु रसं जहा जरिदो।। (17)

उदय में आये मिथ्यात्व का वेदन अर्थात् अनुभवन करने वाला जीव विपरीत दर्शन अर्थात् अतत्त्व श्रद्धा से युक्त होता है। वह न केवल अतत्त्व की ही श्रद्धा करता है अपितु अनेकान्तात्मक, धर्म, वस्तु स्वभाव, मोक्ष के कारणभूत रत्नत्रयात्मक धर्म को भी पसंद नहीं करता।

दृष्टांत-पित्त ज्वर से ग्रस्त व्यक्ति मीठे-दूध रसादि को पसंद नहीं करता, उसी तरह मिथ्यादृष्टि को धर्म नहीं रुचता है।

इंदिय विसय सुहादिसु मूढमदी रमदि न लहदि तत्त्वं।
बहुदुक्खमिदि ण चिंतदि सो चेव हवदि बहिरप्पा।। (29) (रयणसार)

जो मूढ़मति इन्द्रिय जनित सुख में रमण करता हुआ उसको सुख मानता है, बहु दुःखप्रद नहीं मानता है, वह आत्म तत्त्व को प्राप्त नहीं कर सकता है, वह बहिरात्मा मिथ्यादृष्टि है।

पूर्व संचित मिथ्यात्व कर्म के उदय से जो स्वयंमेव विपरीत भाव होता है उसे

निसर्ग व अगृहीत मिथ्यात्व कहते हैं, जो कुगुरु के उपदेश से विपरीत भाव होते है उसे अधिगमज व गृहीत मिथ्यात्व कहते हैं। मिथ्यात्व के कारण जीव अवस्तु में वस्तुभाव, अधर्म में धर्मभाव, कुगुरु में गुरुभाव, कुशास्त्र में सुशास्त्र भाव को धारण करता है। बहिरात्मा केवल शरीर पोषण करता है, अतीन्द्रिय आत्मोत्थ सुख से बहिर्मुख होकर विषय सुख में ही लीन रहता है। बाह्य-भौतिक हानि वृद्धि में अपनी हानि-वृद्धि मानकर सुखी-दुःखी होता है। सामान्य से मिथ्यात्व एक प्रकार होते हुए भी विशेष अपेक्षा अर्थात् द्रव्य-भाव से दो प्रकार, एकांत, विपरीत, संशय, विनय, अज्ञान की अपेक्षा पाँच प्रकार भी होता है। इसमें सांख्य चार्वाक मत मिलाने से 7 प्रकार का मिथ्यात्व होता है। विशेष रूप से क्रियावादियों के 180, अक्रियावादियों के 84, अज्ञानवादी के 67 और वैयनिकवादियों के 32 इस प्रकार मिथ्यावादियों के 363 भेद होते हैं।

रत्नत्रय और राग का फल

येनांऽशेन सुदृष्टिस्तेनाऽशेनाऽस्य बंधनं नाऽस्ति।
येनांऽशेन तु राग स्तेनाऽशेनाऽस्य बंधनं भवति।। (212)
येनांऽशेन तु ज्ञानं, तेनांऽशेनाऽस्य बंधनं नास्ति।
येनांऽशेन तु रागस्तेनाऽशेनाऽस्य बंधनं भवति।। (213)
येनांऽशेन चारित्रं, तेनांशेनास्य बंधनं नास्ति।
येनांऽशेन तु रागस्तेनांऽशेनास्य बंधनं भवति।। (214) (पुरुषार्थ)

व्याख्या-भावानुवाद-जिस अंश से सुदृष्टि होता है उस अंश से सम्यक्दर्शन होता है। उस सुदृष्टि रूप अंश से उस सम्यक्त्व का कर्मबंध नहीं होता है। किन्तु जिस अंश से उस सम्यक् दृष्टि में भी राग होता है उस अंश से उस सम्यक् दृष्टि को भी कर्मबंध होता है।

जिस अंश से ज्ञान होता है उस अंश से कर्मबंध नहीं होता परन्तु जिस अंश से राग होता है उस अंश से उस ज्ञानी को कर्मबंध होता है।

जिस अंश से चारित्र होता है उस चारित्र अंश से कर्मबंध नहीं होता है परन्तु जिस अंश से राग होता है उस अंश से उस चारित्र या चारित्रधारी को कर्मबंध होता है।

इसका भावार्थ यह है कि सराग रत्नत्रय में बंध होता है। वीतराग रत्नत्रय में बंध

नहीं होता है।

समीक्षा-जैसे-जिस अंश में प्रकाश होता है उस अंश में अंधकार नहीं होता है तथा जिस अंश में अंधकार होता है उस अंश में प्रकाश नहीं होता है। प्रकाश जितने-जितने अंश में बढ़ता जाता है उसने उतने अंश में अंधकार भी घटता जाता है। जितने-जितने अंश में अंधकार बढ़ता जाता है उतने-उतने अंश में प्रकाश घटता जाता है। इसी प्रकार जितने-जितने अंश में रत्नत्रयात्मक स्वभाव आत्मा में प्रकट होता है उतने-उतने अंश में वैभाविक भावरूपी कर्मबंध घटता जाता है। आचार्य उमास्वामी ने पात्र की अपेक्षा निर्जरा में न्यूनाधिकता का वर्णन करते हुए प्रकारान्तर से इसी विषय को निम्न प्रकार से कहा है-

सम्यग्दृष्टि श्रावकविरतानन्तवियोजकदर्शनमोहक्षपकोपशमकोपशान्त मोहक्षपकक्षीणमोहजिनाः क्रमशोऽसंख्येयगुणनिर्जराः।।

सम्यक्दृष्टि, श्रावक, विरत, अनंतानुबंधिविसंयोजक, दर्शनमोहक्षपक, उपशमक, उपशांतमोह, क्षपक, क्षीणमोह और जिन ये क्रम से असंख्यातगुणी निर्जरा वाले होते हैं। जब तक सम्यग्दर्शन की उपलब्धि नहीं होती तब तक आस्रव और बंध की परम्परा चलती ही रहती है। यह बंध की परम्परा मिथ्यादृष्टि के अनादि से है। उसकी जो निर्जरा होती है वह सविपाक निर्जरा या अकाम निर्जरा है। इसलिए मिथ्यादृष्टि केवल आस्रव और बंध तत्त्व का कर्त्ता है। सम्यग्दर्शन होते ही जीव के ज्ञान एवं दर्शन में परिवर्तन हो जाता है। जिस अंश में दर्शन-ज्ञान-चारित्र में सम्यक् भाव है उतने अंश में संवर, निर्जरा प्रारम्भ हो जाती है क्योंकि सम्यग्दर्शन-ज्ञान एवं चारित्र आत्मा का स्वभाव है।

पात्र की अपेक्षा गुणश्रेणी निर्जरा और उसके द्रव्य प्रमाण और काल प्रमाण का वर्णन गोम्मट्टसार में निम्न प्रकार किया है-

सम्मत्तुप्पत्तीये-सावय विरदे अणंत कम्मंसे।
दंसणमोहक्खवगे कषायउवसामगे य उवसंते।। (66)
खवगे य खीणमोहे-जिणेसु दव्वा असंखगुणिदकमा।
तव्विवरीया काला संखेज्जगुणक्कमा होंति।।(67)

सम्यक्त्वोत्पत्ति अर्थात् सातिशय मिथ्यादृष्टि और सम्यग्दृष्टि श्रावक, विरत, अनंतानुबंधी कर्म का विसंयोजन करने वाला, दर्शन मोहनीय कर्म का क्षय करने

वाला, कषायों का उपशम करने वाला 8-9-10वें गुणस्थानवर्ती जीव क्षीणमोह, सयोगी केवली और अयोगी केवली दोनों प्रकार के जिन इन ग्यारह स्थानों में द्रव्य की अपेक्षा कर्मों की निर्जरा क्रम से असंख्यात गुणी अधिक होती जाती है और उसका काल इसके विपरीत है। क्रम से उत्तरोत्तर संख्यातगुणा हीन है।

1. **सम्यग्दृष्टि (अविरत)**-जैसे मद्यपायी के शराब का कुछ नशा उतरने पर अव्यक्त ज्ञान शक्ति प्रकट होती है, या दीर्घ निद्रा के हटने पर जैसे-ऊँघते-ऊँघते भी अल्प स्मृति होती है, या विष मूर्च्छित व्यक्ति को विष का एक देश वेग कम होने पर चेतना आती हैं अथवा पित्तादि विकार से मूर्च्छित व्यक्ति को मूर्च्छा हटने पर अव्यक्त चेतना आती है-उसी प्रकार अनंत काय आदि एकेन्द्रियों में बार-बार जन्म-मरण परिभ्रमण करते-करते विशेष लब्धि से दो इन्द्रिय आदि से लेकर पंचेन्द्रिय पर्यंत त्रस पर्याय मिलती है। कभी मुनिराज कथित जिन धर्म को सुनता है तथा कदाचित् प्रतिबंधी कर्मों के दब जाने से उस पर श्रद्धान भी करता है। जैसे-कतक फूल के सम्पर्क से जल का कीचड़ बैठ जाता है और जल निर्मल बन जाता है; उसी प्रकार मिथ्या उपदेश से अति मलिन मिथ्यात्व के उपशम से आत्मा निर्मलता को प्राप्त कर श्रद्धानाभिमुख होकर तत्त्वार्थ श्रद्धान की अभिलाषा के सन्मुख होकर कर्मों की असंख्यात गुणी निर्जरा करता है। प्रथम सम्यक्त्व आदि का लाभ होने पर अध्यवसाय (परिणामों) की विशुद्धि की प्रकर्षता से ये दसों स्थान क्रमशः असंख्येय गुणी निर्जरा वाले हैं। सादि अथवा अनादि दोनों ही प्रकार का मिथ्यादृष्टि जीव जब करण लब्धि को प्राप्त करके उसके अधः प्रवृत्तकरण परिणामों को भी बिताकर अपूर्वकरण परिणामों को ग्रहण करता है तब वह सातिशय मिथ्यादृष्टि कहा जाता है। इस सातिशय मिथ्यादृष्टि के जो कर्मों की निर्जरा होती है वह पूर्व की निर्जरा से अर्थात् सदा ही संसारावस्था या मिथ्यात्व दशा में होने वाली या पाई जाने वाली निर्जरा से असंख्यात गुणा अधिक हुआ करती है।

यह कथन गोम्मट्टसार जीवकाण्ड की अपेक्षा है। इसी से सिद्ध होता है कि मिथ्यादृष्टि की जो निर्जरा होती है उस निर्जरा को यहाँ पर इकाई रूप में स्वीकार किया गया है। तत्त्वार्थसूत्र की अपेक्षा निर्जरा के स्थान दस है और गोम्मट्टसार की अपेक्षा निर्जरा के स्थान ग्यारह है परन्तु तत्त्वार्थसूत्र में जो अंतिम स्थान 'जिन' है उसे सयोगी जिन एवं अयोगी जिन रूप में विभक्त करने से तत्त्वार्थसूत्र में भी ग्यारह स्थान हो

जाते हैं।

श्रावक (पञ्चम गुणस्थान) अवस्था प्राप्त होने पर जो कर्मों की निर्जरा होती है, वह असंयत सम्यग्दृष्टि की निर्जरा से असंख्यात गुणी अधिक होती है। इसी प्रकार विरतादि स्थानों में भी उत्तरोत्तर क्रम से असंख्यात गुणी असंख्यात गुणी अधिक-अधिक कर्मों की निर्जरा हुआ करती है तथा इस निर्जरा का काल उत्तरोत्तर संख्यातगुणा-संख्यातगुणा हीन-हीन होता गया है अर्थात् सातिशय मिथ्यादृष्टि की निर्जरा में जितना काल लगता है उससे संख्यात गुणा कम काल श्रावक की निर्जरा में लगा करता है। इसी प्रकार आगे के विरत आदि स्थानों के विषय में भी समझना चाहिए। अर्थात् उत्तरोत्तर संख्यातगुणे हीन-हीन समय में ही उत्तरोत्तर परिणाम विशुद्धि की अधिकता होते जाने के कारण कर्मों की निर्जरा असंख्यात गुणी अधिक-अधिक होती जाती है तात्पर्य यह है कि, जैसे-जैसे मोहकर्म निःशेष होता जाता है वैसे-वैसे निर्जरा भी बढ़ती जाती है और उसका द्रव्य प्रमाण असंख्यातगुणा-असंख्यातगुणा अधिकाधिक होता जाता है। फलतः वह जीव भी निर्वाण के अधिक-अधिक निकट पहुँचता जाता है। जहाँ गुणाकार रूप से गुणित निर्जरा का द्रव्य अधिकाधिक पाया जाता है उन स्थानों में गुण श्रेणी निर्जरा कही जाती हैं।

वचन-तन-मन/(आत्मा) शुद्धि हेतु व्याकरण-आयुर्वेद-ध्यान/(धर्म)

-आचार्य कनकनन्दी

(चाल : तुम दिल की.....)

वचन शुद्धि करणीय व्याकरण द्वारा, तन स्वस्थ्य करणीय आयुर्वेद द्वारा।
मन/(आत्मा) शुद्धि करणीय ध्यान/(धर्म) द्वारा, उक्त काम हेतु तीनों होते सहारा।। (1)

अशुद्ध सोना शुद्ध होता ताप-ताड़न द्वारा, अशुद्ध वस्त्र शुद्ध होता, पानी-साबुन द्वारा।
वचन-तन-मन/(आत्मा) शुद्धि के निमित्त, व्याकरण आदि होते मुख्य निमित्त।। (2)

ध्वनि से लेकर व्युत्पत्ति-अर्थ हेतु, अशुद्ध जनपद बोली को शुद्ध करने हेतु।
उच्चारण संधि-समास-उपसर्ग-प्रत्यय, चाहिए शब्द-पद की शुद्धि सम्यक्।। (3)

नहीं तो अर्थ का अनर्थ होना संभव, ज्ञानावरणीयादि कर्मबंध होना संभव।
कथन-प्रवचन-लेखन में होती अशुद्धि, होते हैं विपरीत ज्ञान श्रद्धान आदि।। (4)

तन स्वास्थ्य हेतु सही विचार-आहार, दैवसिक-रात्रिक सम्यक् आचार।
व्यायाम-प्राणायाम-भ्रमण-निवास, इस हेतु आयुर्वेदिक ज्ञान विशेष।। (5)

मन शुद्धि हेतु चाहिए विशेष ध्यान/(धर्म), एकाग्रचिंता निरोध होता है ध्यान।
इस हेतु चाहिए क्रोध-मान-माया-त्याग, ईर्ष्या-घृणा-तृष्णा-द्वेष त्याग।। (6)

संकल्प-विकल्प-संक्लेश-द्वंद्व त्याग, समता-शांति-संतोष युक्त भाव।
इससे संवर-निर्जरा से होता मोक्ष, जिससे मिलता अनंत आत्म सुख।। (7)

उक्त तीनों ज्ञान अतः प्रमुख ज्ञान, तीनों ज्ञान बिन न बने जीवन महान्।
अभ्युदय से लेकर मोक्ष सुख के हेतु, 'कनक' ज्ञानार्जन करे शाश्वत सुख हेतु।। (8)

सीपुर, दिनांक 30.01.2017, मध्याह्न 2.37

संदर्भ-

इष्टोपदेश के मूल-ग्रंथकर्ता 'आचार्य पूज्यपाद देवनंदी' हैं। इनके द्वारा रचित समाधितंत्र मोक्षशास्त्र की टीका-सर्वार्थसिद्धि भी बहुत ही सारगर्भित तथा सुप्रसिद्ध है। इन्होंने आत्म (मन) की शुद्धि के लिए इष्टोपदेश, समाधितंत्र, सर्वार्थसिद्धि की रचना की तो वचन शुद्धि के लिए जैनेन्द्र व्याकरण की रचना की तथा शरीर की शुद्धि के लिए वैद्यशास्त्र की रचना की। यथा-

''न्यासं जैनेन्द्रं संज्ञं सकलबुधनुतं पाणिनीयस्य भूयो-
न्यासं शब्दावतारं मनुजततिहितं वैद्यशास्त्रं च कृत्वा।
यस्तत्त्वार्थस्य टीकां व्यरचयदिह तां भात्यसौ पूज्यपाद-
स्वामी भूपालवंद्यः स्व-पर-हितवचः पूर्णदृग्बोधवृन्तः।।
जैनेन्द्रं निजशब्दभाग तुलं सर्वार्थसिद्धिः परा-
सिद्धान्ते निपुणत्वमुद्धकवितां जैनाभिषेकः स्वकः।
छन्द सूक्ष्मधियं समाधिशतकं स्वास्थ्यं यदीयं विदा-
माख्यातीह स पूज्यपादमुनिपः पूज्यो मुनीनां गणैः।। (4)''

इस वाक्य में ऊँचे दर्जे की कुछ रचनाओं का उल्लेख करते हुए, बड़े ही अच्छे, ढंग से यह प्रतिपादित किया है कि 'जिनका जैनेन्द्र' शब्दशास्त्र में अपने अतुलित भाग को सर्वार्थसिद्धि (तत्त्वार्थ टीका) सिद्धांत में परम निपुणता को, 'जैनाभिषेक' ऊँचे दर्जे की कविता को, 'छन्दशास्त्र' बुद्धि की सूक्ष्मता (रचना

चातुर्य) को और 'समाधिशतक' जिनकी स्वात्म स्थिति (स्थितप्रज्ञता) को संसार में विद्वानों पर प्रकट करता है वे 'पूज्यपाद मुनीन्द्र मुनियों के गणों से पूजनीय हैं।'

इष्टोपदेश की समीक्षा का नाम मैंने 'आध्यात्मिक मनोविज्ञान' रखा है। क्योंकि इसमें आध्यात्मिक का मनोवैज्ञानिक दृष्टिकोण से वर्णन किया गया है। इष्टोपदेश की विषय-वस्तु तथा वर्णन-प्रणाली और उपनिषद एवं अष्टावक्र गीता की विषय-वस्तु तथा वर्णन-प्रणाली में बहुत कुछ समानता परिलक्षित होती है। उपनिषद एवं अष्टावक्र गीता में जैसे बाह्य क्रियाकाण्डों को कम महत्व दिया गया है और अनेक स्थलों में उसका सटीक तर्कसंगत अनुभावात्मक खण्डन किया गया है उसी प्रकार इष्टोपदेश में भी किया गया तथा शुद्ध आध्यात्मिकवाद को मनोवैज्ञानिक दृष्टि से वर्णन किया है। जब-जब धर्म, समाज, राजनीति आदि में अनावश्यक दूषित तत्त्व घूस जाता है विकार उत्पन्न हो जाता है तब-तब उसे दूर करने की आवश्यकता होती है। यह सक्रिय प्रक्रिया हर देश, काल, धर्म, जाति, राजनीति, समाज में होती रहती जो कि अपरिहार्य, अपेक्षित, स्वागत योग्य तथा ग्रहणीय भी है।

(गणतंत्र दिवस पर मेरा (कवि) स्वतंत्र चिन्तन)

''जड़ शक्ति से भी जानना चाहूँ आत्मशक्ति''

(चाल : आत्मशक्ति.....)

कार्यकारण गणित अनुमान से (भी) जानना चाहूँ आत्मशक्ति।
जड़ में यदि इतनी शक्ति, आत्मा में होगी कितनी शक्ति।।

अणु-वर्गणा-स्कंध तरल-गैस-प्लाज्मा व क्वांटम में।
इतनी शक्ति है यदि कितनी होगी शक्ति आत्मा में?।। (1)

रेडियो-मोबाईल-टी.वी.-कंप्यूटर-सूक्ष्मदर्शक-दूरदर्शक।
इतनी शक्ति सम्पन्न है तो कितनी शक्ति होगी आत्मिक।।

अग्नि-वायु-जल-भूकंप-बाढ़-सुनामी-टोनड (बवण्डर) में।
इतनी है यदि शक्ति कितनी, शक्ति होगी आत्मा में?।। (2)

शरीर-इन्द्रिय-मन-दिमाग में, यदि शक्ति है इतनी।
जिससे शरीरादि शक्ति पाते, उस आत्म में शक्ति कितनी?।।

बंदूक-अणुबम व हाइड्रोजन बम में यदि शक्ति (है) इतनी।
अनंत शक्ति सम्पन्न आत्मा में, शक्तियाँ होगी कितनी?।। (3)

विजुली इलेक्ट्रन फोटोन/(प्रकाश) क्वांटम में यदि इतनी है शक्ति/(गति)।
आत्मा में कितनी शक्ति/(गति) होगी जिसमें होती अनंत शक्ति।।

सूक्ष्म जीव से चक्री इन्द्र तक, संसारी जीव में इतनी शक्ति।
शुद्ध आत्मा में होगी कितनी शक्ति, जिसमें प्रकट अनंत शक्ति।। (4)

छोटा-सा वट बीज भी जब, विशाल वृक्ष बन सकता है।
बीज रूप में हूँ मैं परमात्मा, (मैं) कितना विशाल बन सकता हूँ।।

पंचपरमेष्ठी व ऋद्धिधारियों में आत्मशक्ति ही प्रगट होती।
इससे भी मुझे होता है ज्ञान, मुझमें भी है कितनी शक्ति।। (5)

पतित से भी पावन बने है, आध्यात्मिक शक्ति से।
निगोद से भी सिद्ध बने है, आत्मशक्ति की जागृत से।।

संसार के जीवों में जो शक्ति में न्यूनाधिक होती है।
उससे भी सिद्ध होता है, आत्मा में अनंत शक्तियाँ है।। (6)

स्व-अनंत आत्मा की प्राप्ति ही है धर्म का फल।
इसे ही कहते है सच्चिदानंद अवस्था अन्य सभी निष्फल।।

धर्म-दर्शन-विज्ञान-मनोविज्ञान से मैंने यह अनुभव किया।
कर्म सिद्धांत व अलौकिक गणित से, यह सब 'कनक' पाया।। (7)

सीपुर, दिनांक 26.01.2017 (गणतंत्र-दिवस), मध्याह्न 1.17

संदर्भ-

आत्मा स्वयं ज्ञान एवं सुख स्वरूप है

सयमेव जहादिच्चो तेजो उण्हो य देवदा णभसि।
सिद्धो वि तहाणाणं सुहं च लोगे तहा देवो।। (68)

(णभसि) आकाश में (सयमेव जहादिच्चो) जैसे दूसरे कारण की अपेक्षा न करके स्वयं ही सूर्य (तेजो) अपने और दूसरे को प्रकाश करने वाला तेज रूप है

(उण्हो य) तथा स्वयं उष्णता देने वाला है (देवदाय) तथा देवता है अर्थात् ज्योतिषी देव है अथवा अज्ञानी पुरुषों के लिए पूज्य देव है (तहा) जैसे ही (लोये) इस लोक में (सिद्धो वि णाणं सुहं च जहा देवो) सिद्ध भगवान् भी दूसरे कारण की अपेक्षा न करके स्वयं ही स्वभाव से स्व-पर प्रकाशक केवलज्ञान स्वरूप है तथा परम तृप्तिरूप निराकुलता लक्षणमय सुखरूप है तैसे ही अपने शुद्ध आत्मा के सम्यक् श्रद्धान्, ज्ञान तथा चारित्र रूप अभेद रत्नत्रयमय निर्विकल्प समाधि से पैदा होने वाले सुंदर आनंद में भीगे हुए सुखरूपी अमृत के प्यासे गणधर देव आदि परम योगियों, इन्द्रादि देवों व अन्य निकट भव्यों के मन में निरंतर भले प्रकार आराधने योग्य तैसे ही अनंत ज्ञानादि गुणों के स्तवन से स्तुति-योग्य जो दिव्य आत्म-स्वरूप स्वभावमय होने से देवता है। इससे जाना जाता है कि मुक्ति प्राप्त आत्माओं को विषयों की सामग्री से भी कुछ प्रयोजन नहीं है। वास्तव में शरीर तथा इन्द्रियों के इस तरह स्वभाव से ही आत्मा सुख स्वभाव है, अतएव इन्द्रियों के विषय भी मुक्तात्माओं के सुख के कारण नहीं होते हैं।

समीक्षा-इस गाथा में आचार्य कुंदकुंद देव ने सिद्ध किया है कि जैसे-सूर्य स्वयं प्रकाशी है उसके प्रकाश के लिए अन्य प्रकाश की आवश्यकता नहीं है। उसी प्रकार स्व-स्वभाव की पूर्णरूप से प्राप्त सिद्ध भगवान् का सुख एवं ज्ञान भी स्वाभाविक है पर-सापेक्ष नहीं है। भगवान् का स्वभाव सच्चिदानंद/आनंदधन/सत्यं शिवं सुंदरं स्वरूप है। यह स्वभाव सिद्ध अवस्था में पूर्ण विकसित अवस्था में होता है परन्तु संसार अवस्था में वैभाविक रूप में या किंचित् विकास रूप में रहता है। जैसे-योग्य बीज में विशालकाय वृक्ष सुप्त रूप में रहता है। योग्य द्रव्य क्षेत्रादि को पाकर बीज विशालकाय वृक्ष रूप में परिणमन करता है उसी प्रकार भव्य जीव भी योग्य द्रव्यादि को प्राप्त कर धीरे-धीरे ज्ञान सुखादि गुण का विकास करता-करता अंत में संपूर्ण आत्मा के अनंत गुणों को प्राप्त कर लेता है। सिद्धावस्था में कितना सुख हो सकता है उसका अनुमान लगाने के लिए ध्यानस्थ मुनि का वर्णन यहाँ कर रहे हैं-

जं मुणि लहइ अणंत सुह णिय-अप्पा झायंतु।

तं सुहु इंदु वि णवि लहइ देविहिं कोडि रमंतु।। (117) प.प्र.पृ. 108

अपनी आत्मा को ध्यावता परम तपोधन (मुनि) जो अनंत सुख पाता है-उस सुख को इन्द्र भी करोड़ देवियों के साथ रमता हुआ नहीं पाता है।

मुनि, इन्द्रिय जनित विषय सुख को भोग नहीं करने से भी यह सुख कहाँ से

प्राप्त करता है यह प्रश्न होना स्वाभाविक है? इसका अनुभवगम्य तार्किक उत्तर यह है कि जब एक व्यक्ति विषय सुख भोग नहीं करता है और शांत चित्त होकर बैठता है तब उसको अतीन्द्रिय सुख अनुभव होता है और कोई विषयों को सेवन करता हुआ भी मानसिक अशांति के कारण दुःखी रहता है। इससे सिद्ध होता है कि सुख का मूल स्रोत आत्मा ही है। जैसे-जो रोगी होता है वह औषधि का सेवन करता है। जो भूखा रहता है वह भोजन का और जो प्यासा होता है वह पानी का सेवन करता है। परन्तु जो उपरोक्त वेदना से रहित है उसे औषधि आदि की आवश्यकता नहीं है तो भी वह औषधादि का सेवन नहीं करता हुआ भी रोगी आदि के समान दुःखी नहीं है। कहा भी है-

दह्यमाने जगत्यस्मिन्महता मोहवन्हिना।
विमुक्त विषयासंगाः सुखायन्ते तपोधनाः।। (प.प्र.पृ. 108)

महा मोहरूपी अग्नि से जलते हुए इस जगत् में देव मनुष्य तिर्यञ्च नारकी सभी दुःखी है और जिनके तप ही धन है तथा सब विषयों का संबंध जिन्होंने छोड़ दिया है, ऐसे मुनि (साधु) ही इस जगत् में सुखी हैं।

शुभचन्द्राचार्य ने ज्ञानार्णव में सिद्ध भगवान् के सुख ज्ञानादि गुणों का सविस्तार वर्णन निम्न प्रकार किया है। जो समस्त देव और मनुष्य इन्द्रियों के विषयों से उत्पन्न और इन्द्रियों से तृप्त करने में समर्थ ऐसे निराबाध सुख को वर्तमान काल में भोगते हैं तथा सबने अतीत काल में जो सुख भोगे हैं और जो सुख महाऋद्धियों से उत्पन्न हुआ है तथा स्वादिष्ट और मन प्रसन्न करने वाले जो सुख आगामी काल में भोगे जायेंगे उन समस्त सुखों से अनंत गुणे अतीन्द्रिय और अपने स्वभाव से उत्पन्न होने वाले सुख को श्री सिद्ध भगवान् परमेश्वर एक ही समय में भोगते हैं। योगीश्वरों के पति श्री सिद्ध भगवान् के ज्ञानरूपी सूर्य में भूत, भविष्यत्, वर्तमान तीनों काल संबंधी समस्त द्रव्य पर्यायों से व्याप्त जो यह जगत् है सो एक ही समय में स्पष्ट प्रत्यक्ष प्रतिभासित होता है। यह आकाश सर्वत्रः अनंत है और इसके लोक और अलोक ऐसे दो भेद हैं, उस समस्त आकाश में सिद्ध परमेष्ठी का ज्ञान घनभूत होकर भरा हुआ है। श्री सिद्ध भगवान्, निद्रा, तन्द्रा, भय भ्रांति, राग, द्वेष, पीड़ा और संशय से रहित हैं तथा शोक, मोह, जरा, जन्म और मरण इत्यादि से रहित हैं और क्षुधा, तृष्णा, खेद, मद, उन्माद, मूर्च्छा और मत्सर भाव से रहित है और इनकी आत्मा में वृद्धि ह्रास (घटना-बढ़ना)

है और इनका विभव कल्पनातीत है। सिद्ध भगवान् शरीर रहित हैं, इन्द्रिय रहित हैं, मन के विकल्पों से रहित हैं, निरंजन है अर्थात् जिनके नये कर्मों का बंध नहीं है अनंतवीर्यता को प्राप्त हुए हैं अर्थात् अपने स्वभाव से कभी च्युत नहीं होते और नित्य आनंद से आनंदरूप हैं अर्थात् जिनके सुख का कभी विच्छेद नहीं होता।

तथा परमेष्ठी (परम पद में विराजमान) परं ज्योतिः (ज्ञान प्रकाश रूप) परिपूर्ण, सनातन (नित्य), संसार रूपी समुद्र से उत्तीर्ण अर्थात् संसार संबंधी चेष्टाओं से रहित कृतकृत्य (जिनको करना कुछ शेष नहीं है) अचल स्थिति (प्रदेश की क्रियाओं से रहित) ऐसे सिद्ध भगवान् हैं। पुनः सिद्ध भगवान् संतृप्त हैं, तृष्णा रहित हैं, तीन लोक के शिखर पर सदा विराजमान हैं अर्थात् गमन रहित हैं इस संसार में कोई भी ऐसा पदार्थ नहीं है जिसकी उपमा परमेष्ठी के सुख को दी जाय, उनका सुख निरूपमेय है। आचार्य कहते हैं यदि चर और स्थिर पदार्थों से भरे हुए इन तीनों जगतों में उपमेय और उपमान ढूंढ़ा जाय तो मैं ऐसा मानता हूँ कि वे स्वयं उपमान उपमेय रूप हैं। सिद्ध भगवान् का उपमान सिद्ध ही हैं और किसी के साथ उनकी उपमा नहीं दी जा सकती। क्योंकि तीनों जगत् में उन सिद्ध परमेष्ठी के अनंत गुणों का अनंतवाँ अंश भी किसी पदार्थ में नहीं है इसीलिये उनकी समानता किसी के साथ नहीं की जा सकती। इसलिये उनका उपमेय भाव अपना अपने ही साथ है।

जैसा कोई आकाश और काल का अंत नहीं जान सकता, उसी तरह स्वभाव से उत्पन्न हुए परमेष्ठी के गुणों का अंत भी कोई नहीं जान सकता। आकाश, मेघ, सूर्य, सर्पों का इन्द्र, चन्द्रमा, मेरू, पृथ्वी, अग्नि, वायु, समुद्र और कल्पवृक्षों के गुणों का समस्त समूह भी चिंतवन किया जाय तो भी उनकी उपमा परम गुरु श्री सिद्ध परमेष्ठी के गुणों के साथ नहीं हो सकती।

सिद्ध परमेष्ठी के गुण पूर्व में नहीं थे ऐसा नहीं है अर्थात् ''पूर्व में भी शक्ति रूप में विद्यमान ही थे, क्योंकि असत् का प्रादुर्भाव नहीं होता है यह नियम है, यदि असत् का भी प्रादुर्भाव माना जाय तो शशश्रृङ्ग का भी प्रादुर्भाव होना चाहिए किन्तु होता नहीं है यही इस नियम का प्रमाण है'' और पूर्व में व्यक्त नहीं थे तथा विशेष विकार से उत्पन्न नहीं, किन्तु स्वाभाविक है (इस प्रकार पूर्वार्द्ध द्वारा निषेधमुख कथन करके, इन विषय को पुनः उत्तरार्द्ध द्वारा विधिमुख वाक्य से कहते हैं) सिद्ध परमेष्ठी के गुण स्वाभाविक विशेष अर्थात् पूर्व में भी शक्ति की अपेक्षा स्वभाव में ही विद्यमान और

अभूतपूर्व अर्थात् पूर्व में व्यक्त नहीं हुए ऐसे हैं।

जिसका माहात्म्य वचनों से कहने योग्य नहीं है और जिनके अनंत ज्ञान का विभव है ऐसे सिद्ध परमेष्ठी के गुणों का समूह सर्वज्ञ के ज्ञानगोचर है। सर्वज्ञ देव परमेष्ठी के गुणों को जानते हैं, परन्तु यदि वे उन गुणों को समाधान सहित अच्छी तरह कहे तो वे भी उनका पार पा नहीं सकेंगे। वचन की संख्या अल्प है और गुण अनंत हैं इसलिये वे वचनों से नहीं कहे जा सकते।

श्री सिद्ध परमेष्ठी परमेश्वर देव समस्त त्रैलोक्य का तिलक स्वरूप, समस्त विषयों से रहित निर्द्वंद्व अर्थात् प्रतिपक्षी रहित, अविनाशी, अतीन्द्रिय, स्वाद स्वरूप, अपने स्वभाव से ही उत्पन्न, उपमा रहित और विच्छेद रहित ज्ञान और सुखरूपी अमृत को पीते हुए स्थिरीभूत तीन लोक के शिखर पर विराजमान रहते हैं।

जिनके अनंतवीर्य है अर्थात् प्राप्त स्वभाव से कभी च्युत नहीं होते, जो दर्शन, ज्ञान और सुखरूप अमूल्य रत्नों से सहित हैं, जो संसार रूप अंधकार को दूर कर सूर्य के समान विराजमान हैं, जो अपने आत्मा से ही उत्पन्न ऐसे अनंत नित्य उत्कृष्ट शिवसुख रूप अमृत के समुद्र में सदा मग्न हैं, विकल्प रहित हैं, जिसकी महिमा अप्रतिहत (जो किसी से आहत न होवे) है और जो निरंतर आनंद के निवास स्थान हैं ऐसे श्री सिद्ध परमेष्ठी देव शोभायमान हैं जो तीनों लोकों का मस्तक (शिखर) है उसमें सदा निवास करते हैं।

अनुपम-स्वरूप से संयुक्त कृतकृत्य, नित्य, निरंजन, निरोग, निर्वद्य, निष्पाप स्व-आधार और निर्मल ज्ञान से युक्त सिद्ध परमेष्ठी लोक और अलोक को, लोक स्थित सर्व द्रव्यों और उनकी त्रिकालवर्ती सर्व पर्यायों को एक ही समय में जानते हैं।

जन्म-जरा और मरण से विनिर्मुक्त, निर्मल, अनक्षर (शब्दातीत), वेद से रहित, अनंत ज्ञानी, अनंत सुखी, कृतकृत्य, सर्वज्ञ स्व-सत्ता से सब कर्मों का घात करने वाले, सदा शिव, शुद्ध, परमपद में स्थित, परमसुखी, सर्वगत, सर्वदर्शी, ऐसे सर्व सिद्ध अव्याबाध, अनंत, अक्षय, अनुपम और अतीन्द्रिय सुख का निरंतर भोग करते हैं।

आत्मा स्व-संवेदन से प्रत्यक्ष तथा सुख स्वरूप

स्वसंवेदन सुव्यक्तस्तनुमात्रो निरत्ययः।

अत्यंतसौख्यवानात्मा लोकालोक विलोकनः।। (2)

यह आत्मा लोक एवं अलोक को प्रकाश करने वाला अनंत अक्षय ज्ञानी है। जीवादि षट्द्रव्य से व्याप्त आकाश को लोक कहते हैं उससे भिन्न अनंत आकाश को अलोक कहते हैं। ऐसे लोक एवं अलोक को जानने वाला आत्मा है। इससे सांख्य-मत का जो सिद्धांत ''ज्ञान शून्य चैतन्य मात्रात्मा है तथा योगमत के अनुसार जो बुद्धि आदि गुण से रहित पुरुष है'' का निरासन हुआ। इससे बौद्धों का नैरात्मवाद विध्वंस हुआ। पुनः यह आत्मा अत्यंत सौख्यवान् अर्थात् अनंत सुख सम्पन्न स्वभाव वाला है इससे सांख्य तथा योगमत का निषेध हुआ। यह आत्मा जिस शरीर को प्राप्त करता है उस शरीर में व्याप्त होने के कारण उस शरीर परिमाण हो जाता है। इससे इसका निरसन होता है कि आत्मा वट कणिका मात्र है। पुनः आत्मा द्रव्य रूप से शाश्वतिक है। इससे गर्भ से लेकर मरण तक ही जीव है, ऐसा मानने वाला चार्वाक मत का खण्डन हुआ।

प्रश्न–जो प्रमाण से सिद्ध है उसका गुणानुवाद-गुण कथन करना श्रेय है परन्तु आत्मा की सिद्धि प्रमाण से नहीं हुई है अतः उसका कथन योग्य नहीं है?

उत्तर–आचार्य कहते हैं कि आत्मा की सिद्धि स्व-संवेदन से सुव्यक्त है अर्थात् स्पष्ट रूप से सिद्ध है। तत्त्वानुशासन में कहा भी है-

''वैद्यत्वं वेदकत्वं च, यत्स्वस्यस्वेन योगिनः।
तत्स्वसंवेदनं प्राहुरात्मनोऽनुभवं दृशम्।।'' (तत्त्वानुशासन)

''जो योगियों को स्वयं का स्वयं के द्वारा ज्ञेयपना और ज्ञातपना है उसे ही स्व-संवेदन या आत्मा का अनुभव कहते हैं।'' इसी प्रकार स्व-संवेदन रूप प्रत्यक्ष प्रमाण से जो कि समस्त प्रमाण के लिए धुरी स्वरूप है उससे स्पष्ट रूप से योगियों को एक देश से आत्मा की अनुभूति होती है।

समीक्षा–आत्मा अमूर्तिक चैतन्य स्वरूप आनंद घनरूप है जिस प्रकार दीपक स्वयं प्रकाशित होता है एवं दूसरों को प्रकाशित करता है, इसी प्रकार आत्मा भी स्व-चेतना के गुण के माध्यम से स्वयं को एवं दूसरों को भी प्रकाशित करता है, जानता है एवं अनुभव करता है। इसलिए श्लोकों में कहा गया है कि आत्मा स्व-संवेदन से स्पष्ट रूप से जाना जाता है। आत्मा स्वतंत्र द्रव्य होने के कारण द्रव्य उत्पाद व्यय से युक्त होते हुए भी ध्रौव्य होने के कारण आत्मा भी नित्य है। संसारी जीव जिस शरीर

को प्राप्त करता है, संकोच विस्तार गुण के कारण आत्मा उस शरीर में पूर्ण रूप से व्याप्त करके रहता है आत्मा का सर्वश्रेष्ठ गुण है अक्षय, अनंत सुख। इस गुण के कारण ही जीव अन्य द्रव्य से श्रेष्ठ है। अनंत ज्ञान के माध्यम से जीव समस्त लोक-अलोक को जानता है। इन सब विषयों का वर्णन प्रवचनसार आदि ग्रंथों में विस्तार रूप से किया गया है, वहाँ से विशेष जिज्ञासु को अवलोकनीय है तथापि कुछ विषय यहाँ पर उद्धृत कर रहा हूँ।

भ्रष्ट नेता-अभिनेता-खिलाड़ी के भारत के अंधभक्त

(चाल : छोटी-छोटी गैया.....)

विश्वगुरु भारत आज बना है, भीड़तंत्र व भेड़तंत्र।
हिताहित विवेक (मौलिकता) छोड़ बना है नकलची व अंधभक्त।। (1)

तीर्थंकर राम कृष्ण बुद्ध चाणक्य चन्द्रगुप्त अशोक।
प्रताप शिवाजी लाल बाल पाल गाँधी सुभाष नहीं है आदर्श।। (2)

नेता अभिनेता खिलाड़ी जो नीति-नियम सदाचार रिक्त।
फैशन-व्यसन-भ्रष्टाचार युक्त, उनके बने हैं अंधभक्त।। (3)

तीनों को मानते हैं आदर्श श्रेष्ठ, राजनीति से ले धर्म तक।
उन्हें मानते (हैं) महान् व भगवान्, पूजनीय व संकट तारक।। (4)

महान् लक्ष्य व आदर्श बिना, शिक्षा व उपयोगिता बिना।
समय शक्ति साधन नष्टकर, भ्रष्ट हेतु दौड़ते ज्ञान बिना।। (5)

विद्यार्थी से लेकर युवक-युवतियाँ, उनके बनते हैं अंधभक्त।
भ्रष्टों को देखते-सुनते-छूते, सम्मान करते ये अंधभक्त।। (6)

माता-पिता-भाई-बंधु गरीब, रोगी से ले गुरु तक।
जो न करते इनकी सेवा-सम्मान, वे भी बनते भ्रष्टों के भक्त।। (7)

अन्नदाता किसान व राष्ट्र-रक्षक, सैनिक प्रति भी नहीं सम्मान।
लेखक-चिंतक-शोध-बोधकर्त्ता, वैज्ञानिक-श्रमिक प्रति नहीं सम्मान।। (8)

शील-सदाचार-मर्यादा-धर्म, आधुनिकता व शिक्षा-गौरव।
समय शक्ति धन-साधन नष्टकर, भी बनते भ्रष्टों के भक्त।। (9)

सेवादान परोपकार हेतु क्यों नहीं, होती तुम्हारी ऐसी रुचि/(प्रवृत्ति)।
अच्छे काम हेतु तो लज्जा आती, अंधभक्ति में क्यों होती रुचि/(प्रवृत्ति)।। (10)

इस हेतु तो भारत आज, अनेक क्षेत्र में बना है पिछड़ा।
शिक्षा-संस्कृति-सभ्यता-संपत्ति, शोध-बोध में पिछड़ा।। (11)

भ्रष्टाचार-फैशन-व्यसन-गंदगी-भ्रष्टाचार में अगुआ।
भेड़चाल व भेड़ियाचाल रोग, बलात्कार आदि में अगुआ।। (12)

इसलिए तो अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर, भारत का नहीं है प्रभाव।
विश्वगुरु सोने की चिड़ियाँ वाला देश का पड़ौसी पर भी नहीं प्रभाव।। (13)

अभी तो जागो! भारतीय आर्य, स्व-अनंत शक्ति का करो विकास।
स्व-पर विश्व-कल्याण हेतु, 'कनकनन्दी' का तुम्हें आशीष।। (14)

सीपुर, दिनांक 25.01.2017, रात्रि 9.25

भ्रष्टाचार के मामले में भारत 1 साल में 3 पायदान फिसला; 176 देशों में 79वें स्थान पर पहुँचा, स्वच्छता में अंक बढ़े

डेनमार्क सबसे कम भ्रष्ट, सोमालिया सबसे भ्रष्ट देश–भ्रष्टाचार को लेकर ट्रांसपेरेंसी इंटरनेशनल ने बुधवार को अपनी रिपोर्ट जारी की। 2016 की इस रिपोर्ट के मुताबिक भारत पिछले साल की तुलना में 3 स्थान फिसलकर 79वें स्थान पर पहुँच गया है। 2015 में यह 76वें स्थान पर था। ब्राजील और चीन भी भारत के साथ 79वें स्थान पर है। 'करप्शन परसेप्शन इंडेक्स' के मुताबिक डेनमार्क और न्यूजीलैंड सबसे कम भ्रष्ट है। इन्हें 100 में से 90-90 अंक मिले हैं। जबकि सोमालिया और दक्षिणी सूडान सबसे भ्रष्ट है। इस सूची में हमारे पड़ौसी पाकिस्तान 116वें, श्रीलंका 95वें, भूटान 27वें, नेपाल 131वें स्थान पर हैं। ब्रिटेन 10वें जबकि अमेरिका 18वें पायदान पर है।

भारत भ्रष्टाचार से निपटने में नाकाम : रिपोर्ट–भारत के स्वच्छता और पारदर्शिता अनुमान में दो अंकों की बढ़ोतरी हुई है, लेकिन भ्रष्टाचार रैंकिंग में यह तीन

स्थान नीचे चला गया है। ट्रांसपेरेंसी इंटरनेशनल ने कहा, 'भारत के खराब प्रदर्शन से पता चलता है कि सरकार भ्रष्टाचार रोकने में नाकाम रही है। भ्रष्टाचार के गरीबी, अशिक्षा और पुलिस कार्रवाइयों पर असर से दिखाता है कि अर्थव्यवस्था भले ही बढ़ रही हो, लेकिन असमानता भी बढ़ी है।'

कोई भी देश भ्रष्टाचार से अछूता नहीं–176 में से दो-तिहाई देश 100 अंकों में से आधे भी हासिल नहीं कर पाये। सबसे पिछड़े 5 देश तो 500 में सिर्फ 60 अंक ही हासिल कर पाये। लोगों को लोक-लुभावन नेताओं से बचने की चेतावनी भी दी गई है। इसमें कहा गया है कि भ्रष्टाचार ऐसे नेताओं को उभरने के लिए जमीन मुहैया करवा रहा है। इससे हालात और बिगड़ सकते हैं।

ये कम भ्रष्ट–डेनमार्क रैंक-1, स्कोर-90, न्यूजीलैंड रैंक-2, स्कोर-90, फिनलैंड रैंक-3, स्कोर-89, स्वीडन रैंक-4, स्कोर-88, स्वट्जरलैंड रैंक-5, स्कोर-86.

ये सबसे भ्रष्ट–सोमालिया रैंक-176, स्कोर-10, द. सूडान रैंक-175, स्कोर-11, उत्तर कोरिया रैंक-174, स्कोर-12, सीरिया रैंक-173, स्कोर-13, यमन रैंक-172, स्कोर-14.

भूटान हमसे आगे–भारत में भूटान को छोड़कर बाकी पड़ौसी देशों के मुकाबले कम भ्रष्टाचार है। खास बात यह है कि इनमें भारत समेत सभी देशों का स्कोर बढ़ा है।

हमारे पड़ौसी देश–भारत रैंक-79, स्कोर-40, श्रीलंका रैंक-95, स्कोर-36, पाकिस्तान रैंक-116, स्कोर-29, नेपाल रैंक-131, स्कोर-29, बांग्लादेश रैंक-145, स्कोर-26.

इन पैमानों के आधार पर बना है करप्शन पर्सेप्शन इंडेक्स 2016–भ्रष्टाचार रोधी कार्रवाई, भ्रष्टाचार के मामलों की निगरानी की कमी, नागरिक समाज के लिए घटते स्थान, संगठित एवं बड़े भ्रष्टाचार, रोजमर्रा के जीवन में बढ़ते भ्रष्टाचार और सरकार के प्रति लोगों का कम होता भरोसा, लोकतंत्र के फायदे और कानून की सख्ती।

नेताओं के झूठे आश्वासनों से तंग आ चुके हैं लोग-रिपोर्ट–टीआई के प्रमुख जोस उगाज ने कहा, 'लोग नेताओं के झूठे आश्वासनों से तंग आ चुके हैं।

लोकतंत्र में गिरावट आई है। प्रेस की स्वतंत्रता पर लगाम और न्यायपालिका को कमजोर करने जैसे मामले सामने आये हैं।'

दैनिक भास्कर

शाहरुख की दीवानगी

भारत को साधुओं, सपेरों और जादूगरों का देश कहने वाले तो अब खामोश हो चुके हैं लेकिन, अब हम स्वयं अपनी हरकतों से फिर वही साबित करने की कोशिश कर रहे हैं। चाहे तमिलनाडु में सांडों से लड़ने की लोकपरंपरा जल्लीकट्टू के नाम पर लोगों का उन्माद हो या अपनी फिल्म के प्रचार के लिए की गई शाहरुख खान की मुंबई से दिल्ली की रेलयात्रा के दौरान दीवानों का अतिरिक्त उत्साह हो, जान-माल की हिफाजत करने में समाज और सरकार दोनों नाकाम हो रहे हैं। आमिर खान की ताजा फिल्म की सफलता देखते हुए शाहरुख ने भी अपनी आगामी फिल्म के प्रचार में नया स्टंट किया लेकिन, इसमें वडोदरा स्टेशन पर जिस तरह फरीद खान नामक व्यक्ति की जान गई और दूसरे स्टेशनों पर भगदड़ की स्थिति रही उसे देखकर उनके इस कदम को अच्छा नहीं कहा जा सकता। कलाकार और उसके चहेतों के बीच भावुक रिश्ता होता है। लेकिन, उसे जानलेवा बनाने से पहले कलाकार को और समाज के व्यवस्थापकों को सोचना चाहिए। विवादास्पद राजनीतिक बयानों और भाजपा के विरोध के बावजूद शाहरुख के प्रति लोगों का उत्साह कायम है। किसी सामान्य व्यक्ति को रेल से चलने का जितना हक है उतना ही हक स्टार शाहरुख को भी है लेकिन, इससे अगर अव्यवस्था फैलती है, लोगों की जान जाती है तो इसकी इजाजत देने के बारे में सरकार को सोचना चाहिए। हालाँकि, शाहरुख ने वडोदरा में हादसे का शिकार हुए व्यक्ति के परिवार की देखभाल के लिए क्रिकेटर यूसुफ पठान को जिम्मा सौंप दिया है, इसके बावजूद उन्हें यह सोचना होगा कि अगर उनके काम से किसी का जीवन खतरे में पड़ता है तो उस काम को उन्हें किस हद तक करना चाहिए। समाज में संयम और तार्किकता का ताना-बाना कमजोर हो रहा है और इसे कायम करने के लिए न तो राजनीति की तरफ से प्रयास हो रहा है और न ही कला और साहित्य की ओर से। ऐसे में हमारी सरकारों और समाज के कलाकारों और बौद्धिकों सहित जिम्मेदार तबकों की जिम्मेदारी बनती है कि उन्माद और दीवानगी को

रोकने के लिए समझाने-बुझाने और कानूनी निषेध के प्रयास करे, ताकि परंपरा और कला का सम्मान भी रहे और लोगों का जीवन भी।

वडोदरा स्टेशन भगदड़ मामला : 5 हजार की क्षमता, 15000 पहुँचने से बिगड़े हालात-सोमवार देर रात अभिनेता शाहरुख खान को देखने वडोदरा रेलवे स्टेशन पर यकायक क्षमता से कई गुना अधिक लोगों के पहुँचने के कारण हालात बिगड़े थे। अभिनेता को देखने के लिए स्टेशन पर भीड़ उमड़ने के बावजूद पर्याप्त बंदोबस्त नहीं किया गया। आरपीएफ के जवान वडोदरा के क्रिकेटर पठान बंधुओं को अभिनेता से मिलवाने के लिए जद्दोजहद करते नजर आये। मारे गये वडोदरा के युवक फरीद खान के परिवारजनों ने आरोप लगाया कि फरीद खान को अस्पताल ले जाने में देरी हुई, जिससे उसकी मौत हो गई। रेलवे पुलिस ने फरीद खान की आकस्मिक मौत का मामला दर्ज किया है।

क्या है प्रारंभिक रिपोर्ट-प्रारंभिक रिपोर्ट में कहा गया है कि वडोदरा प्लेटफॉर्म संख्या-छह लगभग 750 मीटर लंबा एवं 30 मीटर चौड़ा है। इसकी क्षमता 5000 लोगों की है। लेकिन यकायक 15000 लोगों के पहुँचने एवं कोच संख्या-चार की ओर बढ़ने से ये हालात पैदा होने की बात सामने आई है। एसपी रेलवे ने यह भी बताया कि शाहरुख के आने की कोई अधिकारिक सूचना नहीं थी।

खेती-किसानी की योजनाओं में कटौती क्यों?

-भारत डोगरा

ऐसा लगता है कि खेती-किसानी से जुड़े राष्ट्रीय महत्व के उद्देश्यों को उचित प्राथमिकता नहीं मिल रही है। तभी ऐसा हो रहा है कि अधिक राष्ट्रीय महत्व की योजनाओं के बजट में कभी-कभी तो बहुत भारी कटौती कर दी जाती है।

प्रायः बजट के समय इस सवाल को नजरंदाज कर दिया जाता है कि पिछले वर्ष विभिन्न मदों में जो धन आवंटित हुआ उसका इस्तेमाल कहाँ तक हो पाया? खेती-किसानी के लिए गत वित्तीय वर्ष 2016-17 में कुछ अहम योजनाओं के बजट प्रावधानों का आकलन करे तो पता लगता है कि मूल बजट में जहाँ परंपरागत खेती व इससे जुड़े परंपरागत ज्ञान के पक्ष में बड़ी बातें की जाती हैं, वहाँ सबसे

अधिक कटौती भी इन्हीं से जुड़ी योजनाओं में की गई। परंपरागत कृषि विकास योजना के लिए गत वर्ष के बजट में 297 करोड़ रुपये का आवंटन किया गया जिसे बाद में आधे से भी कम यानी 120 करोड़ रुपये कर दिया गया। सरकार की एक बहुप्रचारित प्रधानमंत्री कृषि सिंचाई योजना के लिए पिछले वर्ष के बजट में 5767 करोड़ का आवंटन था पर बाद में इसे कम कर 5182 करोड़ रुपये का कर दिया गया। राष्ट्रीय कृषि विकास योजना के बजट से तो और भी अधिक कटौती की गई। इसके लिए मूल आवंटन 5400 करोड़ रुपये का था जिसे बाद में 3550 करोड़ रुपये कर दिया गया। राष्ट्रीय खाद्य सुरक्षा मिशन के लिए वर्ष 2016-17 के बजट में मूल रूप से 1700 करोड़ रुपये का आवंटन किया गया था जिसे बाद में 1280 करोड़ रुपये कर दिया गया। तिलहन व खाद्य तेलों का उत्पादन नहीं बढ़ेगा तो आयातित खाद्य तेलों पर निर्भरता बढ़ती जायेगी। आयातित खाद्य तेलों पर निर्भरता बढ़ती जायेगी। आयातित खाद्य तेलों में जी.एम. तिलहन के उपयोग की संभावना बढ़ने से स्वास्थ्य संबंधी खतरों की आशंका अधिक हो गई है। ऐसे में तिलहन व खाद्य तेल का घरेलू उत्पादन बढ़ाना पहले से और भी जरूरी हो गया है। तिलहन व आयल पॉम के राष्ट्रीय मिशन के लिए वर्ष 2016-17 के बजट में मूल रूप से 500 करोड़ रुपये का आवंटन किया गया था पर बाद में इसे कम कर 376 करोड़ रुपये कर दिया गया। ऐसा लगता है कि राष्ट्रीय महत्व के उद्देश्यों को उचित प्राथमिकता नहीं मिल रही है। तभी ऐसा हो रहा है कि अधिक राष्ट्रीय महत्व की योजनाओं के बजट में कभी-कभी तो बहुत भारी कटौती कर दी जाती है। परंपरागत कृषि योजना के लिए आवंटित बजट के संदर्भ में भी ऐसा ही किया गया। बजट प्रावधान करने के बाद ऐसी कटौती चिंताजनक है। भविष्य में कभी-कभी विशेष कारणों से सरकार को ऐसी जरूरत महसूस हो तो उसे यह कटौती गुपचुप ढंग से नहीं करनी चाहिए। इसके बारे में स्पष्ट बताना चाहिए कि यह कटौती क्यों की गई ताकि इसके बारे में खुली चर्चा हो सके।

घर के बड़ों को वक्त दीजिये...

अगर आपको लगता है कि बुजुर्ग बहुत सारे 'इम्परफेक्शन' के साथ रह रहे हैं तो जरा याद कीजिये, आपके ऐसे कितने ही दोस्त होंगे, जब उन्हें चाहते हैं तो इन्हें क्यों नहीं।

अगर आप चाहती हैं कि उम्र के तीसरे या चौथे पड़ाव में पहुँचती हुई आपकी माँ लंबा और खुशहाल जीवन जीये तो आप आज से उन्हें अपना वक्त देना शुरू कीजिये। शोध साबित कर चुके हैं कि माँ के साथ वक्त बिताने से वह दीर्घायु होंगी। असल में ऐसा न केवल माँ, बल्कि घर के किसी भी बुजुर्ग के साथ होता है। साथ वक्त बिताने, खाना खाने और उनकी बात सुनने से वे खुश रहने लगते हैं और इसका सीधा असर उनकी उम्र पर पड़ता है। फिर जैसा आप व्यवहार करती हैं, ठीक वैसा ही व्यवहार आपके बच्चे भी तो सीखते हैं...

बढ़ी मृत्यु दर-यूनिवर्सिटी ऑफ कैलिफोर्निया के शोधकर्त्ताओं ने पाया कि बुढ़ापा और अकेलापन साथ-साथ जुड़ी हुई चीजें हैं। शोध में 71 साल की उम्र से अधिक के 1600 लोगों को शामिल किया गया और पाया गया कि अच्छी आर्थिक स्थिति और सेहत के बावजूद अकेलापन मृत्यु दर को बढ़ाने वाला प्रभावी कारक है।

दोनों देते हैं एक-दूजे को-छह वर्ष तक हुए इस शोध में शामिल 23 फीसदी लोग अकेलेपन की वजह से जल्द मर गये, जबकि जिन 14 फीसदी लोगों को किसी न किसी का साथ मिला उनकी उम्र लंबी रही। वैसे देखा जाये तो अगर बुजुर्गों को परिवार का साथ मिलता है तो बदले में परिवार को भी परंपराएँ, आशीर्वाद, दुलार उनसे मिलता है।

क्यों होता है ऐसा-ऐसा दरअसल इसलिए होता है कि हम चाहते हैं कि जिन्हें हम जानते हैं, वे हमारी कद्र करें। ऐसा होता है तो हमें खुशी होती है। बुजुर्गों की निगाह में रिश्तों की बहुत अहमियत होती है। इसलिए न केवल आप बुजुर्गों से खुशहाल रिश्ता बनाये रखने की कोशिश करे, बल्कि अपने बच्चों को भी अभी से ऐसा करना सिखाये।

कृषि व्यापार का रिपोर्ट कार्ड

दुनिया की बढ़ती आबादी का पेट भरने के लिए जरूरी है कृषि क्षेत्र में तेजी से सुधार। आइये जानते हैं 62 देशों में उपलब्ध कृषि सुविधाओं पर विश्व बैंक के सर्वे की ताजा रिपोर्ट के मुताबिक भारत कहाँ खड़ा है।

कृषि संसाधन	भारत के अंक	रैंक	बेस्ट परफॉर्मर	अंक
बीज	70	21	नीदरलैंड्स	90

खाद	75	18	बोस्निया	98
मशीनरी	60	21	पोलैंड	95
फाइनेंस	63	15	कोलंबिया	95
बाजार	56	43	नीदरलैंड्स	90
ट्रांसपोर्ट	40	49	स्पेन	93
पानी की उपलब्धता	19	53	स्पेन	98
सूचना और संचार	62	18	स्पेन	100

सरकार पर भरोसे के मामले में हम दूसरे स्थान पर...

हाल ही में सरकार के प्रति पब्लिक ट्रस्ट को दर्शाने वाली रिपोर्ट '2017 एडेलमैन ट्रस्ट बैरोमीटर' आई है। इस रिपोर्ट में यह बताया गया है कि किस देश के कितने प्रतिशत लोग वहाँ की सरकार पर भरोसा करते हैं। यहाँ कुछ चुनिन्दा देशों के बारे में जानकारी दी जा रही है...

देश	ट्रस्ट %	घटा/बढ़ा
चीन	76	-3
भारत	75	10
तुर्की	51	09
यूएस	47	08
रूस	44	-9
जर्मनी	38	01
आस्ट्रेलिया	37	-8
यूके	36	00=
इटली	31	01
द. कोरिया	28	-7
फ्रांस	25	01
द. अफ्रीका	15	-1

घी मेरा नाम है धी बढ़ाना काम है

(चाल : पूछ मेरा क्या नाम रे.....)

घी मेरा नाम है, धी (बुद्धि) बढ़ाना काम है।
भारतीय देशी गाय का घी, मेरा उत्कृष्ट पैमाना है।। (1)

प्राचीन काल से भारत देश में, मेरा प्रयोग होता है।
भोजन से लेकर औषधि तक में, मेरा प्रयोग होता है।। (2)

मेरा वर्णन आयुर्वेद से, धर्म ग्रंथ तक हुआ है।
भोजन में ही नहीं धर्मकार्य में, मेरा प्रयोग होता है।। (3)

मेरे सेवन से बढ़ती बुद्धि, कांति व स्मृति।
स्रोत शोधक, वातनाशक, श्रमनाशक शक्ति।। (4)

स्वर कारक-पित्तनाशक-पुष्टिकारक शक्ति।
अग्निवर्धक-मधुर विपाकी-वृष्य वपु स्थैर्यद।। (5)

अमृत तुल्य-विष नाशक-चक्षुहितकर-आरोग्यकर।
रसायन हूँ मैं अतः मेरा सेवन बहु हितकर।। (6)

मेरा प्रयोग शरीर मर्दन में भी होता है हितकर।
पित्त-गर्मी-श्रम-भ्रम-शुष्कता भी परिहर।। (7)

डालडा आदि फैट सम मैं नहीं होता हूँ हानिकर।
मेरा दीपक जलाने/(होम करने) से, प्रदूषण भी हो जाते दूर।। (8)

पंचामृत में मेरा प्रयोग, होता शास्त्र वर्णित।
विज्ञान भी मान रहा है, मुझमें गुण अत्यधिक।। (9)

कुछ अज्ञ डॉक्टर-वैद्य अन्य फैट सम मुझे बताते।
जिससे कुछ लोग भ्रमित होकर, मुझे न सेवन करते।। (10)

योग्य रीति से योग्य व्यक्ति जो, मेरा सेवन करते।
उपरोक्त गुणों के कारण स्वस्थ्य-सबल वे बनते।। (11)

भारतीय प्राचीन पद्धति से, मेरा जो निर्माण होता।
वही अवस्था ही श्रेष्ठ होती, जिससे लाभ मिलता।। (12)

प्राचीन भारतीय भोजन-औषधि होते बहु उपकारी।
'कनकनन्दी' भी सेवन करके, जानते मेरे गुणभारी।। (13)

सीपुर, दिनांक 22.01.2017, प्रातः 6.47

घी के गुण

गाय का घी-

घीकांतिस्मृतिकारकं बलकरं मेधाकरं शुद्धिकृत्।
वातघ्नं श्रमनाशनं स्वरकरं पित्तापहं पुष्टिदम्।।
वह्नेर्वृद्धिकरं विपाकमधुरं वृष्यं वपुः स्थैर्यदं।
सेव्यं गव्यघृतोत्तमं बहुगुणं सद्यः समावर्तितम्।।

गाय का घी बुद्धि, कांति, बल, स्मृति और धारणा शक्ति उत्पन्न करने वाला, स्रोतरस के शोधक, वातनाशक, श्रमनाशक, स्वरकारक, पित्तनाशक, पुष्टिकारक, अग्निवर्धक, मधुरविपाकी, वृष्य, आयुवर्धक, श्रेष्ठ और बहुगुणी है। इसलिये घी सेवन करना हितकारक है। गाय का घी अमृततुल्य है। विषनाशक, आँख के लिए हितकारक, आरोग्यकर, वृष्य रसायन है।

भैंस का घी-

सर्पिमीहिषमुत्तमं घृतिकरं सौख्यप्रदं कांतिदं।
वातश्लेष्मनिवर्हणं बलकरं वर्णप्रसादक्षमम्।।
दुर्नामगृहणीविकारशमनं मंदानलोद्दीपनं।
चक्षुष्यं नवगव्यतः परमिंद हृदयं मनोहरि च।।

भैंस का घी उत्तम धारण शक्ति दायक, सुखकारक, कांतिवर्धक, कफवातनाशक, शक्तिवर्धक, शरीर का वर्णन उत्तम बनाने वाला, बवासीर सग्रहणी रोग नाशक, मंदाग्निप्रदीप्तकारक, आँख के लिए हितकर और गाय के घी से मनोहर और हृद्य है।

बकरी का घी-

आजं घृतं दीपनं च चक्षुष्यं बलवर्धनम्।
कासेश्वासे क्षयेवाऽपि पथ्यं पानेषु तल्लघु।।

बकरी का घी अग्निदीपक, आँख के लिए बलकारक, खाँसी श्वास और राजयक्ष्मा (टी.बी.) रोगनाशक है।

भेड़ और ऊँटनी का घी-

आविकं धृतमतीव गुरुत्वाद्वर्ज्यमेव सुकुमार नराणाम्।
सद्य एवं बलपुष्टिकारं स्यादौष्ट्रकं श्रथनाशकरं च।।

भेड़ का घी अतिजड़ (गुरु) है इसलिये सुकुमारों के लिए वर्जनीय है। तत्काल बल पुष्टिकारक है और ऊँटनी का घी सूजननाशक है।

घी (नया)-

योजयेन्नव मेवाज्यं भोजने तर्पणे श्रमे।
बलक्षये पांडुरोगे कामलानेत्ररोगयोः।।

नया घी श्रमनाशक और तृप्तिकारक है, इसलिये वह भोजन में ग्रहण करना आरोग्यकारक है। पांडुरोग-कामला-नेत्ररोग में सेवनीय और बलकारक है।

घी पुराना-

सर्पिः पुराणं विज्ञेयं दशवर्षस्थित तु यत्।
सर्पि पुरातनं श्रेष्ठं त्रिदोषतिमिरापहम्।।
मूर्च्छा कुष्ट विषोन्मादग्रहापस्मारनाशनम्।
दससंवत्सरादूर्ध्वमाज्यमुक्तं रसायनं।।
शतवर्षस्थितं यत्तु कुंभसर्पिस्तदुच्यते।
रक्षोघ्नं कुंभसर्पिः स्यात्परतस्तु महाघृतं।।
पेयं महाघृतम् भूपैः सर्वतोऽपि गुणाधिकं।
यथा यथा जरां यातिगुणवत्स्यात्तथातया।।
भक्षणात्कासरोगाघ्नमंजनान्नेत्ररोगजित्।
शिरोभ्यंग दुर्ध्व चक्षुरोगघ्नं तत्पुरातनम्।।

पुराना घी (जो घी दस साल तक रखा जाता है उसको पुराना कहते हैं) त्रिंदोषजन्य तिमिररोग (अंधत्व) नाशक है और मूर्च्छा, कुष्ट, ग्रहबाधा, विष, उन्माद-अपस्मार नाशक है। दस साल के आगे के घी को रसायन कहते हैं। सौ साल पुराने घी को 'कुंभसर्पिः' कहते हैं। वे राक्षस बाधानाशक है। कुंभसर्पि घी से पुराना घी जो होता है उसे 'महाघृत' कहते हैं। सब घी में 'महाघृत' श्रेष्ठ है। वह राजाओं के लिए हितकारक है। घी जितना ज्यादा पुराना होगा उतना अधिक गुणकारी बनता है। पुराना घी खाँसी नाशक, नेत्र रोग नाशक और शिरःरोग नाशक है।

पुराना घी निषेध-

राजयक्ष्माणि बाले चवृद्धेश्लेष्माश्रये गदे।
रोगे सामे विषुच्याँ च विबन्धे च मदात्यये।
ज्वरे मंदानले मेहे न सर्पिर्बहु मन्यते।।

क्षय, कफ संबंधी सर्व रोग, आमयुक्त रोग, कॉलेरा, मलावरोध, मदात्यय, ज्वर, अग्निमांद्य और प्रमेह-इन विकारों में और बालवृद्ध को सेवन करना योग्य नहीं।

सेहत पर वनस्पति तेलों के बुरे प्रभाव को देखने के बाद लोगों की धारणा अब देशी घी के बारे में बदलने लगी है

घी पीयो, स्वस्थ जीयो, नया सुपरफूड है घी

आपको यह जानकर शायद ताज्जुब होगा कि अमरीका की रियलिटी टीवी स्टार कोर्टनी करदाशियां, हैल्थ डीवीडी के लिए मशहूर अभिनेत्री शिल्पा शेट्टी और कभी अपने जीरो फिगर के लिए चर्चा में आ चुकी करीना कपूर और उनके पति सैफ अली खान अपने भोजन में दो चम्मच शुद्ध घी जरूर खाते हैं।

विदेशी भी हुए मुरीद-शुद्ध देशी घी भारतीय खानपान और आयुर्वेद का अभिन्न अंग रहा है। हमारे बुजुर्ग सदा से इसके गुणों के मुरीद रहे हैं और रोजाना घी का सेवन करने की पैरवी करते रहे हैं। आधुनिक जमाने के युवा और शहरी संस्कृति से प्रभावित लोगों के साथ-साथ डॉक्टर भी अक्सर घी से दूर रहने और रिफाइंड वेजीटेबल ऑयल का प्रयोग करने की सलाह देते हैं। लेकिन अब पश्चिमी जगत् के न्यूट्रीशन वैज्ञानिक भी हमारे पुरखों की सलाह पर सहमति जता रहे हैं और दुनिया भर में कई सेहत वैज्ञानिक इसके गुणों की महिमा गाते देखे जा रहे हैं। ऋजुता दिवाकर और शिखा शर्मा जैसी जानी-मानी न्यूट्रीशन विशेषज्ञों ने भी घी के सेवन को सेहत के लिए सही बताया है। विशेषज्ञों का कहना है कि सेहत पर वेजीटेबल तेलों के बुरे प्रभाव को देखने के बाद लोगों की धारणा बदलने लगी है। देशी घी का चलन भारत ही नहीं दुनिया भर में बढ़ा है। अमरीका और यूके से लेकर आस्ट्रेलिया तक आपको शुद्ध घी के कई स्थानीय ब्रांड मिल जायेंगे जिनकी अच्छी खासी माँग है। सिडनी के फार्मरस मार्केट में भी आपको शुद्ध देशी घी बिकता हुआ दिख जायेगा, जो

वहाँ के किसान भारतीय पद्धति से बनाते हैं। इसकी वहाँ अच्छी खासी डिमांड भी है।

संतुलित हो सेवन–हैल्थ एक्सपर्ट्स कहते है कि घी का सेवन करे लेकिन सीमित मात्रा में। आयुर्वेद में भी घी का प्रयोग संतुलित मात्रा में ही करने की सलाह दी गई है। ऋजुता की राय में युवाओं और बुजुर्गों को इसकी सबसे ज्यादा जरूरत होती है और गर्मी से अधिक सर्दियों में इसका सेवन करना चाहिए। इनका कहना है कि हमने पश्चिमी पोषण विज्ञान का अंधानुकरण करते हुए घी का सेवन बंद करके रिफाइंड वेजीटेबल ऑयल अपना लिए। इसी लाईन पर चलते हमारे यहाँ के कार्डियोलॉजिस्ट और डायबिटीज स्पेशलिस्ट कहते हैं कि घी सेहत के लिए नुकसानदायक है। लेकिन अब विज्ञान जिन तथ्यों के साथ सामने आया है, उनके बारे में जानकर उनकी राय भी बदलने लगेगी।

हैल्थ एक्सपर्ट की माने तो घी का इस्तेमाल वे भी कर सकते हैं, जिन्हें लैक्टोज इन्टोलरेन्स या कैसीन (मिल्क प्रोटीन) से एलर्जी जैसी समस्याएँ होती हैं।

सेलेब्रिटी शैफ की भी पसंद–यूएस में एल्टॉन ब्राउन और माइकल रिचर्ड जैसे सेलेब्रिटी शैफ भी अपनी रेसिपीज में घी का प्रयोग कर रहे हैं। एल्टॉन ब्राउन ने तो ट्विट करके देशी घी घर पर बनाने का तरीका भी बताया है। पैलियो डाइट, जिसमें पुरखों के अंदाज में भोजन किया जाता है, के पैरोकार भी घी के मुरीद हैं। इसके अलावा पश्चिम में पौपुलर बुलेट प्रूफ कॉफी और हल्दी युक्त दूध (टरमेरिक लैट्टे) के शौकीन, जो आपको सिडनी से लेकर सैनफ्रांसिस्को तक मिल जायेंगे, वे भी इन पेय पदार्थों में एक चम्मच घी डालकर इसके पोषक तत्त्वों का लाभ उठा रहे है। अमेजन पर सबसे ज्यादा बिकने वाले ऑर्गेनिक घी ब्रांड, 'प्योर इंडियन फूड्स' के मालिक संदीप अग्रवाल ने घी के सेवन के प्रति लोगों में जागरूकता फैलाने के लिए अपनी वाल स्ट्रीट की मोटी पगार वाली जॉब छोड़ दी। पश्चिमी स्वाद के अनुरूप देशी घी को लोकप्रिय बनाने के लिए संदीप ने घी के कई स्वाद तैयार किये हैं-इटालियन घी, गार्लिक घी, हर्ब्ड डी प्रोविंस घी, इंडियन डैजर्ट घी, डाइजेस्टिव घी एवं कोकोनट घी।

हैल्थ एक्सपर्ट की राय–मंजे हुए हैल्थ एक्सपर्ट्स की माने तो 1980 से लो फैट का जो फंडा चला वह कुछ हद तक गुमराह करने वाला था कि सैचुरेटेड फैट्स रक्त में कोलेस्ट्रॉल की मात्रा बढ़ाकर धमनियों को अवरुद्ध कर देती है। ताजा

अनुसंधान के मुताबिक रिफाइंड कार्बोहाइड्रेट और शुगर की उच्च मात्रा वाली लो फैट डाइट्स ज्यादा नुकसानदायक होती है। यहाँ तक कि यूनाइटेड स्टेट्स फूड्स एवं ड्रग्स ऑथोरिटी ने भी डाइटरी कोलेस्ट्रॉल और हार्ट डिजीज के बीच किसी प्रकार के लिंक को बीते साल से अमान्य घोषित कर दिया है।

इसलिए अब घी जैसे कुदरती स्त्रोत से प्राप्त सैचुरेटेड फैट्स को सेहत के लिए अच्छा माना जा रहा है और इसके तमाम गुणों की वजह से इसे सुपर फूड का दर्जा दिया जा रहा है। घी में शॉर्ट चेन फैटी एसिड्स काफी मात्रा में होती है जो पेट में गुड बैक्टीरियाज को मेंटेन करने में मददगार है। इससे फैट को नष्ट करके वजन कम करने में सहायक माना जा रहा है। इसके अलावा घी में बूटीरेट (एससीएफए) भी होता है जो आँतों के स्वस्थ के लिए लाभकारी है इसमें डिटॉक्सीफाई करने वाले व एंटी इंलेमेटरी गुण होते है।

इतना ही नहीं घी में फैट-सोल्यूबल विटामिन ए, डी, ई और के भी होते है। घास चरने वाली गायों के दूध से बने घी में लिनोलिक एसिड होता है जो कैंसर से लड़ने वाला एंटी ऑक्सीडेंट होता है। सेलेब्रिटी न्यूट्रीशनिस्ट ऋजुता दिवाकर का मानना है कि भोजन में घी का प्रयोग करने से यह उसका ग्लिसमिक इंडेक्स घटा देता है, जिससे ब्लड शुगर नियंत्रित होती है।

पंच समिति : स्वच्छ-स्वस्थ्य-सामान्यज्ञान-नैतिक-दैनिक क्रिया

(चाल : आत्मशक्ति.....)

सामान्यज्ञान व नैतिक आचरण, समाहित है पंच समिति में।
आत्मविकास युक्त पर्यावरण रक्षक, जीवन यापन है पंच समिति में।।

पैदल चलना है ईया समिति नंगे पैरों से जीव रक्षा करते हुए।
प्रासुक व प्रशस्त मार्ग में, महान् उद्देश्य युक्त भाव से।।

इससे प्रदूषण नहीं होता, नहीं होती दुर्घटना जन्य मृत्यु।
भौगोलिक व सांस्कृतिक ज्ञान होता, तन-मन भी होते स्वस्थ।।

हित-मित-प्रिय सत्य कहना, इसे कहते हैं भाषा समिति।

शब्द प्रदूषण भी नहीं होता, न होता अपव्यय समय-शक्ति।।

विसंवाद रहित संवाद होता, ज्ञान का होता सही आदान-प्रदान।
वाद-विवाद-कलह न होते, बढ़ते भी हैं प्रेम-संगठन।।

शुद्ध सात्विक शाकाहार करना, केवल दिन में साधना हेतु।
सरल-सहज उपलब्ध भिक्षा ग्रहण करना तन-मन स्वास्थ्य हेतु।।

दीन-हीन-अहंकार भाव रहित, पर अपीड़क भाव सहित।
याचना-प्रलोभन-भय रहित, आरंभ-परिग्रह-द्वंद्व रहित।।

किसी भी वस्तु या उपकरण उठाना-रखना सावधान सहित।
जीवों की रक्षा हेतु परिमार्जन सहित यह सिमति आदान-निक्षेपण।।

उठना-बैठना-शयन भी, निर्जन्तुक स्थान में होना विधेय।
शरीर स्थान को परिमार्जन पूर्वक, प्रमाद व आलस्य रहित।।

ग्राम-नगर से दूर स्थान में, एकांत व निर्जन्तुक स्थान में।
मल-मूत्र विसर्जन करना विधेय, निषेध व बाधा रहित स्थान में।।

इससे जल-मृदा-वायु प्रदूषण न होते, न होते जीवों के घात।
तन-मन-वातावरण स्वच्छ होते, समस्या न होती मल निष्कासन।।

जैन साधुओं के ये पंच समितियाँ सिखाती हमें जीने की कला।
स्वच्छ-स्वस्थ्य दैनिक क्रिया, 'कनकनन्दी' की श्रामण्य क्रिया।।

सीपुर, दिनांक 08.02.2017, रात्रि 2.2

संदर्भ-

समिति के भेद

ईर्याभाषैषणादाननिक्षेपोत्सर्गाः समितयः। (5)

Walking, speech, eating, lifting and laying down and depositing waste products constitute the fivefold regulation of activities.

समिति-Carefulness in to take.

सम्यक्ईर्या समिति-Proper care in walking.

सम्यक्भाषा समिति-Proper care in speaking.

सम्यक्एषणा समिति-Proper care in eating.

सम्यक्आदाननिक्षेप समिति-Proper care in lifting and laying.

सम्यक्उत्सर्ग समिति-Proper care in excreting.

ईर्या, भाषा, एषणा, आदान निक्षेप और उत्सर्ग ये पाँच समितियाँ हैं।

(1) ईर्या समिति-

फासुयमग्गेण दिवा जुंगतरप्पेहिणा सकज्जेण।

जंतूणि परिहरंतेणिरियासमिदी हवे गमणं।। (11) (मूलाचार भाग-1)

प्रयोजन के निमित्त चार हाथ आगे जमीन देखने वाले साधु के द्वारा दिवस में जीवों की रक्षा करते हुए गमन करना ईर्या समिति है।

'प्रगता असवो यस्मिन्'-निकल गये हैं प्राणी जिसमें से उसे प्रासुक कहते हैं। ऐसा प्रासुक-निरवद्य मार्ग है। उस प्रासुक मार्ग से अर्थात् हाथी, गधा, ऊँट, गाय, भैंस और मनुष्यों के समुदाय के गमन से उपमर्दित हुआ जो मार्ग है उस मार्ग से दिवस में-सूर्य के उदित हो जाने पर, चक्षु से वस्तु स्पष्ट दिखने पर चार हाथ आगे जमीन को देखते हुए अर्थात् अच्छी तरह एकाग्रचित्त पूर्वक पैर रखने के स्थान का अवलोकन करते हुए सकार्य अर्थात् शास्त्रश्रवण, तीर्थयात्रा, गुरुदर्शन आदि प्रयोजन से, एकेन्द्रिय आदि जंतुओं की विराधना न करते हुए जो गमन करना होता है वह ईर्या समिति है। इससे यह भी समझना कि धर्मकार्य के बिना साधु को नहीं चलना चाहिए।

तात्पर्य यह है कि, धर्मकार्य के निमित्त चार हाथ आगे देखते हुए साधु के द्वारा दिवस में प्रासुक मार्ग से जो गमन किया जाता है वह ईर्या समिति कहलाती है अथवा साधु का जीवों की विराधना न करते हुए जो गमन है वह ईर्या समिति है।

(2) भाषा समिति-

पेसुण्णहासकक्कसपरणिंदाप्पपसंसविकहादी।

वज्जित्ता सपरहियं भासासमिदी हवे कहणं।। (12)

चुगली, हँसी, कठोरता, परनिन्दा, अपनी प्रशंसा और विकथा आदि को छोड़कर अपने और पर के लिए हितरूप बोलना भाषा समिति है।

पिशुन-चुगली के भाव को पैशून्य कहते हैं-अर्थात् निर्दोष के दोषों का उद्भावन करना, निर्दोष को दोष लगाना। हास्य कर्म के उदय से अधर्म के लिए हर्ष

होना हास्य है। कान के लिए कठोर, काम और युद्ध के प्रवर्तक वचन कर्कश हैं। पर के सच्चे अथवा झूठे दोषों को प्रगट करने की इच्छा का होना अथवा अन्य के गुणों को सहन नहीं कर सकना यह परनिन्दा है। अपनी प्रशंसा-स्तुति करना अर्थात् अपने गुणों को प्रकट करने का अभिप्राय रखना और स्त्रीकथा, भक्तकथा, चोरकथा और राजकथा आदि को कहना विकथादि हैं। इन चुगली आदि के वचनों को छोड़कर अपने और पर के लिए सुखकर अर्थात् कर्मबंध के कारणों से रहित वचन बोलना भाषा समिति है।

तात्पर्य यह है कि पैशून्य, हास्य, कर्कश, परनिन्दा, आत्म प्रशंसा और विकथा आदि को छोड़कर स्व और पर के लिए हितकर जो कथन करना है वह भाषा समिति है।

(3) एषणा समिति-

छादालदोससुद्धं कारणजुत्तं विसुद्धणवकोडी।

सीदादीसमभुत्ती परिसुद्धा एसणासमिदि।।(23)

छियालीस दोषों से रहित शुद्ध, कारण से सहित, नव-कोटि से विशुद्ध और शीत-उष्ण आदि में समान भाव से भोजन करना यह सम्पूर्णतया निर्दोष एषणा समिति है।

उद्गम, उत्पादन, एषणा आदि छियालीस दोषों से शुद्ध आहार निर्दोष कहलाता है। असाता के उदय से उत्पन्न हुई भूख के प्रतिकार हेतु और वैयावृत्य आदि के निमित्त किया गया आहार कारण युक्त होता है। मन, वचन, काय को कृत, कारित-अनुमोदना से गुणित करने पर नव होते हैं। इन नव-कोटि विकल्पों से रहित आहार नव-कोटि विशुद्ध है। ठण्डा, गर्म, लवण से सरस या विरस अथवा रूक्ष आदि भोजन में समान भाव अर्थात् शीत-उष्ण आदि भोज्य वस्तुओं में राग-द्वेष रहित होना, इस प्रकार सब तरफ से निर्मल निर्दोष आहार ग्रहण करना एषणा समिति होती है। तात्पर्य यह है कि छियालीस दोष रहित जो आहार ग्रहण है जो कि कारण सहित है और मन-वचन-काय पूर्वक कृत कारित अनुमोदना से रहित तथा शीतादि में समता भावरूप है, वह साधु के निर्मल एषणा समिति होती है।

(4) आदान-निक्षेपण समिति-

णाणुवहि संजमवहिं सउचुवहिं अण्णमप्पमुवहिं वा।

पयदं गहणिक्खेवोसमिदि आदाणणिक्खेवा।।(34)

ज्ञान का उपकरण, संयम का उपकरण, शौच का उपकरण अथवा अन्य भी उपकरण को प्रयत्नपूर्वक ग्रहण करना और रखना आदान निक्षेपण समिति है। ज्ञान-श्रुतज्ञान के, उपधि-उपकरण अर्थात् ज्ञान के निमित्त पुस्तक आदि ज्ञानोपधि हैं। पाप क्रिया से निवृत्ति लक्षण वाले संयम के उपकरण अर्थात् प्राणियों की दया के निमित्त पिच्छिका आदि संयमोपधि हैं। मल आदि के दूर करने के उपकरण अर्थात् मल-मूत्रादि प्रक्षालन के निमित्त कमण्डलु आदि द्रव्य शौचोपधि हैं। अन्य भी उपधि का अर्थ है संस्तर आदि उपकरण। अर्थात् घास, पाटा आदि वस्तुएँ। इन सब उपकरणों को प्रयत्नपूर्वक अर्थात् उपयोग स्थिर करके सावधानीपूर्वक ग्रहण करना तथा देख, शोधकर ही रखना यह आदान निक्षेपण समिति है। यहाँ गाथा में 'उपधि' शब्द में द्वितीया विभक्ति है किन्तु प्राकृत व्याकरण के बल से यहाँ पर षष्ठी विभक्ति का अर्थ लेना चाहिए। तात्पर्य यह हुआ कि ज्ञानोपकरण, संयमोपकरण, शौचोपकरण तथा अन्य भी उपधि (वस्तुओं) का सावधानीपूर्वक पिच्छिका से प्रतिलेखन करके जो उठाना और धरना है वह आदान निक्षेपण समिति है।

(5) प्रतिष्ठापन समिति-

एगंते अच्चित्ते दूरे गूढे विसालमविरोहे।

उच्चारादिच्चाओ पदिठावणिया हवे समिदि।।(15)

एकांत, जीव-जंतु रहित, दूर स्थित, मर्यादित, वस्तीर्ण और विरोध रहित स्थान में मल-मूत्रादि का त्याग करना प्रतिष्ठापना समिति है।

जहाँ पर असंयत जनों का गमनागमन नहीं है, ऐसे विजन स्थान को एकांत कहते हैं। हरितकाय और त्रसकाय आदि से रहित जले हुए अथवा जले के समान ऐसे स्थण्डिल-खुले मैदान को अचित्त कहा है। ग्राम आदि से दूरस्थान को यहाँ दूर शब्द से सूचित किया है। संवृत्त-मर्यादा सहित स्थान अर्थात् जहाँ लोगों की दृष्टि नहीं पड़ सकती ऐसे स्थान को गूढ़ कहते हैं। विस्तीर्ण या बिलादि से रहित स्थान विशाल कहा गया है और जहाँ पर लोगों का विरोध नहीं है वह अविरुद्ध स्थान है। ऐसे स्थान में शरीर के मल-मूत्रादि का त्याग करना प्रतिष्ठापना नाम की समिति है। तात्पर्य यह हुआ कि एकांत, अचित्त, दूर, गूढ़, विशाल और विरोध रहित प्रदेशों में सावधानीपूर्वक जो मल आदि का त्याग करना है वह मल-मूत्र विसर्जन के रूप में प्रतिष्ठापन समिति

होती है। ये समितियाँ पर्यावरण शुद्ध के लिए कारणभूत भी है।

''आध्यात्मिक शाश्वतिक वसन्त''

(चाल : सजती है यूँ ही महफिल.....)

होऽऽऽ श्रामण्य/(आध्यात्म) के नये/(की) वसन्त (ऋतु) में, रत्नत्रय को खिलने दो।
समता-शांति-आत्मविशुद्धि, की बयार बहने दो।। (ध्रुव)

राग-द्वेष-मोह के, पुराने पत्ते गिरने दो।
आत्मलीनता के नव उन्मेष होने दो।
श्रद्धा-प्रज्ञा व चर्या से, आत्मविकास होने दो।। (1)

क्षमा-मृदुता-ऋजुता आदि, दश धर्म (मय) पुष्प खिलने दो।
शुद्ध-बुद्ध-आनंद का, मकरंद भी बहने दो/(झरने दो)।
चिर दुःखों से पीड़ित जीव, को तृप्त होने दो।। (2)

मैत्री प्रमोद कारुण्य साम्य की, शीतल छाया होने दो।
अनंत कालीन संतप्त आत्मा, को शांत होने दो।
गुण गण मधुप-कोयल को, आध्यात्मिक गुंजार करने दो।। (3)

अस्त-व्यस्त-संत्रस्त जीवों को, आत्म संगीत सुनने दो।
आध्यात्मिक अनंत गुणों का, निवास सतत/(वसन्त) होने दो।
आध्यात्मिक ज्ञानानंद अक्षय, सुख प्रगटने दो।। (4)

सत्य-शिव-सुंदरमय, ध्रुव वसन्त होने/(छाने) दो।
स्वयंभू-स्वयंपूर्ण-निजानंद को पाने दो।
श्रमण 'कनक' सदा निज स्वरूप में रहने दो।। (5)

सीपुर, दिनांक 08.02.2017 (वसंत ऋतु), मध्याह्न 2.50

अध्यात्म वसन्तात गुण पुष्प फूलू दे!

(चाल : जीवनात ही घड़ी....., मंगलमय नाव तुझे.....)

अध्यात्म/(नव तारुण्य) वसन्तात गुण पुष्प फूलू दे...
मोक्ष पुरुषार्थ करूनिया मुक्ति लाभू दे...अध्यात्म...(ध्रुव)...

स्वताः मध्ये रमण्याचा छन्द वेगळा...
त्याचा जो आनंद असे जगा वेगळा...
सोऽहं भाव मम मनी नित्य वसू दे...अध्यात्म...(1)...

ध्यान ध्याता ध्येय जेथे एकच असे...
चित् स्वभाव चित् चमत्कार आत्मा चे असे...
श्रद्धा ज्ञान आचरण एक रूप होऊ दे...अध्यात्म...(2)...

अध्यात्म जगात प्रवेश माझा सद्या झाला...
आत्म स्वरूप जाणण्याचा छंद लागला...
त्वरित स्वताः समजण्याचे शक्ति लाभू दे...अध्यात्म...(3)...

निःशंक भावना मनात निःकांक्षा ही मनी...
उपगूहन वात्सल्य भावना मज ठायी...
आत्म प्रभावना करण्याचे साहस येऊ दे...अध्यात्म...(4)...

सीपुर, दिनांक 09.02.2017, मध्याह्न 12.35

साक्षर एवं धार्मिक (रूढ़ीवादी) जनों तक में नैतिकाचार का अभाव क्यों?

-आ. कनकनन्दी

(चाल : परदेसियों से ना.....)

बहुधा बहु मानव ना होते हैं नैतिक।
चाहे वे साक्षर या रूढ़िवादी धार्मिक।। (ध्रुव)

धनादि-लोभ के पुजारी बहुतेरे, जिससे झूठ-चोरी-ठगी पाप घनेरे।
नाम प्रसिद्धि के फेर में पड़े हैं, नैतिकता का ढोंग रचे हैं।। (1)

पढ़ाई-कमाई-फैशन वृत्ति, सेवा परोपकार से वे रिक्त।
अनुभव बिन पाखंड रचे है, मकड़ी-जाल सम खुद ही उलझे हैं।। (2)

संसार-वर्धन-कला विशेषज्ञ, स्वार्थ पूर्ति के वे संरक्षक।
सुख-दुःख जाने/(माने) तात्कालिक, नाना विध नकलची और विदूषक।। (3)

आत्म-विद्या ज्ञान से शून्य, हेय-उपादेय से होते अनजान।
अनंत सुखादि का भान नहीं है, सद्गुरु हेतु भक्ति नहीं है।। (4)

नैतिक सह सदाचार प्रथमतः पाकर, महान् धर्माचरण सद्संगति पाकर।
जीवन सुखी सुरभित होते सद्गुरु कृपा से, अमूल्य सुख शांति पाये और विस्तारे।। (5)

'अजय' इन मूल्यों को यथाशीघ्र अपना लो, सद्गुरु 'कनकनन्दी' की सीख अपना लो।
'कनक-गुरु' जैसा आदर्श जो भी अपनाता। उज्ज्वल भविष्य व सौख्य ही पाता।।
बुधजन! तुम्हें यदि सुख जो है पाना, नैतिकता को नित-नित भजना।। (6)

सीपुर, दिनांक 07.02.2017, मंगलवार 2.50 दोपहर

'कनक' गुरुवरांची निस्पृह वृत्ति

-ब्र. संगीता

(चाल : केशवा, माधवा.....)

'कनकनन्दी' ऋषीवरा, सूरीवरा मुनिवरा
गुरुवरांच्या/(तुमच्या) नावात रे गोडवा...2 (धृव)

तुझ्या सारखा तूच गुरुवरा, तुला कुणाचा नाही हेवा।
वेकोवेळी संकटातूनी, वाचविशी प्रत्येक जीवा (ला)।।...गुरुवरांच्या...(1)

तुम्हा सर्वची ज्ञान, त्याचा तुम्हाला जरा न मान।
माझ्या सारखे शिष्य व्हावे, अशी मनी भावना।।...गुरुवरांच्या...(2)

विविध गुरुवरांचे तुमचे रूप, आई बनूनी माया देशी।
पिता बनूनी पालन करिशी, गुरु होवूनी ज्ञान करविशी।।...गुरुवरांच्या...(3)

गुरुवर तुमचे अनुशासन, संगिताला खूपच प्रिय।
या अनुशासनाने संघामध्ये, प्रेम संगठना एकता।।...गुरुवरांच्या...(4)

गुरुवरांची निस्पृह वृत्ति, अयाचक आहे वृत्ति।
अनुभव ज्ञानाचे अमृत पाजून, ज्ञानी बनविशी शिष्यांना।।...गुरुवरांच्या...(5)

सीपुर, दिनांक 04.02.2017, मध्याह्न 2.05

दि. जैन श्रमण-श्रमणी की आहार विधि

(गोचरी के समय-विधान व गमन-आगमन)

(चाल : आत्मशक्ति.....)

आहारचर्या का कुछ वर्णन, कर रहा हूँ मैं आगमानुसार।
जिससे दाता पात्रों को, दे पायेंगे सही आहार।

आहार दान है महान् दान, जिसमें गर्भित चारों दान।
जिससे दाता व पात्र दोनों, परंपरा से पाते मोक्ष धाम।। (1)

नवद्याभक्ति व सप्त गुण युक्त, आहार दाता होते महान्।
शुद्ध प्रासुक दिन में (ही) निर्मित, भोजन-जल करते दान।

सूर्य उदय से 3 घड़ी (72 मिनिट) बाद आहार बेला होती प्रारंभ।
सूर्य अस्त से 3 घड़ी पूर्व तक, आहार बेला का होता समय।। (2)

प्रतिक्रमण (रात्रिक) व स्वाध्याय तथा, प्रतिष्ठापन से हो निवृत्त।
शुद्धि के अनंतर आहार बेला में, साधु (साध्वी) आहार हेतु करते गमन।

भोजन गृह से धुआँ निकलना, जब हो जाता है बंद।
बालक जब भोजन करके खेलते होकर के आनंद।। (3)

तब आहार हेतु जाते अथवा, जब दाता लाता शुद्धि हेतु जल।
तब आहार के लिए जाते साधु करके उक्त क्रिया सकल।

यदि प्रथम बेला में न जाते गोचरी हेतु, तब द्वितीय बेला में जाते।
मध्याह्न के सामायिक के अनंतर, भ्रामरी हेतु साधु जाते।। (4)

वृत्ति परिसंख्यान के अनुसार, जब दाता पडगाहन करते।
नवद्या-भक्ति, सप्त-गुण सहित, शुद्ध-प्रासुक आहार देते।

आयु-प्रकृति-बालक-वृद्ध-रोगी पात्र योग्य आहार देते।
अनुपान व क्रम के अनुसार स्वच्छ प्रकाश युक्त स्थान में देते।। (5)

क्षुधारोग हरण हेतु व ध्यान-अध्ययन वैयावृत्ति हेतु।
आहार करते साधु-साध्वी, रत्नत्रय की साधना हेतु।

ज्ञान वैराग्य-समता-शांति व मौनपूर्वक करते आहार।

गोचरी वृत्ति या भ्रामरी वृत्ति से, आहार करते हो निर्विकार।। (6)

आहार अनंतर मुख शुद्धि (आदि) करके, भक्ति करके लेते पिच्छी।
कमण्डलु में प्रसुक जल भरकर, वापिस जाते स्व-वसति।

आहार पूर्व भक्ति करके प्रत्याख्यान विसर्जन करते साधु।
आहार से आकर भक्ति करके, आहार प्रत्याख्यान करते साधु।। (7)

आहार हेतु जाते समय में ईर्यापथ शुद्धि से करते गमन।
धूप-छाया व भूमिरंग परिवर्तन में, करते शरीर (पिच्छी से) परिमार्जन।

एक हाथ में पिच्छी लेते एक हाथ में धारण करते कमण्डल।
दोनों भुजाओं को लटका करके, आहार हेतु जाते श्रमण।। (8)

आहार अनंतर गुरु के पास भक्तिपूर्वक करते गोचरी निवेदन।
गमन-भोजन व आगमन का, करते निवेदन श्रमण-गण।

संक्षेप से यहाँ वर्णन किया 'मूलाचार-भगवती आराधना' का ज्ञान।
विस्तार हेतु दोनों ग्रंथ पढ़ो, 'कनकनन्दी' को यह प्रमाण।। (9)

सीपुर, दिनांक 11.02.2015, रात्रि 2.00

संदर्भ-

छट्ठट्ठमभत्तेहिं पारेंति य परघरम्मि भिक्खाए।
जमणट्ठं भुंजंति य ण वि य पयाम रसट्ठाए।। (812)
णवकोडीपरिसुद्धं दसदोसविवज्जियं मलविसुद्धं।
भुंजंति पाणिपत्ते परेण दत्तं परघरम्मि।। (813)

गाथार्थ-बेला, तेला आदि करके परगृह में भिक्षावृत्ति से पारणा करते हैं, संयम के लिए भोजन करते हैं; किन्तु प्रचुर रस के लिए नहीं।

आचारवृत्ति-बेला, तेला, चौला, पाँच उपवास आदि तथा एक उपवास आदि करके परगृह में कृत-कारित-अनुमोदना से रहित तथा लाभ-अलाभ में समान बुद्धि रखते हुए भिक्षा विधि से पारणा करते हैं। चारित्र के साधन के लिए, क्षुधा का उपशमन करने के लिए तथा मोक्ष की यात्रा के साधन मात्र हेतु आहार लेते हैं। किन्तु प्रकाम इच्छानुसार या प्रचुर रस के लिए नहीं लेते हैं। अथवा अच्छे रस के लिए हेतु त्याग

नहीं करते हैं। जितने मात्र आहार से स्वाध्याय आदि में प्रवृत्ति होती है उतना मात्र ही लेते हैं; किन्तु अजीर्ण के लिए बहुत आहार नहीं लेते हैं।

किस शुद्धि से आहार लेते हैं?

गाथार्थ-मन, वचन, काय से गुणित कृत, कारित, अनुमोदना रूप नवकोटि से शुद्ध, दश दोष से रहित, चौदह मल दोष से विशुद्ध परगृह में पर के द्वारा दिये गये आहार को पाणिपात्र में ग्रहण करते हैं।

आचारवृत्ति-मन-वचन-काय को कृत-कारित-अनुमोदना से गुणित करने पर नव हुए ऐसे नव प्रकार से रहित, शंकित, मुक्षित आदि अशन के दश दोषों से रहित और नख, रोम आदि चौदह मल दोषों से रहित ऐसे आहार को करपात्र से परगृह में पर के द्वारा दिये जाने पर ग्रहण करते हैं। इससे क्या अभिप्राय हुआ? मुनि को स्वयं लेकर नहीं खाना चाहिए और पात्र भी ग्रहण नहीं करना चाहिए तथा ममत्व के आश्रयभूत स्वगृह में भी भोजन नहीं करना चाहिए।

उद्देसिय कीदयडं अण्णादं संकिदं अभिहडं च।
सुत्तप्पडिकूडाणि य पडिसिद्धं तं विवज्जंति।। (814)
अण्णादमणुण्णादं भिक्खं णिच्चुच्चमज्झिमकुलेसु।
घरपंतिहिं हिंडंति य मोणेण मुणी समादिंति।। (815)

भावार्थ-मुनि स्वगृह छोड़कर ही दीक्षा लेते हैं; पुनः उनके परिणाम में 'यह मेरा गृह है' ऐसा ममत्व नहीं रहता है। यदि रहे तो वहाँ आहार न लेवें। दीक्षा के बाद स्वगृह में भी आहार की पद्धति रही है। उदाहरण के लिए रानी श्रीमती सहित राजा वज्रजंघ ने अपने युगल पुत्र को महामुनि के वेष में आहार दिया था तथा देवकी ने अपने तीन युगलों को-युगल पुत्रों को तीन बार आहार दिया आदि। वर्तमान में भी साधु अपने घर में आहार लेते देखे जाते हैं। ऐसे साधुओं को स्वगृह का कोई ममत्व नहीं होता है। दाता का भी ऐसा भाव नहीं रहता कि ये मेरे हैं। अतः उनके द्वारा आहारदान का विरोध नहीं है। कदाचित् गृहस्थ को ऐसा ममत्व आ भी जाये, पर साधु को ऐसा कोई ममत्व नहीं होता।

गाथार्थ-उद्देश्य अर्थात् दोष सहित, क्रीत, अज्ञात, शंकित, अभिघट दोष सहित, आगम के विरुद्ध आहार निषिद्ध है, ऐसा आहार मुनि छोड़ देते हैं।

आचारवृत्ति-अपने उद्देश्य से बना हुआ आहार औद्देशिक है, उसी समय

अपने हेतु खरीदकर लाया गया आहार क्रीत है, स्वयं को मालूम नहीं सो अज्ञात है, यह प्रासुक है या अप्रासुक ऐसे संदेह को प्राप्त हुआ आहार शंकित है, सात पंक्ति से अतिरिक्त आया हुआ अभिघट इत्यादि दोष युक्त, आगम के प्रतिकूल जो अशुद्ध आहार है उन सबका मुनि वर्जन कर देते हैं।

आहार हेतु भ्रमण का विधान-

गाथार्थ-दरिद्र, धनी या मध्यम कुलों में गृह पंक्ति से मौनपूर्वक भ्रमण करते हैं और वे मुनि अज्ञात था अनुज्ञात भिक्षा को ग्रहण करते हैं।

आचारवृत्ति-साधु भिक्षा के लिए मेरे यहाँ आयेंगे ऐसा जिन गृहस्थों को मालूम नहीं है उनका आहार 'अज्ञात' है, तथा 'आज मुझे उसके यहाँ आहार हेतु जाना है' इस प्रकार से मुनि ने स्वयं उसे अनुमति नहीं दी है और न ऐसा उनका अभिप्राय है वह आहार 'अनुज्ञात' अथवा 'अननुज्ञात' है। अर्थात् 'यति भिक्षा के लिए आयेंगे और मुझे अवग्रह-वृतपरिसंख्यान आदि के नियम से वहाँ जाना चाहिए' इस प्रकार से अनुमति नहीं दी है। ऐसा आहार मुनि मौनपूर्वक ग्रहण करते हैं तथा आहार काल में दरिद्र या सम्पन्न में समान मान से, गृहपंक्ति से भ्रमण करते हैं और मौनपूर्वक निर्दोष आहार ग्रहण करते हैं।

सीदलमसीदलं वा सुक्कं लुक्खं सिणिद्ध सुद्धं वा।
लोणिदमलोणिदं वा भुंजंति मुणी अणासादं।। (816)

रसना इन्द्रिय जय-

गाथार्थ-ठण्डा हो या गरम, सूखा हो या रूखा, चिकनाई सहित हो या रहित, लवण सहित हो या रहित-ऐसे स्वादरहित आहार को मुनि ग्रहण करते हैं।

आचारवृत्ति-शीतल-पूर्वाण्ह बेला में बनाया गया होने से जो उष्णपने से रहित हो चुका है ऐसा भोज्य पदार्थ, अशीतल उसी क्षण ही उतारा हुआ होने से जो गरम-गरम है ऐसे भात आदि पदार्थ, रूक्ष-घी, तेल, आदि से रहित अथवा कोदों व मकुष्ट अन्न विशेष आदि पदार्थ, शुष्क-दूध, दही व्यंजन अर्थात् साग, चटनी आदि से रहित, स्निग्ध-घृत आदि सहित, शालिधान का भात आदि, शुद्ध-चूल्हे से उतारा गया, मात्र जिसमें किंचित् भी कुछ डाला नहीं गया है, नमक सहित भोजन या नमक रहित पदार्थ, ऐसे भोजन को मुनि जिह्वा का स्वाद न लेते हुए ग्रहण करते हैं। अर्थात् ठण्डे-गरम आदि प्रकार के आहार में राग-द्वेष न करते हुए समता भाव से स्वाद की तरफ

लक्ष्य न देते हुए मुनि आहार लेते हैं।

'यमनार्थ' पद का अर्थ-

अक्खोमक्खणमेत्तं भुंजंति मुणी पाणधारणणिमित्तं।
पाणं धम्मणिमित्तं धम्मं पि चरंति मोक्खट्ठं।। (817)

अक्षम्रक्षणमात्रं यथा शकटं धुरालेपनमंतरेण न वहत्येवं शरीरमप्यशनमात्रेण विना न संवहतीति मुनयः प्राणधारणनिमित्तं किंचिन्मात्रं भुंजते, प्राणधारणं च धर्मनिमित्तं कुर्वंति, धर्ममपि चरंति मोक्षार्थं मुक्तिनिमित्तमिति।

लद्धेण होंति तुट्ठा ण वि य अलद्धेण दुम्मणा होंति।
दुक्खे सुहे य मुणिणो मज्झत्थमणाउला होंति।। (818)

गाथार्थ-मुनि धुरे में ओंगन देने मात्र के सदृश, प्राणों के धारण हेतु आहार करते हैं-प्राणों को धर्म के लिए और धर्म को भी मोक्ष के लिए आचरते हैं।

आचारवृत्ति-जैसे गाड़ी की धुरी में लेपन-ओंगन दिये बिना गाड़ी नहीं चलती है उसी प्रकार से यह शरीर भी अशनमात्र के बिना नहीं चल सकता है और मोक्षमार्ग में रत्नत्रय भार को नहीं ढो सकता है। इसलिए मुनि प्राणों को धारण करने के लिए किंचित् मात्र आहार ग्रहण करते हैं और धर्म के लिए आचरण करते हैं। इस प्रकार से मुनियों की आहार क्रिया अक्षम्रक्षणवृत्ति कहलाती है।

लाभ-अलाभ के विषय में समभाव-

गाथार्थ-आहार आदि मिल जाने पर संतुष्ट नहीं होते हैं और नहीं मिलने पर भी उन्मनस्क नहीं होते हैं, वे दुःख और सुख में आकुलता रहित मध्यस्थ रहते हैं।

आचारवृत्ति-आहार आदि की प्राप्ति हो जाने पर वे संतुष्ट नहीं होते हैं। अर्थात् जिह्वेन्द्रिय के वश में होकर 'आज मुझे आहार मिल गया' इस प्रकार से अपने मन में हर्षित नहीं होते हैं और आहार के नहीं मिलने पर खेद-खिन्न नहीं होते हैं, अर्थात् 'मुझे आज आहार आदि नहीं मिला' ऐसा दीनमन नहीं करते हैं। दुःख के आ जाने पर अथवा सुख के उत्पन्न होने पर वे आकुलचित्त न होते हुए समभाव धारण करते हैं।

चर्या में मुनियों के स्थैर्य का निरूपण-

ण वि ते अभित्थुणंति य पिंडत्थं ण वि य किंचि जायंति।
मोणव्वदेण मुणिणो चरंति भिक्खं अभासंता।। (819)

देहि त्ति दीणकलुसं भासं णेच्छंति एरिसं वोत्तुं।
अवि णीदि अलाभेणं ण य मोणं भंजदे धीरा।। (820)

गाथार्थ-भोजन के लिए किसी की स्तुति नहीं करते हैं और न कुछ भी याचना करते हैं। वे मुनि बिना बोले मौनव्रतपूर्वक भिक्षा ग्रहण करते हैं।

आचारवृत्ति-ग्रास के निमित्त वे मुनि श्लोक आदि के द्वारा किसी की स्तुति नहीं करते है और आहार के लिए वे किंचित् भी द्रव्य आदि की याचना भी नहीं करते। वे संतोष से मौनपूर्वक आहार के लिए पर्यटन करते हैं। किन्तु मौन में खखार, हुंकार आदि संकेत को भी नहीं करते हैं। इस कथन से यहाँ मौनपूर्वक और 'नहीं बोलना' इन दो प्रकार के कथनों में पुनरुक्त दोष नहीं है। अर्थात् मौनव्रत से किसी से वार्तालाप नहीं करना-कुछ नहीं बोलना-ऐसा अभिप्राय है और 'अभाषयन्तः से खखार हूँ, हाँ, ताली बजाना आदि अव्यक्त शब्दों का संकेत वर्जित है। ऐसा समझना।'

गाथार्थ-'दे दो' इस प्रकार से दीनता से कलुषित ऐसा वचन नहीं बोलना चाहते हैं, आहार के न मिलने पर वापस आ जाते हैं; किन्तु वे धीर मौन का भंग नहीं करते हैं।

आचारवृति-'तुम मुझे ग्रासमात्र भोजन दे दो' इस प्रकार से दीन और करुण वचन नहीं बोलते हैं। 'मैं बहुत ही भूखा हूँ, भोजन के बिना मुझे पाँच या सात दिन हो गये हैं', ऐसे वचन दीन कहलाते हैं तथा 'यदि आप मुझे भोजन नहीं देंगे तो मैं मर जाऊँगा, मेरे शरीर में बहुत कमजोरी आ गई है, मैं रोगादि से पीड़ित हूँ, मेरे पास कुछ भी नहीं है', इत्यादि रूप याचना के वचन करुणा से सहित वचन हैं। मुनिराज ऐसे दीन व करुणार्द्र वचन नहीं बोलते हैं। भिक्षा का लाभ नहीं होने पर वे वापस आ जाते हैं अथवा भिक्षा मिल जाने पर आहार ग्रहण कर वापस आ जाते हैं, पुनः भिक्षा के लिए घरों में प्रवेश नहीं करते हैं। न मौन भंग करते हैं और न वे भोजन के लिए कुछ भी प्रार्थना ही करते हैं। ऐसे साधु धीर-सत्त्व गुण सम्पन्न होते हैं।

पयणं व पायणं वा ण करेंति अ णेव ते करावेंति।
पयणारंभणियत्ता संतुट्ठा भिक्खमेत्तेण।। (821)
असणं जदि वा पाणं खज्जं भोजं लिज्ज पेज्जं वा।
पडिलेहिऊण सुद्धं भुंजंति पाणिपत्तेसु।। (822)

यदि याचना नहीं करते हैं तो क्या वे स्वयं कुछ करते हैं? ऐसी आशंका होने पर कहते हैं-

गाथार्थ-वे भोजन पकाना या पकवाना भी नहीं करते हैं और न कराते हैं, वे पकाने के आरंभ से निवृत्त हो चुके हैं, भिक्षा मात्र से ही संतुष्ट रहते हैं।

आचारवृत्ति-पचन-स्वयं भात आदि पकाना, पाचन उपदेश देकर अन्य से पकवाना। ये कार्य मुनि न करते हैं और न कराते हैं। भोजन बनाने आदि के आरंभ से वे दूर ही रहते हैं। काय को दिखाने मात्र से वे भिक्षा के लिए पर्यटन करते हैं। अर्थात् आहार के लिए भ्रमण करने में वे केवल अपने शरीर मात्र को ही दिखाते हैं किन्तु कुछ संकेत या याचना आदि नहीं करते हैं। वे भिक्षावृत्ति से ही संतुष्ट रहते हैं।

प्राप्त हुए भोजन को भी वे अच्छी तरह देखकर ग्रहण करते हैं-

गाथार्थ-अशन अथवा पान, खाद्य या भोज्य, लेह्य या पेय इन पदार्थों को देखकर शोधकर करपात्र में शुद्ध आहार को ग्रहण करते हैं।

आचारवृत्ति-अशन-भात आदि, पान-दूध जल आदि, खाद्य-लड्डू आदि, भोज्य-खाने योग्य माण्डे आदि, लेह्य-चाटने योग्य पदार्थ, पेय-जिसमें भोजन वस्तु स्वल्प है और पतली वस्तु अधिक है ऐसे ठण्डाई आदि पदार्थ। ऐसी किसी भी चीज को अपने अंजलिपात्र में भलीभाँति देखकर शुद्ध आहार ग्रहण करते हैं। वे मुनि बर्तन आदि में नहीं खाते हैं।

अप्रासुक का परिहार-

जं होज्ज अविव्वण्णं पासुग पसत्थं तु एसणासुद्धं।
भुंजंति पाणिपत्ते लद्धूण य गोयरग्गम्मि।। (823)
जं होज्ज बेहिअं तेहिअं च वेवण्णजंतुसंसिट्ठं।
अप्पासुगं तु णच्चा तं भिक्खं मुणी विवज्जंति।। (824)
जं पुप्फिय किण्णइदं दट्ठूणं पूप-पप्पडादीणि।
वज्जंति वज्जणिज्जं भिक्खू अप्पासुयं जं तु।। (825)

गाथार्थ-जो चलित रस रहित, प्रासुक, प्रशस्त और एषणा समिति से शुद्ध है उसे आहार के समय प्राप्त कर पाणिपात्र से आहार करते हैं।

आचारवृत्ति-जो विकृत-खराब नहीं हुआ है वह अविवर्ण है। संमूर्च्छन आदि रहित, निर्जीव, जंतु रहित भोजन प्रासुक है, मनोहर भोजन प्रशस्त है। अर्थात्

जो ग्लानि पैदा करने वाला नहीं है। एषणा समिति के छियालीस दोष और बत्तीस अंतरायों से रहित है। ऐसा भोजन आहार की बेला में प्राप्त करके वे मुनि अपने पाणिपात्र से ग्रहण करते हैं।

गाथार्थ-जो दो दिन का या तीन दिन का है, चलित स्वाद है, जन्तु से युक्त है, अप्रासुक है उसको जानकर मुनि उस आहार को छोड़ देते हैं।

आचारवृत्ति-जो भोजन दो दिन का हो गया है या तीन दिन का हो गया है, जो स्वभाव से चलित हो जाने से विवर्ण रूप हो गया है, जो आगंतुक सम्मूर्च्छन जीवों से सहित है, अप्रासुक है ऐसा जानकर वे मुनि उस भिक्षा को छोड़ देते हैं।

गाथार्थ-फफूंदी सहित, बिगड़े हुए पुआ, पापड़ आदि देखकर तथा जो अप्रासुक है, छोड़ने योग्य है, मुनि उन सबको छोड़ देते हैं।

आचारवृत्ति-जो खाद्य पदार्थ पुष्पित अर्थात् नीले, काले, सफेद या पीले आदि रंग के हो गये हैं, बिगड़ गये हैं, ऐसे पुआ, पापड़ पदार्थ हैं और भी जो अप्रासुक पदार्थ हैं, वे सब त्याग करने योग्य है। मुनि अदीनमन होते हुए इन सबको छोड़ देते हैं।

जं सुद्धमसंसत्तं खज्जं भोज्जं च लेज्ज पेज्जं वा।
गिह्णंति मुणी भिक्खं सुत्तेण अणिंदयं जं तु।। (826)
फलकंदमूलबीयं अणग्गिपक्कं तु आमयं किंचि।
णच्चा अणेसणीयं ण वि य पडिच्छंति ते धीरा।। (827)

गाथार्थ-जो शुद्ध है, जीवों से संबद्ध नहीं है और जो आगम से वर्जित नहीं है ऐसे खाद्य, भोज्य, लेह्य और पेय को मुनि आहार में लेते हैं।

आचारवृत्ति-जो विवर्ण चलित आदि रूप नहीं हुआ है, जो जंतुओं से सम्मिश्र नहीं है और जो भोजन आगम से निंदित नहीं है ऐसे खाद्य, भोज्य, लेह्य और पेय रूप चार प्रकार के आहार को मुनि ग्रहण करते हैं।

सचित्त वस्तु का परिहार-

गाथार्थ-अग्नि से नहीं पके हुए फल, कंद, मूल और बीज तथा और भी कच्चे पदार्थ जो खाने योग्य नहीं है ऐसा जानकर वे धीर मुनि उनको स्वीकार नहीं करते हैं।

आचारवृत्ति-फल, कंद, मूल और बीज जो अग्नि से नहीं पकाये गये है तथा

और भी जो कुछ कच्चे पदार्थ है वे खाने योग्य नहीं है, उन्हें जानकर वे मुनि उनको ग्रहण नहीं करते हैं।

भावार्थ-सचित्त वस्तु को प्रासुक करने के दश प्रकार-

सुक्कं पक्कं तत्तं अंविल लवणेण मिस्सियं दव्वं।

जं जंतेण य छिण्णं तं सव्वं फासुयं भणियं।।

अर्थ-जो द्रव्य सूखा हो, पका हो, तप्त हो, आम्लरस तथा लवण मिश्रित हो, कोल्हू, चरखी, चक्की, छूरी, चाकू आदि यंत्रों से भिन्न-भिन्न किया हुआ तथा संशोधित हो, सो अब प्रासुक है।

जं हवदि अणिव्वीयं णिवट्टिमं फासुयं कयं चेव।

णाऊण एसणीयं तं भिक्खं मुणी पडिच्छंति।। (828)

यद्भवत्यबीजं निर्बीजं, निर्वर्त्तिमं निर्गंतमध्यसारं, प्रासुकं कृतं चैव ज्ञात्वाऽशनीयं तद्भैक्ष्यं मुनयः प्रतीच्छंतीति।

भोत्तू ण गोयरग्गे तहेव मुणिणो पुणो वि पडिकंता।

परिमिदएयाहारा खमणेण पुणो वि पारेंति।। (829)

गोचराग्रे भुक्त्वा भिक्षाचर्यामार्गे भुक्त्वा तथापि मुनयः पुनरपि प्रतिक्रामंति दोषनिर्हरणाय क्रियाकलापं कुर्वन्ते, यद्यपि कृतकारितानुमतिरहिता भिक्षा लब्ध तथापि तदर्थं वा शुद्धिं कुर्वन्त्यतीव यतयः, परिमितैकाहाराः परिमित एक एकवेलायामाहारो येषां ते परिमितैकाहाराः क्षमणेनोपवासेनैकस्थानेन वा पुनरपि पारयंति भुंजते इति।

ते लद्धणाणचक्खू णाणुज्जोएण दिट्ठपरमट्ठा।

णिस्संकिदणिव्विदिगिंछादबलपरक्कमा साहू।। (830)

जो खाने योग्य हैं-

गाथार्थ-जो बीज रहित है, पकाया हुआ है या प्रासुक किया हुआ है वह खाने योग्य है ऐसा जानकर उसको आहार में मुनि ग्रहण करते हैं।

आचारवृत्ति-जिसमें से बीज को निकाल दिया है, जिनको पका दिया गया है या जिनके मध्य का सार अंश निकल गया है, जो प्रासुक है वे पदार्थ भक्ष्य है, उन्हें ही मुनि आहार में ग्रहण करते हैं।

आहार करके क्या करते हैं?

गाथार्थ-उसी प्रकार से गोचरी बेला में आहार करके वे मुनि पुनः प्रतिक्रमण

करके परिमित एक आहारी उपवास करके पुनः पारणा करते हैं।

आचारवृत्ति-गोचरी वृत्ति से चर्या करके वे मुनि आहार ग्रहण करते हैं, पुनः आकर प्रतिक्रमण करते हैं, अर्थात् दोष-परिहार के लिए क्रिया-कलाप करते हैं। यद्यपि कृत कारित अनुमोदना से रहित आहार मिला है फिर भी उसके लिए वे यति अतीव शुद्धि करते हैं। वे दिन में एक बार ही आहार लेने से परिमित एक आहारी हैं। पुनः उपवास करके अथवा एक स्थान से पारणा करते हैं। यह भिक्षा-शुद्धि हुई।

ज्ञान-शुद्धि-

गाथार्थ-वे ज्ञानचक्षु को प्राप्त हुए साधु ज्ञान-प्रकाश के द्वारा परमार्थ को देखने वाले निःशंकित निर्विचिकित्सा और आत्मबल पराक्रम से सहित होते हैं।

उग्गम उप्पादणएसणेहिं पिंडं च उवधि सज्जं च।
सोधंतस्य मुणिणो परिसुज्झइ एसणासमिदी।। (318)

गाथार्थ-उद्गम, उत्पादन और एषणा दोषों के द्वारा आहार, उपकरण और वसति आदि का शोधन करते हुए मुनि के एषणा समिति शुद्ध होती है।

आचारवृत्ति-जिन दोषों से आहार उद्गच्छति अर्थात् उत्पन्न होता है वे उद्गम दोष हैं। जिन दोषों से आहार उत्पाद्यते अर्थात् उत्पन्न कराया जाता है वे उत्पादन दोष हैं और जिन दोषों से सहित आहार अथवा वसति आदि का अश्यते भुज्यते अर्थात्-उपभोग किया जाता है वे अशन दोष हैं।

पिण्ड आहार को कहते हैं। उपधि से पुस्तक, पिच्छका आदि उपकरण लिये जाते हैं और शय्या शब्द से वसतिका आदि ग्राह्य हैं। इन आहार, उपकरण और वसतिका आदि का शोधन करते हुए अर्थात् अच्छी तरह से सावद्य का त्याग करके इन्हें स्वीकार करते हुए मुनि के विशुद्ध अशन समिति होती है अथवा अशन-भोजन को सम्यग्विधान से सहित दोषों का परिहार करके ग्रहण करना अशन समिति है।

तात्पर्य यह हुआ कि उद्गम, उत्पादन और अशन दोषों से रहित आहार, उपकरण और वसतिका की शुद्धि करने वाले मुनि शुद्ध अशनसमिति का पालन करते हैं। ये उद्गम आदि दोष विस्तार सहित पिण्ड शुद्धि अधिकार में कहे जायेंगे, इसलिए पुनरुक्त दोष के भय से यहाँ पर इनका विस्तार नहीं करते हैं। स्पष्टीकरण यह है कि-उत् उपसर्गपूर्वक गम् धातु से उद्गम शब्द बना है जिसका अर्थ है उत्पन्न होना। ये उद्गम दोष श्रावक के आश्रित हैं। उत् उपसर्गपूर्वक पद धातु से णिजन्त में उत्पादन

शब्द बना है जिसका अर्थ है उत्पन्न कराया जाना। ये उत्पादन दोष मुनि के आश्रित माने गये हैं। अश् धातु का अर्थ है भोजन करना। इसी से अशन बना है। ये अशन संबंधी दोष मुनि के भोजन के संबंध में हैं। ये ही दोष पुस्तक, पिच्छी, वसतिका आदि में भी निषिद्ध किये गये हैं। वहाँ पर अशन के स्थान में भुज् धातु से भोग या उप उपसर्गपूर्वक उपभोग बनाकर उसका अर्थ ऐसा हो जाता है कि पिच्छी, पुस्तक आदि वस्तु के उपभोग के ये दोष हैं।

शंका–मुनि इन दोषों का परिहार कैसे करते हैं?

समाधान–गाथा में 'चकार' शब्द से जो अर्थ सूचित किया है उसे ही हम कहते हैं।

सूर्योदय होने पर देववंदना करके दो घड़ी (48 मिनट) के बीत जाने पर श्रुतभक्ति, गुरुभक्तिपूर्वक स्वाध्याय ग्रहण करके सिद्धांत आदि ग्रंथों की वाचना, पृच्छना, अनुप्रेक्षा और परिवर्तन आदि करके मध्याह्न काल से दो घड़ी पहले श्रुतभक्तिपूर्वक स्वाध्याय समाप्त कर देवे। पुनः वसतिका से दूर जाकर मल-मूत्र आदि विसर्जित करके अपने शरीर के पूर्वापर अर्थात् आगे-पीछे के भाग का अवलोकन-पिच्छिका से परिमार्जन करके हस्तपाद आदि का प्रक्षालन करके मध्याह्न काल की देववंदना-सामायिक करे अर्थात् मध्याह्न के पहले दो घड़ी जो शेष रही थी उसमें सामायिक करे। पुनः जब बालक भोजन करके निकलते हैं, काक आदि को बलि (दाने आदि) भोजन डाला जाता है और भिक्षा के लिए अन्य संप्रदाय वाले साधु भी विचरण कर रहे होते हैं तथा गृहस्थों के घर में धुआँ और मूसल आदि शब्द शांत हो चुका होता है अर्थात् भोजन बनाने का कार्य पूर्ण हो चुका होता है, इन सब कारणों से मुनि आहार की बेला जानकर गोचरी के लिए निकले।

उस समय चलते हुए न ही अधिक जल्दी-जल्दी और न अधिक धीरे-धीरे तथा न ही विलंब करते हुए चले। धनी और निर्धन आदि के घरों का विचार-भेदभाव न करे। न मार्ग में किसी से बात करे और न ठहरे अर्थात् आहार के लिए निकलकर आहार-ग्रहण कर चुकने तक मौन रहे। मार्ग में हास्य आदि भी न करे, हँसते हुए या अन्य कोई चेष्टा करते हुए न चले। नीच कुलों के घर में प्रवेश न करे और सूतक, पातक आदि दोषों से दूषित शुद्ध कुल वाले घरों में भी नहीं जावे। द्वारपाल आदि के द्वारा रोके जाने पर वहाँ प्रवेश न करे। जितने प्रदेश स्थान तक अन्य लोग भिक्षा के

लिए प्रवेश करते हैं, मुनि भी उतने प्रदेश तक प्रवेश करे। जिन स्थानों में आहारार्थ जाने का विरोध है उन स्थानों को छोड़ देवे। दुष्टजन, गधे, ऊँट, भैंस, गाय, सर्प आदि जीवों को दूर से ही छोड़ देवे अर्थात् इनसे दूर से बचकर निकले। मत्त अर्थात् पागल या उन्मत्त अर्थात् मदिरा आदि से उन्मत्त या गर्विष्ठ जनों को भी बिलकुल छोड़ देवे। स्नान, विलेपन, मण्डन अर्थात् श्रृंगार या रतिक्रीड़ा में आसक्त हुई महिलाओं का अवलोकन न करें।

श्रावक यदि विनयपूर्वक ठहराये-पड़गाहन करे तो वहाँ ठहरे। सम्यग्विधि नवधाभक्ति से दिये गये प्रासुक आहार को सिद्धभक्ति करके (सिद्धभक्तिपूर्वक पूर्व दिन गृहीत प्रत्याख्यान का निष्ठापन करके) ग्रहण करे। नीचे भोज्य वस्तु आदि न गिराते हुए या पेय वस्तु न झराते-गिराते हुए छिद्र रहित अपने पाणिपात्र को नाभि प्रदेश के पास करके शुर-शुर शब्द आदि को न करते हुए आहार करे। स्त्रियों के स्तन, जघन, घुटनों, नाभि, कमर, नेत्र, ललाट, मुख, दाँत, ओठ, काँख, जंघा, पैर आदि अवयवों का या उनके लीलापूर्वक गमन, विलास, गीत, नृत्य, हास्य, स्नेह दृष्टि, कटाक्षपूर्वक देखना आदि चेष्टाओं का अवलोकन न करे।

इस प्रकार पूर्ण उदर आहार करके अथवा अंतराय आ जाने पर अपूर्ण उदर आहार करके, मुख-हाथ-पैरों का प्रक्षालन करके, शुद्ध प्रासुक जल से भरे हुए कमण्डलु को लेकर आहार गृह से निकले। धर्म कार्य के बिना अन्य किसी के घर में प्रवेश न करे। इस तरह से जिनालय आदि स्थान में आकर प्रत्याख्यान ग्रहण करके गोचर प्रतिक्रमण करें।

विशेष–मध्याह्न की सामायिक करके 12 बजे के बाद मुनि आहारार्थ निकले। यहाँ ऐसा आदेश है, किन्तु वर्तमान में साधु 9 बजे से लेकर 11 बजे तक आहारार्थ निकलते है, पश्चात् आहार के बाद मध्याह्न की सामायिक करते हैं ऐसी परंपरा चल रही है। वर्तमान में श्रावकों के भोजन की दो बेलाएँ हैं-प्रातः और सायं (सूर्यास्त से पहले तक)। प्रातः की भोजन बेला प्रायः 9 बजे से 11 बजे है तथा सायं की 4 बजे से सूर्यास्त के पूर्व तक। यही कारण है कि साधु प्रातः की भोजन बेला में आहारार्थ निकलते हैं। कदाचित् विशेष प्रसंगवश यदि प्रातः नहीं निकले हैं तो मध्याह्न सामायिक के उपरान्त सूर्यास्त से तीन घटिका पहले तक भी निकलते है क्योंकि सूर्योदय से तीन घड़ी बाद और सूर्यास्त से तीन घड़ी पहले तक साधु दिन में एक बार ही आहार ग्रहण

करे ऐसा इसी मूलाचार की गाथा 35 में कहा है। अतः आहार के लिए भी यदि प्रातः नहीं निकले है तो मध्याह्न सामायिक के बाद निकलते है ऐसा देखा जाता है।

छादालदोससुद्धं कारणजुत्तं विसुद्धणवकोडी।
सीदादीसमभुत्ती परिसुद्धा एसणासमिदि।। (13)
णाणुवहि संजमुवहिं सउचुवहिं अण्णमप्पमुवहिं वा।
पयदं गहणिक्खेवो समिदी आदाणणिक्खेवा।। (14)

गाथार्थ-छियालीस दोषों से रहित शुद्ध, कारण से सहित, नव-कोटि से विशुद्ध और शीत-उष्ण आदि में समान भाव से भोजन करना यह सम्पूर्णतया निर्दोष एषणा समिति है।

आचारवृत्ति-उद्गम, उत्पादन, एषणा आदि छियालीस दोषों से शुद्ध आहार निर्दोष कहलाता है। असाता के उदय से उत्पन्न हुई भूख के प्रतिकार हेतु और वैयावृत्य आदि के निमित्त किया गया आहार कारण युक्त होता है। मन, वचन, काय को कृत, कारित-अनुमोदना से गुणित करने पर नव होते हैं। इन नव-कोटि विकल्पों से रहित आहार नव-कोटि विशुद्ध है। ठण्डा, गर्म, लवण से सरस या विरस अथवा रूक्ष आदि भोजन में समान भाव अर्थात् शीत-उष्ण आदि भोज्य वस्तुओं में राग-द्वेष रहित होना, इस प्रकार सब तरफ से निर्मल निर्दोष आहार ग्रहण करना एषणा समिति होती है। तात्पर्य यह है कि छियालीस दोष रहित जो आहार ग्रहण है जो कि कारण सहित है और मन-वचन-काय पूर्वक कृत कारित अनुमोदना से रहित तथा शीतादि में समता भावरूप है, वह साधु के निर्मल एषणा समिति होती है।

गोयरपमाण दायगभायण णाणाविहाण जं गहणं।
तह एसणस्स गहणं विविहस्स य वुत्तिपरिसंखा।। (355)

गोचरस्य प्रमाणं गोचर प्रमाणं गृह प्रमाणं, एतेषु गृहेषु प्रविशामि नान्येषु बहुष्विति। दायका दातारो भाजनानि परिवेष्यपात्राणि तेषां यन्नानाविधानं नानाकरणं तस्य ग्रहणं स्वीकरणं-दातृविशेषग्रहणं पात्रविशेषग्रहणं च। यदि वृद्धो मां विधरेत् तदानीं तिष्ठामि नान्यथा। अथवा वालो युवा स्त्री उपानत्करहितो वर्त्मनि स्थितोऽयथा वा विधरेत् तदानीं तिष्ठामीति। कांस्यभाजनेन रूप्यभाजनेन सुवर्णभाजनेन मृन्मयभाजनेन वा ददाति तदा गृहीष्यामीति यदेवमाद्यं। तथाशनस्य विविधस्य नानाप्रकारस्य यद्ग्रहणमवग्रहोपादानं, अद्य मकुष्ठं भोक्ष्ये नान्यत्। अथवाद्य मंडकान् सक्तून् ओदनं वा ग्रहीष्यामीति यदेवमाद्यं

ग्रहणं तत्सर्वं वृत्तिपरिसंख्यानमिति।

वृत्तिपरिसंख्यान तप का स्वरूप-

गाथार्थ-गृहों का प्रमाण, दाता का, वर्तनों का नियम ऐसे अनेक प्रकार का जो नियम ग्रहण करना है तथा नाना प्रकार के भोजन का नियम ग्रहण करना वृत्तिपरिसंख्यान व्रत है।

आचारवृत्ति-गृहों के प्रमाण को गोचर कहते हैं। जैसे 'आज मैं इन गृहों में आहार हेतु जाऊँगा, और अधिक गृहों में नहीं जाऊँगा' ऐसा नियम करना। दायक अर्थात् दातार और भाजन अर्थात् भोजन रखने के या भोजन परोसने के बर्तन-इनकी जो नाना प्रकार से विधि लेना है वह दायक-भाजन विधि अर्थात् दाता विशेष और पात्र विशेष की विधि ग्रहण करना है। जैसे, 'यदि वृद्ध मनुष्य मुझे पड़गाहेगा तो मैं ठहरूँगा अन्यथा नहीं, अथवा बालक, युवक, महिला, या जूते अथवा खड़ाऊँ आदि से रहित कोई पुरुष मार्ग में खड़ा हुआ मुझे पड़गाहे तो मैं ठहरूँगा अथवा ये अन्य अमुक विधि से मुझे पड़गाहे तो मैं ठहरूँगा' इत्यादि नियम लेकर चर्या के लिए निकलना। ऐसे ही बर्तन संबंधी नियम लेना-जैसे, 'मुझे आज यदि कोई काँसे के बर्तन से, सोने के बर्तन से या मिट्टी के बर्तन से आहार देगा तो मैं ले लूँगा, या इसी प्रकार से अन्य और भी नियम लेना तथा नाना प्रकार के भोजन संबंधी जो नियम लेना है वह सब वृत्तिपरिसंख्यान है। जैसे, 'आज मैं मोठ ही खाऊँगा अन्य कुछ नहीं', 'अथवा आज मंडे, सत्तू या भात ही ग्रहण करूँगा।' इत्यादि रूप से जो भी नियम लिये जाते हैं वे सब वृत्तिपरिसंख्यान तप कहलाते हैं।

भावार्थ-इन्द्रिय और मन के निग्रह के लिए नाना प्रकार के तपश्चरणों का अनुष्ठान किया जाता है और इस वृत्तिपरिसंख्यान के नियम से भी इच्छाओं का निरोध होकर भूख-प्यास को सहन करने का अभ्यास होता है।

अंजलिपुडेण ठिच्चा कुड्डाइ विवज्जणेण समपायं।
पडिसुद्धे भूमितिए असणं ठिदिभोयणं णाम।। (34)

स्थितिभोजन का स्वरूप-

गाथार्थ-दीवाल आदि का सहारा न लेकर जीव-जंतु से रहित तीन स्थान की भूमि में समान पैर रखकर खड़े होकर दोनों हाथ की अंचली बनाकर भोजन करना स्थिति भोजन नाम का व्रत है।

आचारवृत्ति–दीवाल का भाग या खंभे आदि का सहारा न लेकर, पैरों में चार अंगुल प्रमाण का अंतर रखकर खड़े होकर अपने कर-पात्र में आहार लेना स्थिति भोजन है। यहाँ 'खड़े होकर' कहने से ऐसा समझना कि साधु न बैठकर आहार ले सकते हैं, न लेटकर, न तिरछे आदि स्थित होकर ही ले सकते हैं किन्तु दोनों पैरों में चार अंगुल अंतर से खड़े होकर ही लेते हैं। वे तीन स्थानों का निरीक्षण करके आहार करते हैं। अपने पैर रखने के स्थान को, उच्छिष्ट गिरने के स्थान को और परोसने वाले के स्थान को जीवों के गमनागमन या वध आदि से रहित-विशुद्ध देखकर आहार ग्रहण करना होता है। उसका स्थिति भोजन नामक व्रत कहलाता है।

तात्पर्य यह है कि तीनों स्थानों को जीव-जंतु रहित देखकर भित्ति आदि का सहारा न लेकर समपाद रखकर खड़े होकर अंजलिपुट से जो आहार ग्रहण किया जाता है वह स्थिति भोजन व्रत है।

समपाद और अंजलिपुट इन दो विशेषणों से तीन मुहूर्त मात्र भी एक भक्त का जो काल है वह संपूर्ण काल नहीं लिया जाता है किन्तु मुनि का भोजन ही इन विशेषणों से विशिष्ट होता है। इससे यह अर्थ हुआ कि साधु जब-जब भोजन करते हैं तब-तब समपाद को करके अंजलिपुट से ही करते हैं। यदि पुनः भोजन क्रिया के प्रारंभ कर देने पर समपाद विशेष नहीं है और अंजलिपुट विशेष नहीं है तो हाथ के प्रक्षालन करने पर भी उस समय जानूपरिव्यतिक्रम नाम का जो अंतराय कहा गया है वह नहीं हो सकेगा और नाभि के नीचे निर्गमन नाम का जो अंतराय है वह नहीं हो सकेगा इसलिए यह जाना जाता है कि तीन मुहूर्त के मध्य एक जगह भोजन क्रिया को प्रारंभ करके किसी अन्य कारण से हाथों को धोकर मौन से अन्यत्र भोजन के लिए जा सकते हैं। यदि पुनः वह अंतराय भोजन करते हुए के एक जगह होती है ऐसा मान लो तो जानूपरिव्यतिक्रम विशेषण अनर्थक हो जावेगा। किन्तु ऐसा विशेषण ग्रहण करना चाहिए था कि सम पैरों के किंचित् भी चलित होने पर अंतराय हो जावेगा, पुनः नाभि के नीचे से निकलने रूप अंतराय दूर से ही संभव हो सकेगा इसलिए अंतराय परिहार के लिए है ऐसा ग्रहण अनर्थक ही हो जावेगा। उसी प्रकार से 'पैर-से किंचित् ग्रहण करना' इत्यादि प्रकार के अंतरायों को कहने वाले सूत्र भी अनर्थक ही हो जावेंगे तथा यदि अंजलिपुट नही छूटना चाहिए ऐसा मानेंगे तो 'कर से किंचित् ग्रहण करने रूप' अंतराय का विशेषण अनर्थक हो जायेगा। ग्रहण करो अथवा मत करो

किन्तु अंजलिपुट के छूट जाने से अंतराय हो जावेगा ऐसा कहना चाहिए था तथा जान्वधः परामर्श नामक जो अंतराय है वह भी नहीं बन सकेगा। इसी प्रकार से अन्य भी अंतराय नहीं हो सकेंगे।

सिद्धभक्ति के नहीं करने पर ये अंतराय ग्रहण किये जाते हैं ऐसा भी नहीं कह सकते हैं अन्यथा हमेशा ही भोजन का अभाव हो जावेगा। किन्तु ऐसा नहीं है, क्योंकि जब तक सिद्धभक्ति को नहीं करते हैं तब तक बैठे रहकर पुनः खड़े होकर भोजन करते हैं। माँस आदि को देखकर, रोना आदि सुनकर अथवा मल-मूत्र आदि विसर्जन करके भोजन करते हैं और वहाँ पर काक आदि के द्वारा पिण्ड ग्रहण अंतराय भी संभव नहीं है।

उदयत्थमणे काले णालीतियवज्जियम्हि मज्झम्हि।
एकम्हि दुअ तिए वा मुहुत्तकालेयभत्तं तु।। (35)

उदयत्थमणे-उदयश्चास्तमनं च उदयास्तमने तयोः सवितुरुदयास्तमनयोः। काले-कालयोः, अथवा उदयास्तमनकालौ द्वितीयान्तौ द्रष्टव्यौ। णालीतियवज्जियम्हि-नाड्या घटिकायास्त्रिकं नाडीत्रिकं तेन नाडीत्रिकेण वर्जितं नाडीत्रिकवर्जितं तस्मिन् घटिकात्रिकवर्जिते। मज्झम्हि-मध्ये। एक्कम्हि-एकस्मिन्। दुअ-द्वयोः। तिए वा-त्रिषु वा। मुहुत्तकाले-मुहूर्तकाले। एयभत्तं तु-एकभक्तं तु। उदयकालं नाडीत्रिकप्रमाणं वर्जयित्वा। अस्तमनकालं च नाडीत्रिकप्रमाणं वर्जयित्वा शेषकालमध्ये एकस्मिन् मुहूर्ते द्वयोर्मुहूर्तयोस्त्रिषु वा मुहूर्तेषु यदेतदशनं तदेकभक्तसंज्ञक व्रतमिति पूर्वगाथासूत्रादशनमनुवर्तते तेन सम्बन्ध

प्रश्न-पुनः किस लिए स्थिति भोजन का अनुष्ठान किया जाता है?

उत्तर-यह दोष नहीं है, क्योंकि जब तक मेरे हाथ-पैर चलते है तब तक ही आहार ग्रहण करना योग्य है अन्यथा नहीं ऐसा सूचित करने के लिए मुनि खड़े होकर आहार ग्रहण करते हैं। बैठकर दोनों हाथों से या बर्तन में लेकर के या अन्य के हाथ से मैं भोजन नहीं करूँगा ऐसी प्रतिज्ञा के लिए भी खड़े होकर आहार करते हैं और दूसरी बात यह भी है कि अपना पाणिपात्र शुद्ध रहता है तथा अंतराय होने पर बहुत-सा भोजन छोड़ना नहीं पड़ता है अन्यथा थाली में खाते समय अंतराय हो जाने पर पूरी भोजन से भरी हुई थाली को छोड़ना पड़ेगा, इसमें दोष लगेगा तथा इन्द्रियसंयम और प्राणीसंयम का परिपालन करने के लिए भी स्थिति भोजन मूलगुण कहा गया है ऐसा समझना।

एक भक्त का स्वरूप-

गाथार्थ-उदय और अस्त के काल में से तीन-तीन घड़ी से रहित मध्यकाल के एक-दो अथवा तीन मुहूर्त काल में एक बार भोजन करना यह एक भक्त मूलगुण है।

आचारवृत्ति-सूर्योदय के बाद तीन घड़ी और सूर्यास्त के पहले तीन घड़ी काल को छोड़कर शेष काल के मध्य में एक मुहूर्त, दो मुहूर्त या तीन मुहूर्त पर्यंत जो आहार ग्रहण है वह एक भक्त नाम का व्रत है। इस प्रकार से पूर्व गाथा सूत्र में 'अशन' शब्द है, उसका यहाँ संबंध किया गया है अथवा तीन घड़ी प्रमाण सूर्योदय काल और तीन घड़ी प्रमाण सूर्यास्त काल को छोड़कर मध्य काल में तीन मुहूर्त तक जो भोजन क्रिया की निष्पत्ति-पूर्ति है वह एक भक्त है अथवा अहोरात्र में भोजन की दो बेला होती हैं उसमें एक भोजन बेला में आहार ग्रहण करना एक भक्त है। यहाँ पर एक शब्द संख्यावाची है और भक्त शब्द कालवाची है ऐसा समझना।

प्रश्न-एक भक्त और एक स्थान में क्या अंतर है?

उत्तर-पाद विक्षेप करना और पाद विक्षेप न करना यही इन दोनों में अंतर है। तीन मुहूर्त के बीच में एक स्थान में खड़े होकर अर्थात् चरण विक्षेप न करके भोजन करना एक स्थान है और तीन मुहूर्त के काल में एक क्षेत्र की मर्यादा न करते हुए भोजन करना एक भक्त है। यदि ऐसा नहीं मानोगे तो मूलगुण और उत्तरगुण में कोई अंतर नहीं रहेगा किन्तु ऐसा है नहीं, नहीं तो प्रायश्चित्त शास्त्र से विरोध आ जायेगा, उसमें कहा हुआ था कि एक स्थान उत्तरगुण है और एक भक्त मूलगुण है।

ऐसा भेद क्यों है?

इन्द्रियों को जीतने के लिए, आकांक्षा का त्याग करने के लिए और महापुरुषों के आचरण के लिए ही भेद है।

महाव्रतों में भेद क्यों है?

छेदोपस्थापना शुद्धि नामक संयम के आश्रय से यह भेद है। महाव्रत और समिति में भी अभेद नहीं है क्योंकि क्रियात्मक और अक्रियात्मक आचरण विशेष देखा जाता है अर्थात् समिति क्रियारूप है उनमें यत्नाचारपूर्वक गमन करना, बोलना आदि होता है और महाव्रत अक्रियारूप है क्योंकि वे परिणामात्मक हैं।

ये महाव्रत समिति आदि आत्मा को दुःख देने वाले है ऐसा भी नहीं समझना

क्योंकि वैद्य की शल्य क्रिया के समान ये दुःख से विपरीत अन्यथा अर्थ वाले ही हैं अर्थात् जैसे वैद्य रोगी के फोड़े को चीरता है तो वह ऑपरेशन तत्काल में दुःखप्रद दिखते हुए भी उसके सवस्थ्य के लिए है वैसे ही इन महाव्रत समितियों के अनुष्ठान में तत्काल में भले ही दुःख दीखे किन्तु ये आत्मा को स्वर्ग मोक्ष के लिए होने से सुखप्रद हैं।

बहु परिसाडणमुज्झिअ आहारो परिगलंत दिज्जंतं।
छंडिय भुंजणमहवा छंडियदोसो हवे णेओ।। (475)

बहुपरिसातनमुज्झित्वा बहुप्रसातनं कृत्वा भोज्यं स्तोकं त्याज्यं बहुपात्रहारेण सोऽपि बहुपरिसातनमित्युच्यते। आहारं परिगलंतं दीयमानं तक्रघृतोदकादिभिः परिस्रवंतं छिद्रहस्तैश्च बहुपरिसातनं च कृत्वाहारं यदि गृह्णाति त्यक्त्वा चैकमाहारमपरं भुंक्ते यस्तस्य त्यक्तदोषो भवति। एते अशनदोषाः दश परिहरणीयाः। सावद्यकारणाज्जीवदयाहे-तोर्लोकजुगुप्सा ततश्चेति।

संजोयणा य दोसो जो संजोएदि भत्तपाणं तु।
अदिमत्तो आहारो पमाणदोसो हवदि एसो।। (476)

परित्यजन दोष-

गाथार्थ-बहुत-सा गिराकर, या गिरते हुए दिया गया भोजन ग्रहण कर और भोजन करते समय गिराकर जो आहार करना है वह व्यक्त दोष है ऐसा जानना चाहिए।

आचारवृत्ति-बहुत-सा भोजन गिराकर आहार लेना अर्थात् भोजन की वस्तुएँ थोड़ी हाथ में रखना, बहुत-सी गिरा देनो सो भी परिसातन कहलाता है। घी, छाछ, जल आदि वस्तु देते समय हाथ से बहुत गिर रही हो या अपने छिद्र सहित अंजलीपुट से इन वस्तुओं को बहुत गिराते हुए आहार लेना तथा एक कोई वस्तु हाथ से गिराकर अन्य कोई इष्ट वस्तु खा लेना इत्यादि प्रकार से मुनि के व्यक्त दोष होता है।

ये दश अशन दोष कहे गये हैं जो कि त्याग करने योग्य हैं। ये सावद्य को करने वाले हैं। इनसे जीवदया नहीं पलती है और लोक में निंदा भी होती है अतः ये त्याज्य है।

संयोजना और प्रमाण दोष को कहते हैं-

गाथार्थ-जो भोजन और पान को मिला देता है सो संयोजना दोष है।

अतिमात्र आहार लेना सो यह प्रमाण दोष होता है।

आचारवृत्ति-ठण्डा भोजन उष्ण जल में मिला देना, या ठण्डे जल आदि पदार्थ उष्ण भात आदि में मिला देना। अन्य भी परस्पर विरुद्ध वस्तुओं को मिला देना संयोजना दोष है।

तं होदि सयंगालं जं आहारेदि मुच्छिदो संतो।
तं पुण होदि सधूमं जं आहारेदि णिंदिंदो।। (477)
छहिं कारणेहिं असणं आहारंतो वि आयरदि धम्मं।
छहिं चेव कारणेहिं दु णिज्जुहंतो वि आचरदि।। (478)

व्यंजन आदि भोजन से उदर के दो भाग पूर्ण करना और जल से उदर का तीसरा भाग पूर्ण करना तथा उदर का चतुर्थ भाग खाली रखना सो प्रमाणभूत आहार कहलाता है। इससे भिन्न जो अधिक आहार ग्रहण करते हैं उनके प्रमाण या अतिमात्र नाम का आहार दोष होता है। प्रमाण से अधिक आहार लेने पर स्वाध्याय नहीं होता है, षट्-आवश्यक क्रियाएँ करना भी शक्य नहीं रहता है। ज्वर आदि रोग भी उत्पन्न होकर संतापित करते हैं तथा निद्रा और आलस्य आदि दोष भी होते हैं। अतः प्रमाणभूत आहार लेना चाहिए।

अंगार और धूम दोष-

गाथार्थ-जो मूर्च्छित होता हुआ अर्थात् आहार में गृद्धता रखता हुआ आहार लेता है उसके अंगार नाम का दोष होता है, क्योंकि उसमें अतीव गृद्धि देखी जाती है।

जो निंदा करते हुए अर्थात् यह भोजन विरूपक है, मेरे लिए अनिष्ट है, ऐसा करके भोजन करता है उसके धूम नाम का दोष होता है क्योंकि अंतरंग में संक्लेश देखा जाता है।

कारण को कहते हैं-

गाथार्थ-छह कारणों से भोजन ग्रहण करते हुए भी धर्म का आचरण करते हैं और छह कारणों से ही छोड़ते हुए भी धर्म का आचरण करते हैं।

वेयणवेज्जावच्चे किरियाठाणे यं संजमट्ठाए।
तध पाणधम्मचिंता कुज्जा एदेहिं आहारं।। (479)

आचारवृत्ति-मुनि छह कारणों से प्रयोजनों-से भोज्य, खाद्य, लेह्य, पेय इन चार प्रकार के आहार को ग्रहण करते हुए भी धर्म अर्थात् चारित्र का अनुष्ठान करते हैं

तथा छह प्रयोजनों से ही आहार का त्याग करते हुए भी धर्म का पालन करते हैं। यदि मुनि निष्कारण ही आहार ग्रहण करते है तो दोष है। प्रयोजनों से भोजन करते हुए भी धर्म का आचरण करते है ऐसा अभिप्राय है। उसी प्रकार से अन्य प्रयोजनों से ही भोजन का त्याग करते हुए धर्म का ही पालन करते हैं अतः भोजन के परित्याग में दोष नहीं है, क्योंकि वह त्याग कारण सहित होता है।

वे कौनसे कारण हैं जिनसे आहार करते हैं?

गाथार्थ-वेदना शमन हेतु, वैयावृत्ति के लिए, क्रियाओं के लिए, संयम के लिए तथा प्राणों की चिंता और धर्म के लिए, इन कारणों से आहार करें।

आचारवृत्ति-'मैं क्षुधा-वेदना का उपशम करूँ' इसलिए मुनि आहार करते हैं। 'मैं अपनी और अन्य साधुओं की वैयावृत्ति करूँ' इसलिए आहार करते हैं। 'मेरी छह आवश्यक क्रियाएँ भोजन के बिना नहीं हो सकती हैं, मैं उन क्रियाओं को करूँ', इसलिए आहार करते हैं। 'तेरह प्रकार का संयम मैं पालन करूँ' इसलिए भोजन करते हैं अथवा 'आहार के बिना मेरी इन्द्रियाँ शिथिल या विकल हो जावेंगी तो मैं जीवदया पालन करने में समर्थ नहीं होऊँगा' इस तरह से प्राण संयम और इन्द्रिय संयम के पालन करने हेतु आहार करते हैं तथा 'मेरे ये दश विध प्राण आहार के बिना नहीं रह सकते हैं', विशेष रूप से आहार के बिना आयु प्राण नहीं रह सकता है, अतः प्राणों के लिए मुनि आहार करते हैं। भोजन के बिना उत्तम क्षमा आदि रूप दस प्रकार का धर्म मेरे वश में नहीं रह सकेगा। अशन के बिना यह जीव क्षमा, मार्दव आदि धर्म करने में समर्थ नहीं हो सकता है, इसलिए वे आहार करते हैं।

धर्म और संयम में एकांत से ऐक्य नहीं है, क्योंकि क्षमादि भेद देखे जाते हैं। इन छह कारणों से यति आहार करते हैं यह अभिप्राय है।

आदंके उवसग्गे तिरक्खणे बंभचेरगुत्तीओ।
पाणिदयातवहेऊ सरीरपरिहार वोच्छेदो।। (480)

गाथार्थ-आतंक होने पर, उपसर्ग के आने पर, ब्रह्मचर्य की रक्षा हेतु, प्राणि दया के लिए, तप के लिए और संन्यास के लिए आहार त्याग होता है।

आचारवृत्ति-आतंक-आकस्मिक कोई व्याधि उत्पन्न हो गयी जो कि मारणान्तिक पीड़ा कारक है, ऐसे प्रसंग में आहार का त्याग कर दिया जाता है। उपसर्ग-देव, मनुष्य, तिर्यंच और अचेतन कृत उपसर्ग के उपस्थित होने पर भोजन का त्याग होता है।

ब्रह्मचर्य, गुप्ति की रक्षा के लिए अर्थात् अच्छी तरह ब्रह्मचर्य को निर्मल करने हेतु, सप्तम धातु अर्थात् वीर्य का क्षय करने के लिए आहार का त्याग होता है। 'यदि मैं आहार ग्रहण करता हूँ तो बहुत से प्राणियों का घात होता है इसलिए आहार ग्रहण नहीं करूँगा', इस तरह जीव दया के निमित्त आहार का त्याग करते हैं। 'बारह प्रकार के तपों में अनशन एक तप है उसे मैं करूँगा' ऐसे तप के लिए भी आहार छोड़ देते हैं तथा 'संन्यास काल में अर्थात् वृद्धावस्था मेरी मुनिअवस्था में हानि करने वाली है, मैं दुसाध्य रोग से युक्त हूँ, मेरी इन्द्रियाँ विकल हो गयी हैं, या मेरे स्वाध्याय की हानि हो रही है, मेरे जीने के लिए अब कोई उपाय नहीं है', इस प्रकार के प्रसंगों में शरीर का परित्याग करना होता है। इसी का नाम संन्यासमरण है। उस संन्यास मरण के निमित्त आहार का त्याग करते हैं। अर्थात् इन छह कारणों से आहार का त्याग करना चाहिए।

यहाँ पूर्व कारणों के साथ विरोध नहीं है, क्योंकि विषय विभाग देखा जाता है। क्षुधा-वेदना आदि के होने पर भी आतंक हो सकता है अथवा यदि प्रचुर जीव-हत्या दिखती है तो भोजन आदि त्याग कर देते हैं। शरीर-पीड़ा रहित साधु के तपश्चरण होता है इसलिए विरोध नहीं है क्योंकि विषय भेद देखा जाता है। आहार शब्द की अनुवृत्ति होने से यहाँ पर भी गाथा में व्युच्छेद के साथ आहार का व्युच्छेद अर्थात् त्याग करना ऐसा संबंध जोड़ लेना चाहिए।

आहार कदाचित् भी न करे।

ण बलाउसाउअट्ठं ण सरीर स्सुवचयट्ठ तेजट्ठं।

णाणट्ठ संजमट्ठं झाणट्ठं चेव भुंजेज्जो।। (481)

गाथार्थ-न बल के लिए, न आयु के लिए और न स्वाद के लिए, न शरीर की पुष्टि के लिए और न तेज के लिए आहार ग्रहण करे। किन्तु ज्ञान के लिए, संयम के लिए और ध्यान के लिए आहार ग्रहण करे।

आचारवृत्ति-'युद्धादि में समर्थ ऐसा बल मेरे हो जावे' इस हेतु मुनि आहार नहीं करते हैं। 'मेरी आयु बढ़ जावे' इसलिए भी आहार नहीं करते हैं। 'इस भोजन का स्वाद बढ़िया है' इस प्रकार स्वाद के लिए भी भोजन नहीं करते हैं। 'मेरा शरीर पुष्ट हो जावे अथवा माँस की वृद्धि हो जावे' इसलिए भोजन नहीं करते हैं और 'मेरे शरीर में दीप्ति हो या दर्प हो' इसलिए भी आहार नहीं करते हैं।

यदि इन बल, आयु, स्वाद, शरीर पुष्टि और दीप्ति के लिए आहार नहीं करते हैं

तो किस लिए करते हैं?

'मेरा स्वाध्याय चलता रहे' इस तरह ज्ञान के लिए आहार करते हैं। 'मेरा संयम पलता रहे' इस तरह संयम के लिए आहार करते है और आहार के बिना ध्यान नहीं हो सकेगा इसलिए ध्यान के हेतु यति आहार करते हैं। अर्थात् ज्ञान, संयम और ध्यान की सिद्धि के लिए मुनि आहार करते हैं।

णवकोडीपरिसुद्धं असणं बादालदोसपरिहीणं।
संजोजणाय हीणं पमाणसहियं विहिसुदिण्णं।। (482)
विगदिंगाल विधूमं छक्कारणसंजुदं कमविसुद्धं।
जत्तासाधणमेत्तं चोद्दसमलवज्जिदं भुंजे।। (483)

कैसा आहार ग्रहण करते हैं?

गाथार्थ-नवकोटि से शुद्ध भोजन, जो कि बयालीस दोषों से रहित है, संयोजना से हीन है, प्रमाण सहित है और विधिपूर्वक दिया जाता है।

जो कि अंगार दोष से रहित है, धूम दोष रहित है, छह कारणों से युक्त है और क्रम से विशुद्ध है, जो यात्रा के लिए साधन मात्र है तथा चौदह मल दोषों से रहित है, साधु ऐसा अशन ग्रहण करते है।

आचारवृत्ति-जो आहार नवकोटि से परिशुद्ध है। ये नवकोटि क्या हैं? मन से कृत, कारित, अनुमोदना का होना ये तीन कोटि हैं; वचन से कृत, कारित, अनुमोदना ये तीन कोटि हैं तथा काय से कृत, कारित, अनुमोदना ये तीन कोटि हैं, ऐसे ये नवकोटि हुईं। इन नवकोटि से शुद्ध आहार को मुनि ग्रहण करते हैं। अर्थात् मुनि मन, वचन, काय से आहार न बनाते हैं, न बनवाते हैं और न अनुमोदना करते हैं।

सोलह उद्गम दोष, सोलह उत्पादन दोष और दस एषणा दोष ये बयालीस दोष हैं। इनसे रहित, संयोजना दोष से रहित और प्रमाण सहित आहार लेते हैं तथा विधि से दिया गया हो अर्थात् पड़गाहन करना, उच्च स्थान देना, पाद प्रक्षालन करना, अर्चना करना, प्रणाम करना, मन-वचन-काय की शुद्धि तथा आहार की शुद्धि यह नवधाभक्ति विधि कहलाती है। इस विधि से तथा श्रद्धा, भक्ति, तुष्टि, विज्ञान, अलोभ, क्षमा और शक्ति सात गुणों से युक्त दाता के द्वारा जो दिया गया है ऐसा आहार लेते हैं। जो अंगार दोष रहित, धूम दोष रहित, छह कारणों से संयुक्त, क्रम से विशुद्ध अर्थात् उत्क्रम से हीन तथा प्राणों के धारण के लिए अथवा मोक्ष की यात्रा के साधन का निमित्त है,

चौदह मल दोषों से रहित है ऐसे आहार को यति ग्रहण करते हैं।

भावार्थ-16 उद्गम दोष, 16 उत्पादन दोष, 10 अशन दोष, संयोजन, प्रमाण, अंगार और धूम से मिलकर छियालीस दोष हो जाते हैं। यहाँ पर संयोजन आदि चार को पृथक् करके उपर्युक्त 42 को एक साथ लिया है।

णहरोमजंतुअट्ठी कणकुंडयपूयचम्मरुहिरमंसाणि।
बीयफलकंदमूला छिण्णाणिमला चउद्दसा होंति।। (484)

चौदह मलदोष-

गाथार्थ-नख, रोम, जंतु, हड्डी, कण, कुण्ड, पीव, चर्म, रूधिर, माँस, बीज, फल, कंद और मूल ये पथक् भूत चौदह मलदोष होते हैं।

आचारवृत्ति-नख-मनुष्य या तिर्यंचों के हाथ या पैर की अंगुलियों का अग्र भाग, रोम-मनुष्य और तिर्यंचों के बाल, जंतु-प्राणियों के निर्जीव शरीर, अस्थि-कंकाल अर्थात् हड्डी, कण-जौ-गेहूँ आदि के बाहर का अवयव, छिलका, कुण्ड-शालि आदि अभ्यंतर भाग का सूक्ष्म अवयव, पूय-पका हुआ रूधिर अर्थात् घाव का पीव, चर्म-शरीर की त्वचा (यह प्रथम धातु है), रूधिर-खून (यह द्वितीय धातु है), माँस-रूधिर के लिए आधारभूत (यह तृतीय धातु है), बीज-उगने योग्य अवयव अर्थात् गेहूँ, चने आदि, फल-जामुन, आम, अंबाडक आदि, कंद-कंदली के नीचे से उगने वाला, अर्थात् जमीन में उत्पन्न होने वाले अंकुर की उत्पत्ति के कारणभूत अथवा सूरण वगैरह, मूल-पिप्पली आदि जड़, ये चौदह मल होते हैं।

इनमें कुछ तो महामल है और कोई अल्पमल है। कोई महादोष है और कोई अल्पदोष है। रूधिर, माँस, हड्डी, चर्म और पीव ये महादोष है। आहार में इनके आ जाने पर सर्वाहार का परित्याग करने पर भी प्रायश्चित्त लेना होता है। द्वीन्द्रिय, त्रीन्द्रिय और चतुरिन्द्रिय जीवों के शरीर अर्थात् मृत लट, चिंवटी, मक्खी आदि तथा बाल यदि आहार में आ जावे तो आहार छोड़ देना होता है। आहार में नख आ जाने पर आहार छोड़ देना होता है और किंचित् प्रायश्चित्त भी ग्रहण करना होता है। कण, कुंड, बीज, कंद, फल और मूल इनके आ जाने पर यदि इन्हें न निकाल सके तो आहार छोड़ देना चाहिए।

तथा सिद्धभक्ति कर लेने के बाद यदि मुनि के अपने शरीर से रूधिर या पीव बहने लगता है अथवा आहार देने वाले के शरीर से रूधिर या पीव निकलता है तो

उस दिन आहार छोड़ देना होता है। यदि माँस भी दिख जाये तो भी आहार त्याग कर देना चाहिए।

ये मल दोष आठ प्रकार की पिंड शुद्धि में नहीं कहे गये हैं, अतः इनका पृथक् कथन किया गया है।

पगदा असओ जह्मा तह्मादो दव्वदोति तं दव्वं।
फासुगमिदि सिद्धेवि य अप्पट्ठकदं असुद्ध तु।। (485)

दोष रहित आहार करते हैं-

गाथार्थ-जिस द्रव्य से जीव निकल गए हैं वह द्रव्य प्रासुक है। इस तरह का भोजन प्रासुक बना होने पर भी यदि वह अपने लिए बना है तो अशुद्ध है।

आचारवृत्ति-मुनि द्रव्य और भाव से जो प्रासुक वस्तु आहार में लेते हैं। द्रव्यगत प्रासुक को कहते हैं-निकल गये हैं असु अर्थात् प्राणी जिसमें से वह द्रव्य से शुद्ध है अर्थात् जिसमें एकेन्द्रिय जीव नहीं है वह आहार द्रव्य से शुद्ध है। पुनः जिसमें द्वीन्द्रिय आदि जीव जीते हुए या निर्जीव हुए भी हैं वह आहार मुनि को दूर से ही छोड़ देना चाहिए, क्योंकि वह द्रव्य से अशुद्ध है। इसी प्रकार से प्रासुक सिद्ध हुआ भी द्रव्य यदि अपने लिए तैयार किया गया है तो वह द्रव्य से शुद्ध होते हुए भी अशुद्ध ही है। अर्थात् वह आहार भाव से अशुद्ध है।

जह मच्छयाण पयदे मदणुदये मच्छया हि मज्जंति।
ण हि मंडूगा एवं परमट्ठकदे जदि विसुद्धो।। (486)

पर के लिए बनाया गया भोजन शुद्ध-

गाथार्थ-जैसे मत्स्यों के लिए किये मादक जल में मत्स्य ही मद को प्राप्त होते हैं, इसी तरह पर के लिए किये गये (भोजन) में यति विशुद्ध रहते हैं।

आचारवृत्ति-जैसे मछलियों के लिए जल में मादक वस्तु डालने पर उस जल से मछलियाँ ही विह्वल होती हैं, मेंढ़क नहीं होते। जिस जल में मछलियाँ हैं उसी में मेंढ़क भी हैं, फिर भी वे विपत्ति को प्राप्त नहीं होते हैं, क्योंकि उनके लिए उस कारण का अभाव है। इसी तरह पर के लिए बनाये गये भोजन आदि में उसे ग्रहण करते हुए भी यति विशुद्ध है उसके दोष से लिप्त नहीं होते हैं अर्थात् (दाता के) कुटुम्बीजन ही अधःकर्म आदि दोष से दूषित होते हैं, साधु नहीं। बल्कि वे कुटुम्बी-गृहस्थ जन यदि सम्यग्दृष्टि हैं तो साधु के दिये दान के फल से उस अधःकर्म-

आरम्भजन्य दोष को दूर करके, स्वर्गगामी और मोक्षगामी हो जाते है और यदि मिथ्यादृष्टि है तो पुनः भोगभूमि को प्राप्त कर लेते हैं इसलिए उन्हें दोष नहीं होता है।

आधाकम्मपरिणदो फासुगदव्वेवि बंधओ भणिओ।
सुद्धं गयेसमाणो आषाकम्मेवि सो सुद्धो।। (487)

भाव से शुद्ध आहार-

गाथार्थ-अधःकर्म से परिणत हुए मुनि प्रासुक द्रव्य के ग्रहण करने में भी बंधक कहे गये हैं, किन्तु शुद्ध आहार की गवेषणा करने वाले अधःकर्म से युक्त आहार ग्रहण करने में भी शुद्ध हैं।

आचारवृत्ति-प्रासुक द्रव्य के होने पर भी यदि साधु अधःकर्म से परिणत हैं अर्थात् यदि वे गौरव से उस आहार को अपने लिए किया हुआ मानते हैं तब वे कर्म का बंध कर लेते है। पुनः शुद्ध की खोज करते हुए अर्थात् अधःकर्म से रहित और कृत-कारित-अनुमोदना से रहित ऐसा आहार यत्नपूर्वक चाहते हुए साधु कदाचित् अधःकर्म युक्त आहार के ग्रहण करने में भी शुद्ध ही हैं। यद्यपि वह आहार अधःकर्म के द्वारा बनाया हुआ है तो भी साधु के बंध का हेतु नहीं है, क्योंकि उसमें उन साधु की कृत कारित-अनुमोदना आदि नहीं है।

सव्वोवि पिंडदोसो दव्वे भावे समासवो दुविहो।
दव्वगदो पुण दव्वे भावगदो अप्पपरिणामो।। (488)

गाथार्थ-सभी पिंड दोष द्रव्य और भाव से संक्षेप में दो प्रकार के हैं। पुनः द्रव्य से संबंधित तो द्रव्य में है और भाव से संबंधित आत्मा का परिणाम है।

आचारवृत्ति-सभी पिंड दोष द्रव्यगत और भावगत की अपेक्षा से संक्षेप से दो प्रकार हैं, अर्थात् द्रव्य पिंडदोष और भाव पिंडदोष ऐसे पिंडदोष के दो भेद हैं। उद्गम आदि दोष से सहित भी अधःकर्म से युक्त आहार द्रव्यगत पिंडदोष कहलाता है। वह द्रव्यगत पुनः द्रव्य दोष है। भाव से अर्थात् आत्म परिणाम से जो अशुद्ध है अर्थात् शुद्ध-प्रासुक भी आहार आदि पदार्थ परिणामों की अशुद्धि से अशुद्ध हैं, इसलिए भाव शुद्धि यत्नपूर्वक करना चाहिए, क्योंकि भावशुद्धि से ही सर्व तपश्चरण और ज्ञान-दर्शन आदि व्यवस्थित होते हैं।

सव्वेसणं व विद्देसणं च सुद्धासणं च ते कमसो।
एसणसमिदिविसुद्धं णिव्वियडमवंजणं जाणे।। (489)

द्रव्य के भेद-

गाथार्थ-सर्वेषण, विद्वैषण और शुद्धाशन से क्रमशः एषणा समिति से शुद्ध, निविकृति रूप और व्यंजन रहित हैं ऐसा जानो।

आचारवृत्ति-सर्वेषण, 'च' शब्द से असर्वेषण, विद्वैषण, 'च' शब्द से अविद्वैषण, शुद्धाशन और 'च' शब्द से अशुद्धाशन ऐसा ग्रहण करना चाहिए। अर्थात् गाथा में तीन चकार होने से प्रत्येक के विपरीत का ग्रहण किया समझना चाहिए। एषणा समिति से शुद्ध आहार सर्वेषण कहलाता है तथा विकृति-पाँच प्रकार के रस, उनसे रहित आहार निर्विकृति रूप है। अर्थात् जो गुड़, तेल, घी, दही और दूध तथा शाक आदि से रहित है, तथा सौवीर-भात का मांड या कांजी, शुष्क तक्र-मक्खन निकाला हुआ छाछ इनसे सहित आहार विद्वैषण है। अर्थात् रसादि निर्विकृति आहार तथा मांड, कांजी या छाछ सहित आहार विद्वैषण कहलाता है तथा कांजी व छाछ आदि से भी रहित आहार अव्यंजन है। जो पाक से अवतीर्ण हुआ मात्र है, किंचित् भी अन्य रूप नहीं किया गया है वह शुद्धाशन है। अर्थात् केवल पकाये हुए भात या रोटी दाल या उबाले हुए शाक आदि जिनमें नमक, मिरच, मसाला आदि कुछ भी नहीं डाला गया है वह भोजन व्यंजन-संस्कार रहित है, वही शुद्धाशन कहलाता है। गाथा में यथाक्रम से इनका वर्णन किया गया है।

यह तीन प्रकार का द्रव्य अर्थात् भोजन आहार में ग्रहण करने योग्य है तथा सर्वरसों से समन्वित और सर्व व्यंजनों से सहित ऐसा आहार असर्वाशन है वह कदाचित् ग्रहण करने योग्य है, कदाचित् अयोग्य है। इस न्याय से वर्णन करने पर एषणा समिति का व्याख्यान होता है।

दव्वं खेत्तं कालं भावं बलवीरियं च णाऊण।
कुज्जा एषणसमिदिं जहोवदिट्ठं जिणसदम्मि।। (490)

एषणा समिति का पालन कैसे करें?

गाथार्थ-द्रव्य, क्षेत्र काल, भाव तथा बलवीर्य को जानकर जैसे जिनमत में कही गई है ऐसी एषणा समिति का पालन करें।

आचारवृत्ति-द्रव्य-आहार आदि पदार्थ को जानकर, क्षेत्र-जंगल, अनूप, रूक्ष, स्निग्ध आदि क्षेत्र को जानकर, काल-शीत, उष्ण, वर्षा आदि को जानकर, भाव-आत्मा के परिणाम, श्रद्धा, उत्साह को जानकर तथा अपने शरीर के बल को

जानकर एवं अपने वीर्य-संहनन को जानकर साधु, जिनागम में जैसा उसका वर्णन किया गया है उसी तरह से, एषणा समिति का पालन करें। यदि द्रव्य, क्षेत्र आदि की अपेक्षा न रखकर चाहे जैसा वर्तन करेगा तो शरीर में वात-पित्त-कफादि की उत्पत्ति हो जावेगी।

भावार्थ-क्षेत्र के जांगल, अनूप और साधारण ऐसे तीन भेद माने जाते हैं। जिस देश में जल, वृक्ष, पर्वत आदि कम रहते हैं वह जांगल देश है। जहाँ पानी, वृक्ष और पर्वत की बहुलता है वह अनूप कहलाता है तथा जहाँ पर जल, वृक्ष व पर्वत अधिक या कम नहीं है प्रत्युत सम हैं, उसे साधारण कहते हैं। जो साधु आहार आदि की वस्तुरूप द्रव्य को, प्रकृति के अनुरूप क्षेत्र को, ऋतु के अनुरूप काल को, अपने भावों को तथा अपने बल वीर्य को देखकर उसके अनुरूप आहार आदि ग्रहण करता है उसका धर्मध्यान ठीक चलता है, संयम में बाधा नहीं आती है। इसके विपरीत इन बातों की अपेक्षा न रखने से, वात-पित्त आदि दोष कुपित हो जाने से, नाना रोग उत्पन्न हो जाने से क्लेश हो जाता है।

अद्धमसणस्स सव्विंजणस्स उदरस्स तदियमुदयेण।
वाऊसंचरणट्ठं चउत्थमवसेसये भिक्खू।। (491)

भोजन के विभाग का परिमाण-

गाथार्थ-उदर का आधा भाग व्यंजन अर्थात् भोजन से भरे, तीसरा भाग जल से भरे और वह साधु चौथा भाग वायु के संचरण के लिए खाली रखें।

आचारवृत्ति-साधु अपने उदर के चार भाग करे। उनमें से आधा भाग व्यंजन (भोजन) से पूर्ण करे, तृतीय भाग जल से पूर्ण करे और उदर का चौथा भाग वायु के संचार के लिए खाली रखे। उदर का चौथा भाग खाली ही रखे कि जिससे छह आवश्यक क्रियाएँ सुख से हो सके, स्वाध्याय ध्यान आदि में भी हानि न होवे तथा अजीर्ण आदि रोग भी न होवें।

सूरुदयत्थमणादो णालीतिय वज्जिदे असणकाले।
तिगदुगएगमुहुत्ते जहण्णमज्झिम्ममुक्कस्से।। (492)

भोजन के विभाग का परिमाण-

गाथार्थ-सूर्य के उदय और अस्त काल की तीन-तीन घटिका छोड़कर भोजन के काल तीन, दो और एक मुहूर्त पर्यंत जघन्य, मध्यम और उत्कृष्ट है।

आचारवृत्ति-सूर्योदय के तीन घड़ी बाद से लेकर सूर्यास्त के तीन घड़ी पहले तक के मध्य में आहार का काल है। उस आहार के काल में तीन मुहूर्त तक भोजन करना जघन्य आचरण है, दो मुहूर्त में भोजन करना मध्यम आचरण है एवं एक मुहूर्त में भोजन करना उत्कृष्ट आचरण है। यह काल का परिमाण सिद्धभक्ति करने के अनंतर आहार ग्रहण करने का है न कि आहार के लिए भ्रमण करते हुए विधि न मिलने के पहले का भी। अर्थात् यदि साधु आहार हेतु भ्रमण कर रहे हैं उस समय का काल इसमें शामिल नहीं है।

भिक्खा चरियाए पुण गुत्तीगुणसीलसंजमादीणं।
रक्खंतो चरदिमुणी णिव्वेदतिगं च पेच्छंतो।। (493)

आहार के लिए निकले हुए मुनि क्या करते हुए भ्रमण करते हैं?

गाथार्थ-भिक्षा के लिए चर्या में निकले हुए मुनि पुनः गुप्ति, गुण, शील और संयम आदि की रक्षा करते हुए और तीन प्रकार के वैराग्य का चिंतन करते हुए चलते हैं या आचरण करते हैं।

आचारवृत्ति-भिक्षा चर्या में प्रविष्ट हुए मुनि मनोगुप्ति, वचनगुप्ति और कायगुप्ति की रक्षा करते हुए चलते हैं। मूलगुणों की और उत्तरगुणों की रक्षा करते हुए तथा शील, संयम आदि की रक्षा करते हुए विचरण करते हैं। ऐसे मुनि शरीर से वैराग्य, संग से वैराग्य और संसार से वैराग्य का विचार करते हुए विचरण करते हैं।

आणा अणवत्थावि य मिच्छत्ताराहणादणासो य।
संजमविराहणावि य चरियाए परिहरेदव्वा।। (494)

गाथार्थ-आज्ञा, अनवस्था, मिथ्यात्वाराधना, आत्मनाश और संयम की विराधना इनका चर्या में परिहार करना चाहिए।

आचारवृत्ति-आज्ञा अर्थात् वीतराग शासन की रक्षा करते हुए उनकी आज्ञा का पालन करते हुए साधु विचरण करते है, ऐसा संबंध लगाना और निम्न दोषों का परिहार करते हुए विचरण करते हैं-अनवस्था-स्वेच्छाप्रवृत्ति, मिथ्यात्वाराधना-सम्यक्त्व के प्रतिकूल आचरण, आत्मनाश-स्व का घात, संयम विराधना-संयम की हानि ये दोष हैं। चर्या में प्रविष्ट हुए मुनि जैसे अनवस्था न हो वैसा आचरण करते हैं, मिथ्यात्व की आराधना आदि ये दोष जैसे न हो सके वैसा ही प्रयत्न करते हुए पर्यटन करते हैं तथा अंतरायों का भी परिहार करते हुए आहार ग्रहण करते हैं।

कागा मेज्झा छद्दी रोहण रुहिरं च अस्सुवादं च।
जण्हूहिट्ठामरिसं जण्हुवरि वदिक्कमो चेव।। (495)
णाभिअधोणिग्गमणं पच्चविखयसेवणा य जंतुवहो।
कागादिपिंडहरण पाणीदो पिंडपडणं च।। (496)
पाणीए जंतुवही मंसादीदंसणे य उवसग्गे।
पादतरम्मि जीवो संपादो भायणाणं च।। (497)
उच्चारं पस्सवणं अभोजगिहपवेसणं तहा पडणं।
उववेसण सदंसं भूमीसंफास णिट्ठुवणं।। (498)
उदरक्किमिणिग्गमणं अदत्तगहणं पहारगामडाहोय।
पादेण किंचि गहणं करेण वा जं च भूमीए।। (499)
एदे अण्णे बहुगा करणभूदा अभोयणस्सेह।
बीहणलोगदुगुंछणसंजमणिव्वेदणट्ठं च।। (500)
वे अंतराय कौनसे हैं?

गाथार्थ-काक, अमेध्य, नमन, रोधन, रूधिर, अश्रुपात, जान्वधःपरामर्श, जानूपरिव्यतिक्रम, नाभि से नीचे निर्गमन, प्रत्याख्यातसेवन, जंतुबध, काकादि पिंडहरण, पाणिपात्र से पिंडपतन, पाणिपुट में जंतुवध, माँसादि दर्शन, उपसर्ग पादान्तर में जीव संपात, भाजन संपात, उच्चार, मूत्र, अभोज्यगृह प्रवेश, पतन, उपवेशन, सदंश, भूमिस्पर्श, निष्ठीवन, उदर कृमि निर्गमन, अदत्तग्रहण, प्रहार, ग्रामदाह, पादेन किंचित् ग्रहण अथवा भूमि से हाथ से किंचित् ग्रहण करना। भोजन त्याग के और भी बहुत से कारण हैं। ये अंतराय भय, लोक निंदा, संयम की रक्षा और निर्वेद के लिए पाले जाते हैं।

आचारवृत्ति-ये बत्तीस अंतराय कहे गये हैं। इन सभी में अंतराय शब्द का प्रयोग कर लेना चाहिए।

1. काक-गमन करते हुए या स्थित हुए मुनि के ऊपर यदि काक, वक आदि पक्षी वीट कर देवे तो वह काक नाम का अंतराय है। यहाँ 'काक' शब्द उपलक्षण मात्र है अतः काक वक, बाज, आदि का ग्रहण कर लेना चाहिए; क्योंकि साहचर्य की अपेक्षा यह कथन किया गया है। 2. अमेध्य-अशुचि पदार्थ विष्ठा आदि से यदि पैर लिप्त हो जाय तो अंतराय होता है। यहाँ पर अमेध्य के साहचर्य इस अंतराय को भी

अमेध्य कह दिया है। 3. वमन-यदि स्वयं को वमन हो जाय तो वमन नाम का अंतराय है। 4. रोधन-यदि कोई उस समय रोक दे या पकड़ ले तो अंतराय है। 5. रूधिर-यदि अपने या अन्य के शरीर से रूधिर निकलता हुआ दिख जाय। गाथा में 'च' शब्द का तात्पर्य है कि पीव आदि दिखने से भी अंतराय है। 6. अश्रुपात-दुःख से यदि अपने अथवा पास में स्थित किसी अन्य के भी अश्रु आ जावे। 7. जान्वधः परामर्श-घुटनों से नीचे भाग का यदि हाथ से स्पर्श हो जाय। 8. जानूपरिव्यतिक्रम-घुटनों से ऊपर के अवयवों का स्पर्श हो जावे। 9. नाभ्यधोनिर्गमन-नाभि से नीचे मस्तक करके यदि निकलना पड़ जाये। 10. प्रत्याख्यात सेवना-जिस वस्तु का त्याग है यदि उसका भक्षण हो जावे। 11. जंतु वध-यदि अपने से या अन्य के द्वारा सामने किसी जंतु का वध हो जावे। 12. काकादिपिंडहरण-यदि कौवे आदि हाथ से ग्रास हरण कर लेवे। 13. पिंडपतन-यदि आहार करते हुए अपने पाणिपात्र से पिंड-ग्रास मात्र का पतन हो जावे। 14. पाणौ जंतुवध-यदि आहार करते हुए के पाणिपुट में कोई जंतु स्वयं आकर मर जावे। 15. माँसादिदर्शन-यदि मरे हुए पंचेन्द्रिय जीव के शरीर का माँस आदि दिख जावे। 16. उपसर्ग-यदि देवकृत आदि उपसर्ग हो जावे। 17. पादांतरे जीव-यदि पंचेन्द्रिय जीव पैरों के अंतराल से निकल जावे। 18. भाजन संपात-यदि आहार देने वाले के हाथ से वर्तन गिर जावे। 19. उच्चार-यदि अपने उदर से मल च्युत हो जावे। 20. प्रस्रवण-यदि अपने मूत्रादि हो जावे। 21. अभोज्य गृहप्रवेश-यदि आहार हेतु पर्यटन करते हुए मुनि का चांडाल आदि अभोज्य के घर में प्रवेश हो जावे। 22. पतन-यदि मूर्च्छा आदि से अपना पतन हो जावे अर्थात् आप गिर पड़े। 23. उपवेशन-यदि बैठना पड़ जावे। 24. सदंश-यदि कुत्ता आदि काट खाये। 25. भूमि स्पर्श-सिद्धभक्ति कर लेने के बाद यदि हाथ से भूमि का स्पर्श हो जावे। 26. निष्ठीवन-यदि अपने मुख से थूक, कफ आदि निकल जावे। 27. उदरकृमि निर्गमन-यदि उदर से कृमि निकल पड़े। 28. अदत्तग्रहण-यदि बिना दी हुई कुछ वस्तु ग्रहण कर लेवे। 29. प्रहार-यदि अपने ऊपर या अन्य किसी पर तलवार आदि से प्रहार हो जावे। 30. ग्रामदाह-यदि ग्राम में अग्नि लग जावे। 31. पादेन किंचित् ग्रहण-यदि पैर से कुछ ग्रहण कर लिया जावे। 32. करेण-किंचिद्ग्रहण-अथवा यदि हाथ से कुछ वस्तु भूमि पर ग्रहण कर ली जावे। इस प्रकार उपर्युक्त कारणों से सर्वत्र भोजन में अंतराय होता है ऐसा समझना चाहिए।

ये पूर्वोक्त काक आदि बत्तीस अंतराय हैं जो कि भोजन के त्याग के लिए कारणभूत होते हैं। इनसे अन्य भी बहुत से अंतराय हैं जैसे कि चांडाल आदि का स्पर्श, कलह, इष्टमरण, साधर्मिक संन्यास पतन, प्रधान का मरण आदि ये भी भोजन त्याग के हेतु हैं। यदि राजा का भय या अन्य किंचित् भय हो जावे, यदि लोकनिंदा हो जावे तो भी आहार त्याग कर देना चाहिए। संयम के लिए और निर्वेद भाव के लिए भी आहार का त्याग होता है।

वह पुण्य मुझे नहीं चाहिए जिस पुण्य से हो...!?

-आचार्य कनकनन्दी

(चाल : आत्मशक्ति....., छू लेने दो....., इस देश में गाँधी.....)

वह पुण्य मुझे नहीं चाहिए, जिस पुण्य से मिले सत्ता-संपत्ति।
किन्तु भाव में हो विकृति, पाकर भी प्रसिद्धि-बुद्धि।।

वह पुण्य मुझे भी चाहिए, जिससे हो भाव विशुद्धि,
समता, शांति (से) हो संवृद्धि, जिससे मिले परम सिद्धि।

पुनाति आत्मानं पुण्यमिती, कहते हैं तीर्थंकर देव,
जिससे आत्मा न होता पावन, वह है पापानुबंधी पुण्य।। (1)

महान् उद्देश्य व पावन भाव से, ख्याति पूजा लाभ रहित से,
स्व-पर व विश्व हित हेतु से/(में) जो होते हैं भाव-व्यवहार है।

दान दया परोपकार सेवा, पूजा प्रार्थना व तीर्थ वंदना,
ध्यान-अध्ययन व जप-तप, त्याग आदि शुभ पुण्य।। (2)

इससे भिन्न (जो) भाव-व्यवहार से, जो करते (हैं) दान धर्म आदि,
उससे होता पापानुबंधी पुण्य, उससे होते भाव विकृत आदि।

जिससे होते राग द्वेष मोह, ईर्ष्या तृष्णा व घृणा विद्रोह,
ख्याति पूजा लाभ वर्चस्व दंभ, अन्याय अत्याचार शोषण युद्ध।। (3)

फैशन-व्यसन व भोगोपभोग, वैर-विरोध व आतंकवाद,
परनिन्दा अपमान व भेदभाव, अहंकार ममकार क्षुद्र भाव।

यथा रावण कंस जरासंध, साम्राज्यवादी रोमन (शासक) नीरो,
चंगेज खाँ हिटलर तानाशाह, अनेक कुख्यात क्रूर शासक।। (4)

ऐसा ही अनेक प्रसिद्ध-अप्रसिद्ध, होते पापानुबंधी पुण्यवंत,
भले वे करते शासन या धर्म, नहीं करते हैं यथार्थ से धर्म/(पुण्य)।

विश्व के अधिकांश पापकर्म, पापानुबंधी पुण्यवंत से सम्पन्न,
ऐसे लोग ही पशु-पक्षी से ले, दुर्बल-गरीबों का करते दमन।। (5)

पशु-पक्षी में वे न मानते आत्मा, दुर्बल-गरीब-नारी को तथा,
(इन्हें) दास/गुलाम बनाते (क्रय) व्यापार करते, अधिकार छिनते व हत्या करते।

दास-दासों को वे लड़ाते थे, दास व शेरों को लड़ाते थे,
पशु-पशु को वे लड़ाते थे, वर्चस्व व शौक हेतु करते थे।। (6)

क्रूर-शिकारी पशु से भी नीच थे, असभ्य-जंगली से भी निर्दयी थे,
दया-दान सेवा से रहित थे, तो भी स्वयं को सर्वोच्च मानते थे।

रोमन साम्राज्य में ये अधिक हुए, रोमनवासी स्वयं को श्रेष्ठ मानते हुए,
ईसा से थोड़ा परिवर्तन हुआ, विदेशों में आत्मा का ज्ञान न था।। (7)

भारत पूर्व से ही विश्वगुरु रहा, आत्मा-परमात्मा का ज्ञान रहा,
(तो भी) जो हुए पापानुबंधी पुण्यवंत, उन्होंने भी किये उक्त कुकृत्य।

इससे होता है घोर पापकर्म, संसार चक्र में होता परिभ्रमण,
अतएव ऐसा पुण्य नहीं चाहिए, 'कनक' को आत्मिक सुख चाहिए।। (8)

सीपुर, दिनांक 12.02.2017, रात्रि 8.48 व 9.58

(यह कविता विदेशी हिस्टोरी टी.वी. चैनल बावेरियन रायजिंग ग्लेडियटर से भी प्रेरित है।)

संदर्भ-

विशेषार्थ-चतुर्थ गुणस्थान से आगे उत्तरोत्तर पापकर्म का संवर और निर्जरा की वृद्धि हो जाती है और पुण्य कर्म का आस्रव और बंध उत्तरोत्तर वृद्धि को प्राप्त होता है। इस प्रकार क्रिया सकषाय गुणस्थान तक (10वें गुणस्थान तक) चलती रहती है। क्षीण कषाय आदि गुणस्थान में पुण्यास्रव होता है फिर भी बंध नहीं होता है

परन्तु पुण्य कर्म तेरहवें गुणस्थान तक नष्ट नहीं होता है किन्तु बढ़ता ही रहता है। परन्तु परम योगी शैलेश अवस्था को प्राप्त अयोगी केवली गुणस्थान के चरम समय और द्विचरम समय में संपूर्ण पुण्य और पाप कर्मों का समूल विनाश हो जाता है। पापा प्रकृति की यथायोग्य द्वितीयादि गुणस्थान में संवर एवं निर्जरा होती है। परन्तु विशिष्ट पुण्य कर्मों का संवर निर्जरा 14वें गुणस्थान के नीचे होती नहीं है। परन्तु उत्तरोत्तर गुणस्थान में अनुभाग शक्ति बढ़ती जाती है। परन्तु परिनिर्वाण के पूर्ववर्ती समय में संपूर्ण कर्म नष्ट हो जाते हैं।

किन के पुण्य हेय है?

पुण्णेण होइ विहवो विहवेण होइ मइ-मोहो।
मइ मोहेण य पाव ता पुण्णं अम्ह मा होउ।। (60)

अर्थ-पुण्य से घर में धन होता है और धन से अभिमान, मान से बुद्धि भ्रम होता है। बुद्धि भ्रम होने से (अविवेक से) पाप होता है इसलिए ऐसा पुण्य हमारा न हो।

टीका-पुण्णेण इत्यादि। पुण्णे होइ विहवो पुण्णेण विभवो विभूतिर्भवति, विहवेण मओ विभवेण मदोऽहंकारो गर्वो भवति मएण मइमोहो विज्ञानाद्यष्टमदेन मतिमोहो मतिभ्रंशो विवेक मूढ़त्वं भवति। मइमोहेण य पावं मति मूढ़त्वेन पापं भवति ता पुण्यं अहंमा तस्मूदित्थेभूतं पुण्यं अस्माकमाभूदिति। तथा च इद पूर्वोक्तं भेदाभेद रत्नत्रयाराधनारहितेन दृष्ट, श्रुतानृभृत भोगाकांक्षारूप निदानबन्ध परिणामसहितेन जीवेन यदुपार्जित पूर्व भवे तदेव मदमहंकार जनयति बुद्धिविनाशंच करोति। न च पुनः सम्यक्त्वादि गुणसहित भरत-सगर राम पांडव आदिपुण्य बन्धनवत्। यदि पुनः सर्वेषां मदंजनयति तर्हि ते कथं पुण्य भाजना सन्तो मदाहंकारादिविकल्पं त्यक्त्वा मोक्ष गताः इति भावार्थ। तथा चोक्तं चिरन्तनानां निरहंकारत्वम्।

सत्यं वाचि मतौ श्रुतं हृदि दया शौर्य भुजे विक्रमे।
लक्ष्मीर्दानमनूनमर्थिनिचये मार्गे गतिनिवृत्तैः।।
प्राग्जनीहं तेऽपि निरहंकाराः श्रुतेर्गोचराश्चित्रं संप्रति।
लेशतोऽपि न गुणास्तेषां तथाप्युद्धताः।। (60)

भेदाभेद रत्नत्रय की आराधना से रहित देखे, सुने, अनुभवे भोगों की वांछारूप निदान बंध के परिणामों से सहित जो मिथ्यादृष्टि संसारी अज्ञानी जीव है, उसने पहले

उपार्जन किये भोगों की वांछारूप पुण्य, उसके फल से प्राप्त हुई सम्पदा घर में होने से अभिमान (घमण्ड) होता है, अभिमान से बुद्धि भ्रष्ट होती है, बुद्धि भ्रष्ट कर पाप कमाता है और पाप से भव-भव में अनन्त दुःख पाता है। इसलिए मिथ्यादृष्टियों का पुण्य पाप का ही कारण है। जो सम्यक्त्वादि गुण सहित भरत, राम, पाण्डव आदि विवेकी जीव हैं उनको पुण्य बंध अभिमान उत्पन्न नहीं करता परन्तु परम्परा से मोक्ष का कारण बनता है। जैसे-अज्ञानियों को पुण्य के फल-भूत विभूति गर्व के कारण हैं, वैसे सम्यक्दृष्टियों के नहीं हैं। वे सम्यग्दृष्टि के पुण्य के प्राप्त हुए चक्रवर्ती आदि की (विभूति पाकर मद/अहंकार आदि विकल्पों को छोड़कर मोक्ष को गये अर्थात् सम्यग्दृष्टि जीव चक्रवर्ती, बलभद्र पद में भी निरहंकारी रहे। ऐसा ही कथन आत्मानुशासन ग्रंथ में श्री गुणभद्राचार्य ने किया है - पहले समय में ऐसे सत्पुरुष हो गये हैं कि जिनके वचन में सत्य, बुद्धि में शास्त्र, मन में दया, पराक्रमरूप भुजाओं में शूरवीरता, याचकों में पूर्ण लक्ष्मी का दान और मोक्षमार्ग में गमन है; वे निरभिमानी हुए जिनको किसी गुण का अहंकार नहीं हुआ। उनके नाम शास्त्रों में प्रसिद्ध हैं परन्तु अब बड़ा अचम्भा हैं कि इस पंचम काल में लेशमात्र भी गुण नहीं हैं तो भी उदंडपना है, यानी गुण तो रंचमात्र भी नहीं और अभिमान में बुद्धि रहती है। (परमात्म प्रकाश)

पाप भी उपादेय है

अथ येन पापफलेन जीवो दुःखं प्राप्य दुःखविनाशार्थं धर्माभिमुखो भवति तत्पापमपि समीचीनमिति दर्शयतिः।

वर जिय पावइँ सुन्दरइँ णावई ताई भणंति।
जीवहँ दुक्खइँ जाणिवि लहु सिवमई जाई कुणति।। (56)
वरं जीव पापानि सुन्दराणि ज्ञानिनः तानि भणन्ति।
जीवानांदुःखानि जनित्वा लघुशिवमर्ति यानि कुर्वन्ति।। (56)

टीका–वर जिय इत्यादि। वर जिय वरं किन्तु हे जीव पावइ सुंदरइं पापानी सुन्दरानि समीचीनानि भणंति कथयन्ति। के। णाणिय ज्ञानिनः तत्ववेदिनः। कानि। ताइं तानिपूर्वोक्तानि पापानि। कथंभूतानि। जीवहं दुक्खइं जणिवि लहु सिवमइं जाइ कुणंती जीवानां दुःखानि जनित्वा लघु शीघ्रं शिवमति मुक्तियोग्यमर्ति यानि कुर्वन्ति। अयमत्राभिप्रायः यत्र भेदाभेदरत्नयात्माकं श्री धर्मं लभते जीवस्तत्पापजनित दुःखमपि श्रेष्ठमिति कस्मादिति चेत। ''आर्ता नरा धर्म परा भवन्ति'' इति वचनात्।

अर्थ-आगे जिस पाप के फल से यह जीव नरकादि में दुःख पाकर उस दुःख को दूर करने के लिए धर्म सन्मुख होता है, वह पाप का फल भी श्रेष्ठ (प्रशंसा योग्य) है ऐसा दिखलाते हैं।

हे जीव! जो पाप के उदय से जीव को दुःख देकर शीघ्र ही मोक्ष के जाने योग्य उपायों में बुद्धि कर ले तो वे पाप भी बहुत अच्छे हैं, ऐसा ज्ञानी कहते हैं।

कोई जीव किसी पाप को करके नरक में गया वहाँ पर महान् दुःख भोगने से सम्यक्त्व की प्राप्ति हो जाती है क्योकि उस जगह सम्यक्तव की प्राप्ति के तीन कारण हैं। पहला तो यह है कि तीसरे नरक तक देवता उसे संबोधने (चेतावने को) जाते हैं। कभी किसी जीव को धर्म सुनने से सम्यक्त्व उत्पन्न हो जावे दूसरा कारण-पूर्व भव का स्मरण और तीसरा नरक के पीड़ाकारी दुःख से दुःखी होना, नरक को महान् दुःख का स्थान जानकर नरक के कारण जो हिंसा, झूठ, चोरी, कुशील, परिग्रह और आरम्भिादि हैं उनको खराब जान के पाप से उदास होना।

तीसरे नरक तक ये तीन कारण हैं। आगे के चौथे, पाँचवें, छठे, सातवें नरक में देवों का गमन न होने से धर्मश्रवण तो है ही नहीं लेकिन जातिस्मरण तथा वेदना से दुःख होने से पाप से भयभीत होना ये दो ही कारण हैं। इन कारणो को पाकर किसी जीव के सम्यक्त्व उत्पन्न हो सकता है। इसमें से कोई भव्य जीव पाप के उदय से खोटी गति में गया, वहाँ जाकर यदि सुलट जावे तथा सम्यक्त्व पावे तो वह कुगति भी बहुत श्रेष्ठ है। यही योगीन्द्राचार्य ने मूल में कहा है कि जो पाप जीवों को दुःख प्राप्त करा करके फिर शीघ्र ही मोक्षमार्ग में बुद्धि को लगावे, तो वे अशुभ भी अच्छे हैं तथा जो अज्ञानी जीव किसी समय अज्ञान तप से देव भी हुआ और देव से मरकर एकेन्द्रिय हुआ तो वह देवपना किस काम का? अज्ञानी का देवपना भी वृथा है। जो कभी ज्ञान के प्रसाद से उत्कृष्ट देव होकर बहुत काल तक सुख भोगकर देव से मनुष्य होकर मुनिव्रत धारण करके मोक्ष को पावे तो वह भी अच्छा है।

ज्ञानी पुरुष उन पापियों को भी श्रेष्ठ कहते हैं, जो पाप के प्रभाव से दुःख भोगकर उस दुःख से डरकर दुःख के मूल कारण पाप को जानकर उस पाप से उदास होवे, वे प्रशंसा करने योग्य है, अन्य पापी जीव प्रशंसा के योग्य नहीं है क्योंकि पाप क्रिया हमेशा निन्दनीय है। भेदाभेद रत्नत्रय स्वरूप श्री वीतराग देव के धर्म को जो धारण करते हैं, वे श्रेष्ठ हैं। यदि सुखी धारण करे तो भी ठीक और दुःखी धारण करते

हैं तब भी ठीक। क्योंकि शास्त्र का वचन है कि कोई महाभाग दुःखी होते हुए भी धर्म में लवलीन होते हैं। (परमात्म प्रकाश)

दुःख में सुमिरन सब करे, सुख में करे न कोय,
जो सुख में सुमिरन करे, दुःख काहे को होय।।

अर्थ–साधारण संसारी जीव दुःख के समय में धर्म का आचरण करता है। परन्तु धर्म के कारण किंचित् सुख प्राप्त होने से धर्म को ही भूल जाता है। पापादिक क्रियाओं में लग जाता है, तब पुनः दुःख प्राप्त होता है। यदि जीव सुख के समय में भी धर्म आचरण करने लगेगा तो कभी भी दुःख नहीं होगा।

कृत्वा धर्मविघातं विषयसुखान्यनुभवन्ति ये मोहात्।
आच्छिद्य तरुन् मूलात् फलानि गृणन्ति ते पापाः।। (24)

अर्थ–जो मोही कामअंधा, विषयासक्त, जीव अज्ञानता से धर्म को नष्ट करके विषय सुखों का अनुभव करते हैं वे पापी वृक्ष को जड़ से उखाड़कर फल को ग्रहण करना चाहते हैं। अर्थात् पूर्व पुण्य कर्म के उदय से जो कुछ वैभव मिला है उस वैभव में लीन होकर जो केवल भोगासक्त होता है वह पूर्व उपार्जित पुण्य को पूर्णरूप से भोग करता है। परन्तु नवीन पुण्यार्जन नहीं करता जिससे पाप ही पाप उसके पल्ले में रहता है। उससे वह नरक निगोद में जाता है। इसलिये पूर्वार्जित पुण्य से वैभव मिला उसको बिना त्यागे भोग करने से उस पुण्य से उसकी दुर्गति हुई इस प्रकार से पुण्य हेय हैं। (आत्मानुशासन)

मिथ्यादृष्टि को पापानुबंधी पुण्य से जो वैभव की प्राप्ति होती है उस वैभव में मिथ्यादृष्टि लीन होकर आसक्तिपूर्वक भोग करता है किन्तु त्याग नहीं करता उसका वैभव अर्थात् पुण्य फल संसार का कारण है। इसलिये उसका पुण्य कर्म परंपरा से मोक्ष का कारण नहीं है। किन्तु संसार का कारण होता है अर्थात् पुण्य फल रूप वैभव को प्राप्त कर जो आसक्तिपूर्वक भोगता है वह मिथ्यादृष्टि है। रागी बहिरात्मा है। सम्यग्दृष्टि का पुण्य ही पुण्यानुबंधी पुण्य है, सम्यग्दृष्टि पुण्य रूप वैभव को प्राप्त कर उसमें आसक्तिपूर्वक लीन नहीं होता है। वह सोचता है, जानता है, मानता है कि वैभव मेरे आत्म स्वरूप से पृथक् है पुण्य कर्म का फल है कुछ चारित्र कर्म के उदय से आत्मिक शक्ति अभाव से रोगी जैसे तिक्त औषध सेवन करता है। अनासक्तपूर्वक उसी प्रकार वह सम्यग्दृष्टि भोग को रोग मानकर निरुपाय होकर अनासक्तपूर्वक

भोगता है। वह अनासक्तपूर्वक भोगते हुए कर्म को बाँधता ही है परन्तु जितने अंश में अनासक्त भाव है उतने अंश में कर्मबंध नहीं होता है। परन्तु अंतरंग में सतत भोगों की निंदा गर्हा करते हुए उन भोगों से छूटने के लिए रास्ता ढूँढ़ता रहता है।

जब तक जीव संपूर्ण भोग, आरंभ, परिग्रहों से विरक्त नहीं हो पाता है तब तक स्वशक्ति के अनुसार दान, पूजा, गुरु सेवादि करते हुए पूर्व पुण्य का सदुपयोग करता है और अंत में समस्त अंतरंग-बहिरंग परिग्रह को त्याग कर निर्ग्रंथ होकर व्यवहार-निश्चय रत्नत्रय का साधन कर मोक्ष पदवी को प्राप्त करता है। इसलिये सम्यग्दृष्टि का पुण्य परंपरा से मोक्ष का कारण है तथा मिथ्यादृष्टि का पुण्य परंपरा से संसार का कारण है।

''**आर्त नरा धर्मपरा भविन्त**'' पाप कर्म के उदय से जीव को जब कष्ट उठाना पड़ता है उस समय में वह पाप कर्मों का स्वरूप समझकर पाप से निवृत्त होकर धर्म में लगता है। जैसे नरक में तीव्र वेदना का अनुभव कर नारकी पाप फलों का चिंतवन करके सम्यग्दृष्टि हो जाता है, इसी प्रकार जीव पापकर्म के फल से संतप्त होकर पाप से डरकर अधर्म छोड़कर धर्म करने लगता है। इसलिये संसार में विरक्त होने के लिए एवं धर्म में प्रवृत्ति होने के लिए पापकर्म भी निमित्त है अर्थात् जिस पाप फल से दुःखों से, संताप से, संकटों से जीव भयभीत होकर धर्म में लगते हैं वह पाप भी उपादेय है। इसलिये भव्य जीवों को संबोधन करते हुए आचार्यों ने प्रेरणा दी है।

''सुखितस्य दुःखितस्य च संसारे धर्म एव तव कार्य।
सुखितस्यतद्भिवृद्धयैदुःखभुजस्तदुपघाताय।। (18)''

अर्थ-हे जीव! तू चाहे सुख का अनुभव कर रहा हो चाहे दुःख का अनुभव कर रहा है किन्तु संसार में इन दोनों ही अवस्था में एक मात्र कार्य धर्म ही होना चाहिए, कारण यह है कि वह धर्म-यदि तू सुख का अनुभव कर रहा है तो तेरे उस सुख की वृद्धि का कारण होगा और यदि तू दुःख का अनुभव कर रहा होगा तो वह धर्म तेरे उस दुःख के विनाश का कारण होगा।

आरती सोलहकरण भावना की

(चाल : बाजे छम-छम.....)

सोलहकारण भावना तेरी आरती करूँ...तीर्थंकर कारणभूत भावना धरूँ...

श्रद्धा प्रज्ञा चर्या से युक्त धरूँ/(करूँ)...मन-वचन-काय से तेरी साधना करूँ।। (1)
दर्शनविशुद्धि विनय सम्पन्नता (मैं) धरूँ, शील-व्रतों के अतिसार रहित पालूँ।
अभक्ष्ण ज्ञानोपयोगी संवेगी बनूँ, शक्ति अनुसार तप-त्याग मैं करूँ।। (2)
साधु समाधि-वैयावृत्य मैं करूँ, अरिहंत आचार्य बहुश्रुत भक्ति (मैं) करूँ।
प्रवचन भक्ति व आवश्यक क्रिया (मैं) पालूँ, प्रभावना व प्रवचन वात्सल्य मैं करूँ।। (3)
स्व-पर-विश्वकल्याण भावना भाऊँ, ज्ञान-दर्शन-चारित्र (व) धारी (के) विनय करूँ।
आत्मिक विकास हेतु (मैं) साधना करूँ, आध्यात्मिक कर्त्तव्यों का मैं पालन करूँ।। (4)
पंचपरमेष्ठी की मैं वंदना करूँ, रत्नत्रय धर्म की आराधना मैं करूँ।
सोलहकारण भावना की (मैं) साधना करूँ, तीर्थंकर कारणभूत 'कनक' आरती करूँ।। (5)

सीपुर, दिनांक 21.01.2017, मध्याह्न 1.27

राष्ट्र हित हेतु आह्वान व सुझाव

सड़क दुर्घटनाओं से हो रही मृत्यु से भारत व जैन समाज क्या शिक्षा लेंगे!?

-आचार्य कनकनन्दी

(भारत में हर वर्ष प्रायः डेढ़ लाख मृत्यु सड़क दुर्घटना से होती है। आचार्य चैत्यसागर संघस्थ 3 साध्वियों की व 2 व्यक्तियों की सड़क दुर्घटना से मृत्यु।)

अहिंसा प्रधान विश्वगुरु भारत में जो सड़क दुर्घटना में सामान्य लोगों से लेकर साधु-साध्वियों की मृत्यु हो रही हैं उससे भारतीयों की तथा जैन समाज की अहिंसा-संवेदना-सेवा-व्यवस्था-परदुःख कातरता समयानुबद्धता-कर्त्तव्यनिष्ठा-अनुशासन-शीलता-प्रगतिशीलता-सम्पन्नता-वैज्ञानिक उन्नति-शिक्षा-राजनीति-कानून-व्यवस्था-प्रशासनिक सतर्कता-सामाजिकता आदि की वास्तविकता प्रगट हो रही है।

सड़क दुर्घटना से जो जन-धन हानि हो रही है उससे बचने के लिए या न्यूनतम करने के लिए उपरोक्त गुणों को विकसित करके प्रयोग में लाने के साथ-साथ निम्नोक्त काम करना चाहिए-

1. प्रमुख सड़क के दोनों पार्श्व में पैदल चलने की सुव्यवस्था सरकारों को करना चाहिए। इससे पैदल चलने वाले साधु-साध्वी के साथ-साथ अन्य जनों को भी पैदल चलने की सुविधा होगी जिससे अनेक दुर्घटना-धन-जन हानि कम होने के साथ-साथ पर्यावरण प्रदूषण भी कम होगा तथा स्वास्थ्य संपादन होगा।

2. दुर्घटना होने पर पुलिस, प्रशासन, यात्री आदि स्थानीय लोगों को सेवा-व्यवस्थादि करनी चाहिए न कि संवेदनहीन अंध कानून से और भी समस्याएँ उत्पन्न करना चाहिए।

3. वृद्ध, रोगी, दुर्बल जैन साधु-साध्वी जो पैदल विहार करने में असमर्थ है उनके लिए देश के विभिन्न स्थानों में संत-निवास की व्यवस्था करके जैन समाज को उनकी संपूर्ण व्यवस्था करनी चाहिए, जिससे उन्हें लंबी-लंबी यात्राएँ व्हीलचेयर (ठेला) आदि से नहीं करना पड़े।

4. जैन साधु-साध्वी जब विहार करते हैं तब भी मार्ग में साधु-साध्वी की व्यवस्था-सुरक्षा हेतु भक्तों को, पर्याप्त जैन धर्मावलंबियों को स्व-भावना-भक्ति-समर्पण भाव से जाना चाहिए।

5. सुनिश्चित स्थान-स्थान पर जहाँ विहार में आवश्यकता है (विश्राम व आहारचर्या के लिए) धर्मशालाओं की व्यवस्था करनी चाहिए।

-आचार्य कनकनन्दी
सीपुर, उदयपुर (राज.)

महान् संतों की महानता से मैं सीखूँ

(आचार्य विमलसागर-कुन्थुसागर-भरतसागर-अभिनन्दनसागर आदि की महानता-जिज्ञासुवृत्ति)

-आचार्य कनकनन्दी

(चाल : मन रे! तू काहे....., सायोनारा.....)

आत्मन्! (कनक) महान् संत से शिक्षा गहोऽऽ
उनकी महानता सरल-सहजताऽऽ जिज्ञासावृत्ति को गहोऽऽ
वन्दे तद्गुणलब्धये गहोऽऽ।। आत्मन्...
आचार्य विमलसागर गुरुवरऽऽ गुरु कुन्थुसागर भरतसागरऽऽ
आचार्य अभिनंदन गुरुवरऽऽ तेरे सभी है श्रेष्ठ गुरुवरऽऽ

उनसे शिक्षा को गहोऽऽ।। आत्मन्...
तुझसे वे श्रेष्ठ होने पर भीऽऽ तुझे बोलते थे स्वाध्याय हेतुऽऽ
तेरी स्वाध्याय सभा में बैठकरऽऽ पाते थे वे आनंद अपारऽऽ
देते थे आशीष व समादरऽऽ।। आत्मन्...
गुरु विमलसागर कुन्थुसागरऽऽ आचार्य भरतसागर गुरुवरऽऽ
कहते थे कनक (तू) साहित्य रचनाकरऽऽ एकांत रूढ़ीवाद को निरसनकरऽऽ
उनकी आज्ञा से हो रहा निरंतरऽऽ 'कनक' तू रहा सदा अकिंचित्करऽऽ।। आत्मन्...
स्व-नंदी संघ के सभी शिष्य वर्गऽऽ पद्मनंदी देवनंदी कुमुदनंदीऽऽ
कुशाग्रनंदी विद्यानंदी केशवनंदीऽऽ कल्पश्रुतनंदी व गुणनंदीऽऽ
गुप्तिनंदी गुणधरनंदीऽऽ।। आत्मन्...
निश्चयसागर चैत्यसागरऽऽ संघस्थ सभी आर्यिका गणऽऽ
विरागसागर व आज्ञासागरऽऽ चन्द्रसागर मनोज्ञसागरऽऽ
साध्वी ज्ञानमती विशुद्धमती संघऽऽ स्वाध्याय से हुए लाभान्वितऽऽ
(और भी) अनेक शिष्य होते लाभान्वितऽऽ।। आत्मन्...
अन्य हेतु तू अकिंचित्कर कर्त्ताऽऽ गुरुप्रदत्त ज्ञान स्वाध्याय कर्त्ताऽऽ
महान् गुरुओं की यह महानताऽऽ जिज्ञासु शिष्य की (स्व) स्वाध्याय निष्ठाऽऽ
दोनों से शिक्षा लेना तेरी श्रेष्ठताऽऽ।। आत्मन्...
गणधर भी सीखते सर्वज्ञ देव सेऽऽ मुनि बनते तीर्थंकर सिद्ध नमन सेऽऽ
सर्वज्ञ अतिरिक्त सभी छद्मस्थ/(अल्पज्ञ) होतेऽऽ सर्वज्ञ हेतु ज्ञानार्जन करतेऽऽ
आदर्श अनुकरण 'कनक' करतेऽऽ।।
सीपुर, दिनांक 23.03.2017, मध्याह्न 1.27

3'P' के फॉर्मूले

(स्वयं (Personal) के सकारात्मक (Positive) पुरुषार्थ वर्तमान (Present) में)

-आचार्य कनकनन्दी

(चाल : आत्मशक्ति.....)

स्वयं के लिए सकारात्मक भाव-व्यवहार करूँ मैं वर्तमान में।

इससे ही होगा मेरा भावी विकास भूत का समाधान भी इसमें।।
भूत से लेकर शिक्षा अभी मैं वर्तमान में करूँ सत पुरुषार्थ।
जिससे मेरा भावी निर्माण/(निर्वाण) होगा, भावी जन्म लेता वर्तमान से।।
भूत तो अभी विद्यमान नहीं, न भूत को मैं प्राप्त कर सकता हूँ।
इसलिए भूत की चिन्ता छोड़कर, भूत से शिक्षा लेता हूँ।।
भावी अभी नहीं है विद्यमान, भावी तो अवश्य ही आयेगा।
मेरे वर्तमान से मेरा भविष्य, (बनकर) मेरे लिए अवश्य प्रकट होगा।।
इसलिए मैं स्व-वर्तमान को, सत् पुरुषार्थ से बना रहा हूँ।
नकारात्मक भाव-व्यवहार त्यागकर, सकारात्मक बन रहा हूँ।।
मैं हूँ जीवद्रव्य अनंत गुणमय, अनादि अनंत शाश्वत हूँ।
स्वयंभू स्वयंपूर्ण अनंतज्ञान दर्शन सुखवीर्यमय तत्त्व हूँ।।
मेरे ही अज्ञान मोह राग द्वेषमय नकारात्मक भाव-व्यवहार से।
मैं ही मेरे विकास का अवरोध बना था, अनादि अनंत काल से।।
वर्तमान में स्व-आत्मविश्वास ज्ञान चारित्रमय पुरुषार्थ से।
पूर्व के नकारात्मक भाव-व्यवहार त्यागकर रहा हूँ तीव्रता से।।
दीन-हीन व अहंकार छोड़कर 'स्वाभिमान' से 'सोऽहं' 'अहं' को पाने हेतु।
ईर्ष्या तृष्णा व घृणा छोड़कर विकास करूँ स्व की प्राप्ति हेतु।।
स्व-आत्मविकास को सतत बढ़ रहा हूँ, निर्द्वंद्व निष्कलंक भाव से।
दबाव-प्रलोभन व शंका छोड़कर, समता-शांति शुचिता से।।
आत्मविशुद्धि व आत्मानुभव से, आत्मविकास मैं कर रहा हूँ।
संकल्प-विकल्प-संक्लेश त्यागकर, आत्मानंद को मैं पा रहा हूँ।।
निस्पृह निराडम्बर संतोष तृप्ति को, उत्तरोत्तर मैं पा रहा हूँ।
ख्याति पूजा लाभ प्रसिद्धि रहित, निराकुल सुख को मैं पा रहा हूँ।।
मेरे अनंत आत्मिक वैभव प्राप्त करने हेतु मैं बढ़ रहा हूँ।
इसका मूल्यांकन/(अनुभव) मैं स्वयं से, स्वयं के द्वारा कर रहा हूँ।।
सांसारिक/(भौतिक) सफलता से परे, मेरी सफलता है आध्यात्मिक।
जिसकी पूर्ण उपलब्धि हेतु 'कनक' करे, सतत पुरुषार्थ सकारात्मक।।
(यह कविता 'लक्ष्य' (ब्रायनट्रेसी) से भी प्रेरित व मुनि आध्यात्मनंदी के लिए बनी।)